शतावतार

रामकथाओं में वर्णित सामाजिक सम्बंध

मुक्कामला नागभूषणम्



पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस

जनवरी १९९२

मूल रूप से तेलुगु में प्रकाशित
"शतावतारालु" का हिन्दी अनुवाद

अनुवादक . बलं जनार्दनस्वामी

मूल्य : १८ रुपये

ISBN—81—7007—150—X

पी. पी. सी. जोशी द्वारा न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, रानी झांसी रोड, नयी दिल्ली से मुद्रित और उन्हीं के द्वारा पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड नयी दिल्ली-५५ की तरफ से प्रकाशित।

प्रकाशकीय

यह पुस्तक मूल रूप से तेलुगू मे लिखित "शतावतारालु", का हिन्दी अनुवाद है। आंध्र प्रदेश के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी, समाजसेवी और पत्रकार मुक्कामला नागभूषणम् लिखित यह पुस्तक तेलुगू पाठकों के बीच अत्यंत लोकप्रिय हुई है और अभी भी इसकी मांग बनी हुई है। पुस्तक मुख्यतः पौराणिक और मिथकीय सामग्री का भौतिकशास्त्रीय व ऐतिहासिक दृष्टि से अनुसंधान करने का प्रयास है।

बौद्धिक शब्दावली व सैद्धान्तिक परिचर्चाओं में उलझे बिना लेखक ने सीधे-सरल लहजे में पाठकों को हमारे अन्तर्विरोधपूर्ण, साथ ही अभिव्यक्तिशील प्रागितिहास पर दृष्टिपात करने को उत्प्रेरित किया है। शायद पुराणपंथी और रूढ़िवादी लोगों को पुस्तक की सामग्री भली न लगे, उन्हें इसमें इतिहास पर कीचड़ उछालने जैसा कुछ नजर आये, पर वैज्ञानिक चिन्तन को प्रेरित करने वाली यह सामग्री आम सुधी पाठकों को अवश्य पसन्द आयेगी; कारण यह कि इसमे मूलतः रामायण, महाभारत, पुराणो, वेदों और संहिताओं में वर्णित कथाओं और घटनाक्रमो को सामाजिक अर्थवत्ता प्रदान का प्रयास निहित है। पुस्तक कुल मिला कर एक सारगर्भित नृजातिवैज्ञानिक व समाजशास्त्रीय अध्ययन है।

हिन्दी मे इस प्रकार की पुस्तकों का अभाव रहा है जिसकी पूर्ति में, आशा है कि, यह पुस्तक सहायक होगी और हिन्दी के पाठक भी इसका उसी तरह स्वागत करेंगे जैसा तेलुगू पाठकों ने किया था।

लेखक के बारे में

लेखक श्री मुक्कामला नागभूषणम् स्वतंत्रता संग्राम के योद्धा हैं।

जब वे आंध्र राज्य के किसान संघ के अध्यक्ष थे, तब उन्होंने जमींदारी-उन्मूलन कानून को कार्यान्वित करने का प्रयास किया था।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान उन्होंने देशभक्ति के अनेक गीत लिखे और प्रजा नाट्यमंडली (इप्टा) की स्थापना की।

"सनक फण", "सिन के बाल", "शतावतार", "पालकी बैठी अनीति", "प्राचीन भारत में वैज्ञानिक प्रगति", 'स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास" आदि इनकी तेलुगु में लिखी प्रसिद्ध कृतियां हैं।

सिंधु सभ्यता' और 'मूर्ति आराधना' इनकी दो पुस्तकें तेलुगु में शीघ्र प्रकाशित हो रही हैं।

आकाशवाणी, विजयवाडा के अनुरोध पर उनके द्वारा लिखित संगीत रूपकों में से "लय" को अन्तर्राष्ट्रीय प्रशस्ति-पत्र प्राप्त हुआ एवं "संपन्न गोदावरी" (सिरूला गोदारी) को राष्ट्रीय प्रशस्ति पत्र।

वे दस वर्ष "प्रगति" साप्ताहिक के और छ वर्ष "आंध्रवाणी" साप्ताहिक के सम्पादक रहे। वे दिल्ली से निकलने वाली "पेट्रियट" और "लिंक" साप्ताहिक में भी कुछ समय के लिए निर्देशक पद पर थे।

आंध्र क्रिकेट एसोसिएशन के अध्यक्ष के रूप में इन्होंने उस खेल के विकास के लिए निरन्तर प्रयास किया। संप्रति वे कृष्णा जिले के लेखक संघ के अध्यक्ष हैं।

प्रादेशिक विकास संघ के अध्यक्ष पद पर कार्य करते हुए, उन्होंने विद्यालय स्थापित किये और हरिजनों को आवास-सुविधाएं प्रदान की तथा पिछड़े क्षेत्रों में कृषि के विकास के लिए "लिफ्ट इरिगेशन" योजनाओं पर अमल करवाया।

अनुक्रम

शत-अवतार

आस्तिकों में किन्हीं से पूछा जाय तो वे यही कहेंगे कि भगवान एक है. कोई यह नहीं कहेगा कि भगवान अनेक हैं.

हमारे धर्मगुरुओं का कहना था कि भगवान नाम-रूप रहित हैं; वाणी और मन से परे हैं तथा आदि-मध्य-अंत रहित हैं उनका यह दावा था कि दूसरे धर्मों की अपेक्षा हमारा धर्म श्रेष्ठ है और उनके भगवान की अपेक्षा हमारा भगवान महान है

ईसाई कहते हैं कि हिन्दू लोग कई देवी-देवताओं की पूजा करते हैं, लेकिन हम एक ही भगवान को पूजते हैं उसी तरह मुसलमान भी यही कहते हैं, किन्तु हिन्दुओं का कहना है कि वह बात सच नहीं है.

हिन्दू लोग कहते हैं—हम जिस भगवान की पूजा कर रहे हैं, वह एक ही है वह सर्वान्तर्यामी है, यह सारा विश्व भगवान का स्वरूप है, उसका कोई एक नाम नहीं है, कोई एक रूप नहीं है चाहे किसी भी नाम से प्रार्थना करें, चाहे किसी भी रूप में पूजा करें, है वह एक ही हमारे धर्म में तरह-तरह के रूपों में, तरह-तरह के नामों से भगवान की पूजा करने वाले हैं. यह एक विशाल दृष्टिकोण द्वारा सधा हुआ समन्वय है अन्य धर्मों में यह विशाल दृष्टिकोण-समन्वय नहीं है.

नास्तिक भगवान के अस्तित्व को नहीं मानते आज ही नहीं, बल्कि ऋग्वेद काल से ही आस्तिक-नास्तिकवाद दोनों विद्यमान रहे हैं.

आस्तिकों और नास्तिकों के बीच विगत में कई वाद-विवाद और कई संघर्ष हुए. आस्तिकों ने जहा नास्तिकों को पाखण्डी, मूर्ख और नीति-नियम रहित कहकर उनकी निंदा की, वहा नास्तिकों ने आस्तिकों को दुर्बल, आलसी, परान्नभागी और धोखेबाज कहकर उनकी अवहेलना की

वैदिक धर्मावलंबियों ने जब यह प्रचार किया कि अधर्म को बढ़ाकर, पापियों से नरक को भरकर और स्वर्ग में दबाव कम करने के लिए गौतम बुद्ध ने अवतार लिया, तो बौद्धों ने यह कह कर उनकी आलोचना की कि वैदिक तो आखिर बंदर, सूअर, चूहा और कुत्ते तक की भी पूजा करते हैं.

एक ने दूसरे की भर्त्सना की कि तुम गो-मांस खाते हो, तो दूसरे ने पहले को फटकारा कि तुम सूअर का मांस खाते हो. एक ने हां कहा तो दूसरे ने कहा नहीं.

ऐसे वाद-विवाद और संघर्ष भौतिकवादी लोकायतों (चार्वाकों) और आध्यात्मवादी वैदिक धर्मावलंबियों के बीच हुए. उसके बाद बौद्ध और

बौद्ध धर्मो के अनुयायियों के बीच ये संघर्ष हुए. आज भी भौतिकवादियों और आध्यात्मवादियों के बीच वाद-प्रतिवाद चल ही रहे हैं.

विविध धर्मों के बीच संघर्ष केवल भारत में ही नहीं, बल्कि विश्वभर में हुए.

एक दूसरे को कोसने, एक दूसरे की निंदाओं का प्रचार करने तक ही यह नहीं रुकी हिन्दू लोग बौद्धों के ऊपर टूट पड़े. शैवों ने जैनों को मारा. ईसाई और इस्लाम धर्मावलंबियों के बीच सालों तक युद्ध चले.

एक ही धर्म की विविध शाखाओं के बीच भी संघर्ष उत्पन्न हुए. शैव-वैष्णवों, रोमन कैथलिकों व प्रोटेस्टेंटों, शियाओं और सुन्नियों, हीनयान बौद्धों और महायान बौद्धों के बीच में कई विभेद और झगड़े पैदा हुए

आज भी संसार में वर्ण-भेद और धार्मिक दुरहकार प्रबल रूप में विद्यमान हैं. एक ओर विज्ञान एवं तकनीकी शास्त्रों की वृद्धि हो रही है तो दूसरी ओर दकियानूसी तत्व बढ रहे हैं

भारतीय उपमहाद्वीप के विच्छिन्न होने का कारण क्या धार्मिक उन्माद नहीं है? क्या इस विभाजन के कारण लाखों निरीह हिन्दुओं-मुसलमानों को कई मुसीबतें नहीं झेलनी पड़ी? क्या आज भी दक्षिण-अफ्रीका जैसे स्थानों में रंग-भेद का दुरहकार शासन नहीं कर रहा ?

यदि ऐसा दुरहकार प्रबल होता रहे तो आम जनता ही कष्टों का शिकार बनती है इनको उकसाने वाले बड़े लोगों को कोई तकलीफ नहीं होती इसीलिए विभिन्न तरीकों से वे जनता को उभाड़ते रहते हैं और आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं से देश की प्रजा का ध्यान हटाने के लिए कई तरह की चालें चलते रहते हैं ये लोग विविध धर्मों के बीच भेदों को उकसाने के साथ-साथ विविध वर्णों, जातियों एवं प्रांतों के बीच भी विभेदों को बढ़ाते हैं और दंगों को प्रोत्साहित करते हैं यदि कोई श्रीराम को 'भगवान का अवतार' मानकर उसका गुणगान करते हैं तो कोई रावण को 'महान' कहकर उसकी प्रशंसा करते हैं रामलीलाओं की प्रतिस्पर्धा के रूप में रावण की लीलाओं का प्रदर्शन करते हैं कभी के काल-गर्भ में विलीन आर्य-द्रविड़ जैसे भेदों को पुनर्जीवित करके उनका प्रचार करते हैं इस तरह की चालबाजियों के द्वारा वे समाज में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं

इनके हाथों में प्रचार-प्रसार के साधन हैं, सैकड़ों ग्रन्थ रच कर जनता के बीच में प्रस्तुत कर सकने वाले पंडित हैं. उनको पर्याप्त मात्रा में पुरस्कृत करने के लिए काफी धन-बल भी है हजारों सालों से वटवृक्षों की तरह बढ़े हुए पुराण हैं. जनता के दिलों में जड़ें जमा कर सुस्थिर बने हुए कर्म-सिद्धान्त और पुनर्जन्म सिद्धान्त जैसे तत्व हैं.

हमारे समाज के प्रमुख व्यक्ति एक ओर विज्ञान और तकनीकी शास्त्रों की उन्नति का अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए उपयोग करते हुए आधुनिक सुविधाओं का उपभोग करते रहते हैं तो दूसरी ओर तांत्रिकों और उनके मंत्रों की प्रशंसा करते हुए उनका प्रचार करते हैं.

उनको यह विश्लेषण करना पसंद नहीं कि अमुक कथा कल्पित है या वास्तविक. जैसे ही ऐसा विश्लेषण प्रारम्भ होता है, वैसे ही चतुर्दिक उसके विरोध में लोग उठ खड़े होते हैं वे आवाजें कसते हैं कि हमारे पुराणों एवं धर्मग्रन्थों की निंदा की जा रही है, जनता को भटकाने का प्रयत्न किया जा रहा है.

अतः मानव प्रगति की कामना करने वालों को ऐसे दूषण-भूषण एवं तिरस्कारपूर्ण मार्ग को नहीं अपनाना चाहिए यदि रामायण और महाभारत कथाओं का अनुशीलन करना है तो ऐतिहासिक दृष्टि से तुलनात्मक अनुशीलन करना होगा. इसलिए यथासम्भव ऐतिहासिक तथ्यों को पाठकों के सामने रखना ही मेरे इस प्रयास का मुख्य उद्देश्य है. यदि इस प्रयास में कोई त्रुटियां रह गयी हों, तो क्षमा करके उनकी सूचना मुझे देने की कृपा करें.

रामायण और महाभारत

रामायण एव **महाभारत** दोनों ही ग्रथों के लिए इतिहास, सहिता और आख्यान नाम प्रचलित हैं "जय" नाम **रामायण** के लिए नहीं है. लेकिन **भविष्यत् पुराण** में लिखा गया है कि अष्टादश पुराणों के साथ **रामायण** एव **महाभारत** भी "जय" नाम से जानी जाती हैं.

इन इतिहासों में कौन-सा पहला है और कौन-सा बाद का है ? ये कब लिखे गये ? इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण है या नहीं ? इन समस्याओं पर कई लोग भिन्न-भिन्न मत प्रकट करते रहे हैं

जाकोबी के मतानुसार **रामायण** का प्रणयन **महाभारत** से पहले हुआ. इसी विचार को प्रकट करने वाले श्री मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री लिखित, **सस्कृत वाङ्मय का इतिहास—लौकिक वाङ्मय** नामक ग्रथ में उल्लिखित प्रमाणों पर आइए एक दृष्टि डालते चलें.

"**रामायण** आदि-काव्य है आर्य तथा वेद-सम्मत है एक नायक वाली **रामायण** 'परिक्रिया' नामक इतिहास है बहु-नायकवाला **महाभारत** 'पुरा-कल्प' नामक इतिहास है"

"**रामायण** की कथा त्रेता युग की है **महाभारत** की कथा द्वापर युगात की है उसके नायक श्रीराम हैं, तो इसके कथा-सचालक श्रीकृष्ण हैं

"सप्तमहर्षियों में अत्रि, भारद्वाज, वशिष्ठ और विश्वामित्र का सबध **रामायण** की कथा से है. **महाभारत** की मुख्य कथा से उन महर्षियों का कोई सबध नहीं है."

"एक-नायकवाले काव्य का जन्म पहले होना और बहु-नायकवाले काव्य का जन्म बाद में होना स्वाभाविक है"

"सीता में लोक व्यावहारिक ज्ञान नहीं था पर द्रौपदी में वह पर्याप्त था"

"भरत और लक्ष्मण ने श्रीराम के आदेश का उल्लघन नहीं किया, किन्तु भीम और अर्जुन ने कभी-कभी धर्मराज की निंदा की"

"युद्ध के नियम और व्यूह रामायणकाल में उतने नहीं थे जितने कुरुक्षेत्र युद्ध के काल में थे"

"रामायण काल में दक्षिण भारत घने जगलों से भरा था महाभारत-काल में कुछ हद तक विकसित सभ्यतावाले जनपदों का निर्माण हुआ"

उक्त तर्कों का विरोध करते हुए **रामायण** से पहले ही **महाभारत** के अस्तित्व को माननेवाले विद्वान निम्नलिखित प्रमाण प्रस्तुत करते हैं.

"जब आर्य पजाब प्रांत में रहते थे, तभी कुरुक्षेत्र युद्ध हुआ था.

उसके उपरांत ही आर्य लोग अयोध्या और मिथिला नगरों तक फैल सके. अत यह कह सकते हैं कि रामायण की कथा से पहले ही महाभारत की कथा अस्तित्व में आयी."

"हस्तिनापुर की खुदाइयों से पुराने खण्डहर और कुछ दूसरे प्रमाण मिले हैं, किन्तु अयोध्या से अब तक ऐसे प्रमाण नहीं मिले ."

"महाभारत पचम वेद है, जबकि रामायण वेद-सम्मत मात्र है."

"महाभारत की अपेक्षा रामायण में काव्य भाषा के लक्षण अधिक मात्रा में दिखाई देते हैं."

"मातृसत्तात्मक अवस्था के लक्षण महाभारत में हैं यही द्रौपदी के पांच पति होने का कारण है. लेकिन रामायण समाज के पितृसत्तात्मक अवस्था में प्रविष्ट होने के उपरांत की है."

रामायण की रचना के पहले महाभारत की रचना होने का दावा करने-वालों में वाशबर्न हॉपिकन्स प्रमुख हैं.

श्री एस. ए डागे का मत है कि, "वाल्मीकि रामायण बहुत बाद की रचना लगती है यह काव्य महाभारत के परवर्ती सामंती युग का प्रतिनिधित्व करता है."

डा रोमिला थापर का कहना है—"रामायण की रचना महाभारत के पश्चात हुई. कृषि-दशा के प्रारम्भ काल में ही रामायण का प्रणयन हुआ होता तो वह महाभारत के पूर्व की ही होती "

अनेक शोधकर्ताओं ने यह निष्कर्ष निकाला है कि रामायण तथा महाभारत में से यद्‌यपि रामायण की रचना ही पहले हुई, तथापि महाभारत पहले ग्रंथस्थ हुआ और उसके कुछ समय बाद जाकर रामायण ग्रंथस्थ हुई.

जाकोबी के इस कथन का कई विद्‌वान समर्थन कर रहे हैं कि जिस दशा में वैदिक भाषा काव्य भाषा के रूप में परिणत हो रही थी, उस दशा में महाभारत का प्रणयन हुआ किंतु जब काव्य भाषा का एक परिष्कृत रूप बना तभी रामायण की रचना की गयी.

परंतु जो यह मानते हैं कि महाभारत के पूर्व ही रामायण की रचना हुई वे और कुछ प्रमाण दिखाते हैं. उनका विचार है कि रामायण में जिन रथ, गज, तुरंग, पदातियों की लड़ाइयों का विवरण नहीं है, उनका उल्लेख महाभारत में है इतना ही नहीं यह भी दृष्टिगत होता है कि लोहे से बनी तलवार और भाले जैसे हथियारों का उपयोग कुरुक्षेत्र के युद्‌ध में अत्यधिक हुआ, जबकि बाण और हल की नोंक मात्र के लिए लोहे का उपयोग किये जाने वाले चरण में रामायण की रचना होने का पता लगता है. अत: यह कहा जा सकता है कि लोहे के तरह-तरह के हथियारों और उपकरणों को तैयार करने की विकसित दशा में महाभारत का प्रणयन हुआ

कन्द, मूल, फल तथा आखेट से मिले मांस पर जीवन-यापन कठिन होने पर मानव ने जिस चरण में पशुपालन प्रारंभ किया और खेतीबाड़ी शुरू की,

रामायण उसी चरण में लिखी गयी रचना है जबकि **महाभारत** खेतीबाड़ी के पर्याप्त विकसित होने के बाद की दशा में लिखा गया ग्रंथ है.

रामायण तब की रचना है, जब क्षत्रियों पर ब्राह्मणों का वर्चस्व था. परन्तु जब विश्वामित्र इस महत्ता के विरुद्ध उठ खड़े हुए और ब्रह्म ऋषि बनकर, श्रीराम को अस्त्र-शस्त्र विद्याएं सिखाकर उन्होंने परशुराम का गर्व भंग कराया तब ब्राह्मणों का महत्व थोड़ा कम हुआ. इसी कारण रामायण में ब्राह्मणों का जितना महत्व दृष्टिगत होता है, उतना **महाभारत** में नहीं.

रामायणकाल में ब्राह्मण व पुरोहित ही मंत्री थे किन्तु महाभारतकाल में राज-काज संभालनेवाले मंत्री सूत थे.

रामायणकाल की अपेक्षा महाभारतकाल में आर्यों के राज्य बहुसंख्यक थे. एक राज्य द्वारा दूसरे पर आक्रमण करने की स्थिति रामायणकाल में नहीं थी. यह स्थिति महाभारतकाल में आरंभ हुई.

रामायणकाल में जिन आर्यों ने बलूचिस्तान, सिंध और गुजरात प्रांतों के राक्षस, दानव आदि कबीलों से युद्ध किये, उन्होंने भारत की पूर्व तथा दक्षिण दिशाओं के नागों से लड़ाई नहीं की. इसकी जरूरत तब पड़ी जब आर्यों ने पूरब और दक्षिण की दिशाओं में अपना कदम बढ़ाया. इस दशा में आविर्भूत रचना ही **महाभारत** है.

"रामकथा तथा वाल्मीकि का उल्लेख करके **रामायण** के कुछ श्लोक **महाभारत** में जोड़े गये, किन्तु महाभारत के श्लोक **रामायण** में निक्षिप्त नहीं हुए."

इस प्रकार अपनी सूझबूझ के अनुसार विभिन्न विद्वान अनेक प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं. कोई **रामायण** की कथा को पूर्व चरण का बताते हैं तो दूसरे **महाभारत** की कथा को, कुछ का कहना है कि दोनों कल्पित कथाएं हैं. परन्तु ऐसे भी कुछ विद्वान हैं जो कहते हैं कि **रामायण** कल्पित हो सकती है, पर **महाभारत** कल्पित नहीं है.

डाक्टर मजूमदार का मत है—"अयोध्या, विदेह, सीता जैसे शब्द वैदिक हैं. 'सीता' के अर्थ भूमि और हल भी हैं. 'विदेह' अर्थात निर्गुण अथवा रूपरहित. अतः जब आर्य हल का आविष्कार करने के बाद कृषि दशा में प्रवेश करके दक्षिण की ओर बढ़ रहे थे, उसी समय वेदों के शब्दों का आधार लेकर **रामायण** की कथा रची गयी."

डा. पुसाल्कर का कहना है कि—"जनक एक कबीले के मुखिया थे और चंद्रवंशी क्षत्रिय थे. कृषि दशा में पहुंचे हुए सूर्यवंश के क्षत्रियों ने मिथिला नगर के आसपास के क्षेत्र में कृषि करने की रीति पहुंचायी. शिकार खेलकर आहार का संचय करने के बदले खेतीबाड़ी के लिए आवश्यक हल बनाना और खेत जोतना उन्होंने ही जनक को सिखाया. इससे शिकार खेलने के लिए उपयोगी धनुष जैसे वन्य जनों के हथियार का महत्व समाप्त हुआ. इसलिए **रामायण** में यह वर्णन किया गया कि श्रीराम ने शिव-धनुष तोड़ा. खेती के लिए उपयोगी हल

जनक को मिला. इसीलिए कहा गया कि जनक को सीता मिल गयी. सीता (हल) के द्वारा सूर्यवंशी तथा चंद्रवंशी क्षत्रियों के बीच रिश्तेदारी बढ़ी."

"इस प्रकार जब कृषि का विस्तार हो रहा था और किसी न किसी रूप में एक-के-बाद-एक कई कबीले सूर्यवंशी क्षत्रियों के अधीन होते जा रहे थे, तब रामायण का आरंभ हुआ. इसलिए यह कह सकते हैं कि उसमें थोड़े-बहुत ऐतिहासिक तथ्य तथा बहुत-सी कल्पित गाथाएं हैं."

कुछ विद्वानों का यह मत है कि विंध्य के उत्तर में जो युद्ध हुए, उन्हें विंध्य के दक्षिण में घटित समझकर रामायण में उनका चित्रण करने से ही राम-रावण युद्ध, लंका-दहन जैसी असंबद्ध कथाओं को उसमें स्थान मिला है.

सुप्रसिद्ध इतिहासकार जाकोबी मानते हैं कि रामायण में उल्लिखित लंका, श्रीलंका नहीं है, यह कदाचित विंध्य के उत्तर में स्थित कोई छोटा नगर है.

तो फिर वह छोटा नगर कहां था ?

सुप्रसिद्ध पुरातत्वविद डा. संकालिया का कहना है कि लंका नगरी जबलपुर के समीप अथवा अमरकंटक के आसपास कहीं थी.

डा. पुसाल्कर का भी यह मत है कि सम्पूर्ण रामायण गाथा उत्तर भारत में घटित घटनाओं से ही संबंधित है.

रामायण में यह कहानी भी है कि किसी समय कार्तवीर्यार्जुन ने अपनी पत्नी तथा परिवार के साथ रेवा नदी के किनारे जाकर पड़ाव डाला और वहां बांध बनवाया इसलिए नदी जल का स्तर बढ़ गया, जिसके फलस्वरूप रावण के लंका नगर में पानी भर गया. इससे क्रुद्ध होकर रावण ने कार्तवीर्यार्जुन पर हमला किया युद्ध में कार्तवीर्यार्जुन ने रावण को हरा दिया. इसके बाद कार्तवीर्यार्जुन रावण को बंदी बनाकर, माहिष्मती नगर ले जाकर और उसकी खूब मरम्मत करके छोड़ दिया.

डा. संकालिया का कथन है कि—" 'सेतु' शब्द का अर्थ है बड़ा तालाब अथवा सरोवर. लेकिन इसके लिए 'पुल' अर्थ भी प्रचलित है. अतएव 'सेतुबंधन' शब्द लेकर धनुष्कोटि से श्रीलंका तक पुल बनाने की कल्पना करके रावण वध, लंका-दहन जैसी कथाओं की परिकल्पना की गयी."

अपने एक शोध लेख में डा संकालिया ने घोषित किया "रामायण में लिखा गया कि बड़ी-बड़ी चट्टानों से, पहाड़ी पत्थरों से और साल वृक्षों से सेतु बांधा गया. उस प्रकार की चट्टानें, पहाड़ और साल वृक्ष छोटा नागपुर के इलाके में हैं, न कि रामेश्वरम के पास."

"दक्षिण भारत के विविध पहाड़ी प्रांतों, तथा वहां के लोगों के रीति-रिवाजों से वाल्मीकि परिचित नहीं थे राम के द्वारा वध किये गये बालि की अंत्येष्टि का वर्णन वाल्मीकि ने आर्यों की परंपरागत पद्धति के अनु-सार ही किया. इससे पता चलता है कि बालि-सुग्रीव का सम्पूर्ण प्रसंग

उत्तर भारत में ही घटित हुआ वह दक्षिण भारत में घटित नहीं हो सकता."

प्रख्यात इतिहासकार श्री एस. बी. राय मानते हैं कि सिंधु सभ्यता के केन्द्र, मोहनजोदड़ों को जीतने के लिए आर्यों ने जो युद्ध किया उसके इर्द-गिर्द राम कथा का जाल बुना गया

ये गाथाएं किस काल की हैं ?

क्या इन गाथाओं के पीछे कोई ऐतिहासिक तथ्य है ? जिस प्रकार इसका निश्चित उत्तर नहीं मिलता उसी प्रकार यह भी निश्चित रूप से विदित नहीं कि ये गाथाएं कब की हैं ?

ग्रंथों मे लिखा गया है कि राम-रावण युद्ध त्रेतायुग में हुआ और द्वापर युग में महाभारत युद्ध, किन्तु इसका कोई विश्वास-योग्य प्रमाण नहीं मिलता.

राम-रावण युद्ध त्रेतायुग के मध्य भाग में हुआ कि अंतिम भाग में ? अगर यह मान भी लें कि वह त्रेतायुग के अंत में हुआ तो फिर यह कैसे पता चलेगा कि उस युद्ध के बाद से आज तक कितने हजार साल बीते ?

द्वापर युग का मान ८,६४,००० वर्ष है अब तक कलियुग में ५०८२ वर्ष व्यतीत हुए. तब क्या हम यह मान सकते हैं कि आठ लाख सत्तर हजार वर्ष पूर्व राम-रावण युद्ध हुआ ?

तब उस युग का मानव किस दशा में था ? आर्य कहां थे ? क्या वे अयोध्या मे थे ? इसका विचार करने पर आसानी से पता लग जाता है कि रामायण की कथा त्रेतायुग की नहीं थी.

अब महाभारत के कथा-काल को लें कुछ विद्वान कहते हैं कि यह कथा ३१०० ई.पू. की है, कुछ उसे १४०० ई.पू. की कहते हैं तो कई विशेषज्ञ उसको ९०० ई.पू. की मानते हैं.

"राजतरंगिणी" में लिखा है कि कलियुग का प्रारंभ होने पर ६५३ साल बीतने के बाद कुरु-पांडवों का जन्म हुआ इसके आधार पर देखा जाय तो मालूम होता है कि २४४७ ई.पू. के आसपास कुरु-पांडव पैदा हुए होंगे

भारत के पुरातत्व विभाग के वरिष्ठ अधिकारी श्री जगपति जोशी लिखित एक निबंध में यह स्पष्ट किया गया है कि इस तथ्य के प्रबल प्रमाण प्राप्त हुए कि ३००० ई.पू. से पूर्व कुरु-पांचाल (हरियाणा और उत्तर प्रदेश के कुछ हिस्से) की भूमि घने जंगलों से भरी थी, १४०० ई.पू. तक उस इलाके में नगरीय सभ्यता नहीं थी और ९०० ई.पू. तक पशुचारी घुमक्कड़ कबीलों ने कुछ हद तक खेतीबाड़ी का आरम्भ किया.

उपर्युक्त मतों में कोई सत्य हो या न हो, कुरुक्षेत्र संग्राम के द्वापर-युगांत में होने की बात बतानेवाली पौराणिक कथाएं विश्वास करने योग्य प्रतीत नहीं होतीं ?

फिर क्या हम यह समझ लें कि कुरुक्षेत्र-संग्राम ९०० ई.पू. में हुआ?

डा० सरकार का कहना है कि चूंकि कुरुक्षेत्र-युद्ध की तिथियों के संबंध में विभिन्न मत प्रचलित हैं और इनके अनुसार कही गयी तिथियों में लगभग दो हजार साल का अंतर दृष्टिगत होता है, इसलिए कहा जा सकता है कि कुरुक्षेत्र युद्ध की कहानी दंतकथा मात्र है

डा. संकालिया का कथन है कि ९०० ई.पू. में कुरुक्षेत्र युद्ध के होने की संभावना का अवसर ही दिखाई नहीं देता.

परन्तु डा. शिराशी का दावा है कि महाभारत युद्ध की वास्तविकता तथा प्राचीनता से संबंधित आधार हमें वैदिक वाङ्मय में उपलब्ध होते हैं.

प्रोफेसर बी. बी. लाल का कहना है कि महाभारत युद्ध के ९०० ई.पू. के आसपास होने के प्रमाण प्राप्त हो चुके हैं.

श्री जगतपति जोशी के अनुसार अब तक पांचाल प्रदेश से जो कुछ ताम्रपत्र और हस्तिनापुर प्रदेश से जो भूरे रंग के मिट्टी के बर्तन मिले हैं, उनके आधार पर यह साबित करना असंभव प्रतीत होता है कि १४०० ई.पू. तक वहां शहरी सभ्यता थी, या ९०० ई.पू. में कुरुक्षेत्र युद्ध हुआ.

उत्तर प्रदेश पुरातत्व विभाग, जीवाजी विश्वविद्यालय तथा भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने मिलकर इसका अनुसंधान करने के लिए कि **रामायण** और **महाभारत** की कथाओं का कोई ऐतिहासिक आधार है या नहीं, एक बृहत् कार्यक्रम हाथ में लिया है.

महाभारत की कथा से संबंधित हस्तिनापुर, मथुरा, कुरुक्षेत्र आदि स्थानों में उत्खनन हुए. **रामायण** की कथा से संबंधित अयोध्या, जैसे स्थानों में भी खुदाइयां शुरू की गयीं. फिर भी **रामायण** और **महाभारत** की कथाओं की पुष्टि करने वाले प्रमाण नहीं मिले.

शत अवतार

इसके अतिरिक्त रामायण तथा महाभारत ने भी कई रूप धारण किये उनमें अनेक प्रक्षिप्त अंश विद्यमान हैं. पाषाण युग के समय के कुछ प्रमुख प्रसंगों से लेकर आठवीं सदी तक के मुख्य अंश उनमें पाये जाते हैं. दोनों में असंभव कल्पनाएं हैं, उनको अक्षरश: सत्य माननेवाले श्रद्धालु भी हैं.

ब्रह्मांड एवं पाराशर उपपुराणों का आधार दिखाकर यह तर्क करने वाले महाशय भी मिलते हैं कि शतकोटि श्लोकयुक्त रामायण देव, गंधर्व आदि लोकों में क्रमश. पचास करोड, दस करोड और अंत में एक करोड श्लोकों का ग्रंथ बन गया फिर सिर्फ २४ हजार श्लोक वाला ग्रंथ मानव लोक में प्रचलित हुआ.

जो लोग इस कथा पर विश्वास कर लेते हैं कि हनुमान धनुष्कोटि से उडकर लंका में कूदे थे और उस समय में उनके शरीर से पसीने की एक बूंद समुद्र में गिरी, जिसे निगलने के कारण एक मछली के पेट से मत्स्य वल्लभ का जन्म हुआ, उनके किसी भी असंभावित विषय पर विश्वास करने में संदेह ही क्या हो सकता है ?

गायत्री रामायण में लिखा गया है कि रामायण चौबीस हजार श्लोक तक सीमित है, गायत्री मंत्र के चौबीस वर्ण क्रमश रामायण के एक-एक श्लोक के प्रारम्भ में उपलब्ध हैं रामायण के शतकोटि श्लोक युक्त होने का उल्लेख उसमें नहीं है

श्री जाकोबी, श्री वैद्य जैसे विद्वानों ने श्लोकों का उद्धरण देकर सिद्ध किया है कि रामायण के चौबीस हजार श्लोकों में से केवल छ: हजार ही वाल्मीकि-रचित हैं, बाकी अठारह हजार श्लोक दूसरों द्वारा लिखित प्रक्षिप्त अंश हैं

इसके अलावा संस्कृत रामायणों में कई पाठ-भेद भी पाये जाते हैं. अन्य पाठ-भेदों को छोड दीजिए, तो भी बंबई, कश्मीर तथा बंगाल की प्रतियों के पाठों में कई भेद दृष्टिगत होते हैं.

श्री जाकोबी ने सिद्ध किया है कि लगभग आठ हजार ऐसे श्लोक हैं जो एक पाठ में हैं, दूसरे पाठ में नहीं हैं एक में जो सर्ग हैं, वे दूसरे में नहीं हैं

वाल्मीकि रामायण के अतिरिक्त भवभूति रचित उत्तर रामचरित, भास्कर रामायण, अगस्त्य, रंगनाथ, वशिष्ठ, वरदराज, मोल्ल, दुर्वासा, कंब, कृत्ति-

वास एव तुलसी द्वारा रचित अनेक रामायणें हैं. कालिदास-रचित **रघुवंश** काव्य भी हैं. इन सब के बीच में अगणित भेद हैं.

महेश्वर तीर्थ, गोविंदराज, रामानुज, वनमुब्रह्म विद्याध्वरि, अहोबल-सूरि, विश्वनाथ दीक्षित, रंगाचार्य वेंकटसूरि इत्यादि महान पंडितों की लिखी व्याख्याएं भी हैं.

आध्यात्म रामायण की शैली में कीर्तन, रामहृदय, रामगीत जैसी पद-रचनाएं हैं. विदेशियों के अनुवाद एव ग्रथ हैं. भाति-भाति की राम कथाएं हैं **महाभारत** तथा अन्य पुराणों में भी रामकथा का प्रवेश हुआ हैं.

रामायण एक काव्य हैं, अत. उसकी कथा-वस्तु की वास्तविकता अथवा अवास्तविकता की चिंता किये बिना प्रत्येक कवि ने अपने मन-पसद ढंग से उसकी रचना की. इसी वजह से एक रचना दूसरी रचना से भिन्न बन पड़ी

आज भी औचित्य के नाम पर कई प्रकार के **रामायण** ग्रथ तथा उनसे संबंधित कथाएं निकल रही हैं इतना ही नहीं, **वाल्मीकि रामायण** ने अनेक रूप धारण किये. बाल्य, कौमार्य एव यौवन अवस्थाओं को पार करने तक ही एक महान वट-वृक्ष की तरह उसका विशाल काम बना. वह इतना विस्तृत हुआ कि यह पहचानना सभव नही कि उसका तना कौन-सा हैं और जटाएं कौन-सी हैं ? जैन कथाओं, बौद्ध गाथाओं एव पुराणों तक में इस कथा का प्रवेश हुआ. विदेशों में भी इसका प्रसार हुआ

कहा जाता हैं नारायण ने अब तक नौ अवतार धारण किये और आगे कभी वह दसवा अवतार धारण करने वाले हैं परन्तु **रामायण** ने अब तक शत अवतार ग्रहण किये हैं.

रामायण ही नहीं, **महाभारत** पर भी यह लागू होता हैं एक इलाके की **महाभारत** से दूसरे इलाके की **महाभारत** मेल नहीं खाती **जैमिनी** भारत एव **पपकवि** भारत व्यासकृत **महाभारत** से मेल नहीं खाती.

जिस तरह **वाल्मीकि रामायण** में उत्तर रामायण जोडी गयी, उसी तरह **महाभारत** में भी शातिपर्व सहित सात पर्व जोड़े गये. **रामायण** के बाल-काड की तरह **महाभारत** के अरण्य पर्व को विस्तृत किया गया

महाभारत में भगवद्गीता प्रक्षिप्त हुई तो **रामायण** में राम गीता. कृष्ण-भक्तों ने **हरिवंश** की रचना की तो रामभक्तों ने **अध्यात्म रामायण** की जिस तरह वाल्मीकि के नाम पर प्रचलित **रामायण** में तीन-चौथाई हिस्सा दूसरों ने लिखकर मूल पाठ में जोड दिया, उसी तरह वेदव्यास के नाम पर प्रचलित **महाभारत** में छहत्तर हजार श्लोक अन्य लोगों ने लिखकर मूल पाठ में मिला दिये. चाहे कैसे भी हो, **रामायण** चौबीस हजार श्लोकों की बन गयी, तो **महाभारत** एक लाख श्लोकों की बन गयी

रामायण की भांति **महाभारत** भी कुछ समय तक ग्रथस्थ नहीं हुई. जिस प्रकार कुशलवों ने **रामायण** का गान किया, उसी प्रकार सूतों ने **महाभारत** की कथा सुनायी उसके उपरात कुछ समय के बाद महाभारत ग्रथस्थ हुआ और उसके पश्चात् **रामायण** भी ग्रंथस्थ हुई

पुस्तकाकार में परिणत होने पर भी **महाभारत** और **रामायण** में अनेक परिवर्तन प्रस्तुत हुए. कारण क्या है ? कारण यह है कि ये दोनों केवल कथाएं हैं, पुराण मात्र हैं, न कि इतिहास ग्रंथ इसीलिए अपने मनमाने ढंग से भिन्न-भिन्न रूपों में कवियों ने इनमें परिवर्तन किया. इन सारे परिवर्तनों एव प्रक्षिप्तांशों को उन्होंने वाल्मीकि महर्षि तथा वेदव्यास के सिर पर मढ दिया

महाभारत के प्रणेता कौन हैं ?

व्यास कहें ? पर व्यास तो एक उपाधिमात्र हैं ? वेद-विभाजन कर्ता व्यास को इसका प्रणेता कहें? तो ऐसे वेदव्यास अट्ठाईस थे. पाराशर पुत्र वेद-व्यास को इसके रचयिता कहें ? तो पराशर तीन-चार थे.

कई विद्वान विश्वास करते हैं कि गगानदी-द्वीप में या पराशर तथा मत्स्यगन्धा से उत्पन्न कृष्णद्वैपायन नामक वेद व्यास ही **महाभारत** ग्रथ के प्रणेता हैं.

किन्तु यह कैसे कहा जा सकता है कि छब्बीसवें द्वापर युग के पराशर से अट्ठाईसवें द्वापर युग का कृष्ण द्वैपायन पैदा हुआ ? हा, फिर क्या हम यह कहें कि पराशर तथा द्वैपायन ब्रह्म ऋषि थे, इसलिए वे चिर-काल तक जीवित रह सके, मगर द्वैपायन की जन्मदात्री माता सत्यवती के बारे में क्या कहें ? वह भी तीन द्वापर युगों का समय बीतने तक नव यौवना के रूप में जीवित रही ?

ऐसा नहीं तो जैसे श्री सी वी वैद्य जैसे विद्वान ने कल्पना की, वैसे ही **तैत्तरीयारण्यक** के उल्लेख के अनुसार पराशर, व्यास एव वैशपायन को **महाभारत** के प्रणेता तथा प्रवक्ता मान सकते हैं

श्री मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री ने कहा है—"**तैत्तरीयारण्यक** में पराशर व्यास का उल्लेख ही मिलता हैं कृष्णद्वैपायन शब्द उसके दृष्टिगत नहीं होता इतना ही नहीं, यह सिद्ध करना भी सरल नहीं कि **महाभारत तैत्तरीयारण्यक** का समकालीन है"

अतएव यह स्पष्ट विदित होता है कि **महाभारत** ग्रथ के प्रणेता के संबध में समुचित निर्णय करना असभव कार्य है

वाल्मीकि महर्षि किस काल के थे?

वाल्मीकि का मामला चाहे इतना जटिल न हो, तो भी यह संदेह उत्पन्न हुए बिना नहीं रहता कि **रामायण** काव्यकर्ता वाल्मीकि कौन थे ? और वे किस काल के थे ?

विष्णु पुराण में स्पष्ट लिखा है कि चौबीसवें वेद-व्यास वाल्मीकि नामक ऋक्ष थे और अट्ठाईसवें वेदव्यास कृष्ण द्वैपायन थे **कूर्म पुराण** में ऋक्ष, भार्गव नामों की जगह पर वाल्मीकि नाम दिखाई देता है **तैत्तरीय उपनि-**

वद्ध को देखें तो विदित होता है कि वरुणवंशी तथा भृगुवंशी वाल्मीकि एक ही थे. इतना ही नहीं, शब्दकोश भी यही बताते हैं कि "कुशीलव" का अर्थ वाल्मीकि है.

यदि वैवस्वत मन्वंतर के चौबीसवें द्वापर युग में वाल्मीकि पैदा होकर वेदव्यास के रूप में विख्यात होने के अतिरिक्त **रामायण** महाकाव्य की रचना भी कर चुके हों तो उस कार्य के पश्चात अब तक लगभग एक करोड़ पचहत्तर लाख वर्ष बीते होंगे. क्या यह तथ्य स्वीकार्य है ? इसके अलावा भी त्रिविक्रम, हेमचंद्र, सिंहराज, लक्ष्मीधर शास्त्री जैसे विद्वानों का कहना है कि उन्होंने एक प्राकृत व्याकरण ग्रन्थ भी लिखा

रामायण महाकाव्य को प्राचीनतम सिद्ध करने के लिए ही यह कथा कल्पित हुई कि वाल्मीकि महाकवि चौबीसवें द्वापर में अथवा उससे भी कुछ और पूर्वकाल में पैदा हुए यदि कुछ पंडितों ने लिखा कि वेद व्यास ने अट्ठाईसवें द्वापर युग में जन्म लेकर वेद-विभाजन करने के अतिरिक्त पंचम वेद नाम से विख्यात महाभारत संहिता की रचना भी की, तो कुछ दूसरे विद्वानों ने लिखा कि चौबीसवें द्वापर में ही जन्म लेकर वाल्मीकि महर्षि ने वेद-विभाजन करने के साथ **रामायण** महाकाव्य का प्रणयन भी किया

महाभारत को साठ लाख श्लोक युक्त कहा गया तो **रामायण** को शत-कोटि श्लोक संपन्न बताया गया.

रामायण और **महाभारत** में वैदिक काल की कथाओं को जोड़ने के साथ चौथी शताब्दी तक की अनेक कथाओं को भी मिलाकर उन्हें काफी विस्तृत किया गया और मनमाने ढंग से बदला गया फिर भी वहां तक यह काम नहीं रुका ग्यारहवीं सदी तक किसी न किसी ने कोई न कोई कहानी लिखकर इसमें जोड दी इसीलिए **रामायण** और **महाभारत** पर अनेक कटु आलोचनाएं निकलीं तेलुगु में तो यहां तक कहावत है—"रामायण रंकु, भारत बोंकु" (अर्थात **रामायण** व्यभिचार की कहानी है, तो **महाभारत** सफेद झूठ वाली कहानी है)

फिर एक और दृष्टिकोण के लोग भी हैं जो प्राचीन मानव समाज के इतिहास को छोड़कर **रामायण** तथा **महाभारत** की हर बात को देवी-देवताओं, शापों तथा वरदानों के साथ जोड़ते हैं. वे जोर देकर कहते हैं कि वर्तमान काल की अपेक्षा प्राचीन काल अत्यंत महान एवं श्रेष्ठ है. वे इस बात पर दुःखी होते रहते हैं कि दिन-ब-दिन पाप बढ़ता जा रहा है.

इसलिए यदि कोई यह जानना चाहे कि **रामायण** या **महाभारत** कब उत्पन्न हुए और कैसे बढ़े, उनमें वर्णित कहानियां सच्ची हैं कि झूठी, तो वेदों तथा पुराणों पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं होगा.

इसके लिए हमें यह देखना होगा कि पूर्व पाषाण युग से वर्तमान काल तक उत्पादन के साधनों का विकास किस प्रकार हुआ ? आहार संचयन की अवस्था से आहार उत्पादन की अवस्था तक मानव कब और कैसे पहुंचा ?

वन्य अवस्था के कबीलों के सामूहिक नियम एवं रीति-रिवाज कैसे थे और असभ्य अवस्था वाले कबीलों के सामाजिक नियम, रीति-रिवाज तथा पेश किस तरह के थे ? हमें यह समझना होगा कि सभ्य होने की दिशा में कदम बढ़ाकर प्रगति पथ पर आरुढ़ होने वाली जातियों की प्रथाएं, धार्मिक नियम इत्यादि कैसे परिवर्तित होते आये ? हमें इसका भी अनुशीलन करना होगा कि वन्य अवस्था से आज तक स्त्री-पुरुष संबधों में क्या परिवर्तन हुए ? और दर्शनशास्त्र में आदर्शवाद का विकास कैसे हुआ ? नहीं तो, सही निर्णय पर पहुचना संभव नहीं होगा

क्योंकि मोर्गन का कहना है—"ऐसा कहा जा सकता है कि जीवन की आधारभूत वस्तुओं का विस्तार और मानव जाति के विकास क्रम के प्रधान युग, ये दोनों लगभग मिलेजुले हैं"

इसलिए आइए हम पहले उन अवस्थाओं में विकसित आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, स्त्री-पुरुष सम्बधों, सभ्यता, तथा मानवतत्व-शास्त्र के सूत्रों आदि पर विचार करें.

मानव विकास का क्रम

विकासवाद के प्रणेताओं का कहना है कि लगभग २०० करोड़ वर्ष पूर्व समुद्र में जीव-जन्तुओं का आविर्भाव हुआ. समुद्री जीवों से थलचर प्राणी पैदा हुए इस प्रकार वानर जाति विकसित हुई और कुछ क्रमिक परिणामों के फलस्वरूप वानर से नर बनने का क्रम पूरा हुआ.

मोर्गन ने, जो अद्भुत मेधा शक्ति के धनी विद्वान थे, अथक परिश्रम करके मानवजाति का विकास लिखा उन्होंने विभिन्न महाद्वीपों में रहने वाले कबीलों के रहन-सहन, रीति-रिवाजों, परम्पराओं और विश्वासों का गहन अध्ययन करके "प्राचीन समाज" नामक ग्रंथ की रचना की, जिसमें उन्होंने यह सिद्ध किया कि पितृसत्तात्मक युग से पूर्व मातृ-सत्तात्मत्मक युग का अस्तित्व था

मानव विकास की प्रमुख अवस्थाएं

आदि मानव ने हजारों वर्षों तक सघन वृक्षों और गुफाओं को अपना आवास बनाया वह पेडों के पत्ते, फल और कंदमूल खाकर जीता था. क्रमश उसने अपने मनोभावों को प्रकट करना सीखा यही आदि मानव का शैशव था इसे मोर्गन ने वन्य युग की प्रथम अवस्था कहा है.

इस अवस्था में मानव के लिये न देवों का अस्तित्व था, न भूत-प्रेतों का, न वह कपड़े पहनता था, न उसके पास आवास था उसके पास पत्थर के उपकरण तक नहीं थे. आत्म-रक्षा तथा आहार-सचय के अलावा उसकी और कोई चिन्ता न थी फिर आदि मानव ने क्रमश अपनी आत्म-रक्षा और आहार-सम्पार्जन के लिए झुड बनाकर जीना आरम्भ किया

मानव की मेधाशक्ति का विकास होने लगा उसने देखा कि आधी में पेडों की डालियां जब एक दूसरे से रगड खाती हैं, तो आग पैदा हो जाती है, और जगल जल जाते हैं. आग की लपटों में फसकर जले हुए जानवरों तथा चिडियों के मास का स्वाद उसने चखकर देखा उसे वह पसद आया अतः उसने लकड़ी से लकडी रगडकर आग पैदा की और उसमें पक्षियों और मछलियों को जलाकर खाना शुरू किया, आटेवाले कंद-मूलों को भी अलाव में पकाकर खाने लगा. जानवरों का शिकार करने और उनको काटने के लिए उसने तेज धारवाले पत्थर तैयार किये. उसे एक जगह पर अपने लिए जरूरी खाद्य पदार्थ न मिल जाते, वह वहीं प्रवास कर जाता. इस प्रकार आदि मानव नदी-तटों तथा समुद्री तटों के रास्ते

चलकर सुदूर प्रांतों तक फैल गये. मोर्गन के अनुसार यह वन्य युग की द्वितीय अवस्था थी.

इस द्वितीय अवस्था में भी मानव समाज के पारिवारिक संबंध नहीं बने, भाई-बहन, मा-बेटा और पिता-बेटी का कोई ज्ञान उसे न था. सन् १८७५ में जान क्राफ ने लिखा कि "बेरिंग जलसंधि" के आस पास रहने वाले 'किवयटों' में, अलास्का के पास रहनेवाले "कोंदियकों" में किसी प्रकार के सगे संबंध का ज्ञान नहीं है. सन् १८८८ में लेतार्नो नामक आदिम जाति के इतिहासकार ने जाना कि चिपेवे के इंडियनों में, चिली की काकूस जाति में, कैरिबियनों में, करेन कबीलों में मां-बेटे, बाप-बेटी, और भाई-बहन का ज्ञान नहीं है किसी युग में सब जगह यही स्थिति थी. यही कारण है कि हमें महाभारत में भाई-बहन और ओल्ड टेस्टामेंट में पिता-बेटी में लैंगिक संबंध होने का उल्लेख करनेवाली कहानियां मिलती है.

उस स्थिति में बच्चे यह न जानते थे कि उनका पिता कौन है केवल मा को ही यह मालूम होता था एक मा के बच्चे, उसकी बेटी के बच्चे और पोती-नातिनों के बच्चे सब मिलकर एक साथ रहते थे इससे एक टोला बनता था.

इस अवस्था से मनुष्य कुछ और आगे बढा उसने जानवरों का आसानी से शिकार करने लायक तीर-कमान बनाये तेज धारवाले पत्थर के औजार और कुल्हाडिया भी तैयार की. उनकी मदद से काठ के औजार और बरतनों का निर्माण किया. पेडों की छालों से टोकरिया बनाना, नाव बनाना, बास की लकडियों से झोपडे बनाना सीखा पेडों की छालों से रेशे निकालकर उनसे कपडे बनाना सीखा इस प्रगति के कारण उनके लिए खाद्य सामग्री का सचयन सुलभ हुआ. इस अवस्था को मोर्गन ने वन्य युग की तृतीय अवस्था कहा है (इस अवस्था की जगली जातियों के लोग आज सारे ससार में पाये जाते है)

इस दशा में मानव को मालूम नही था कि तूफान किसलिए आते है, छूत की बीमारिया फैलने के कारण भी वे नही जानते थे वे समझते थे कि कोई दुष्ट शक्तिया उन्हे सता रही है उन्हे सतुष्ट करने के लिए उसने पेडों, बाबियों, और पत्थरों की पूजा आरम्भ की वह कल्पित देवी-देवताओं के उत्सव मनाकर बलिया देने लगा कालातर में लाल मारी मा, काली मारी मा, मुत्यालम्मा जैसी देवियों की सृष्टि करके, उनके सामने जानवरों के साथ मानवों की भी बलि देने की प्रथा चल पड़ी

उस समय मातृ-सत्ता की प्रधानता होने के कारण देविया ही आराध्य होती थी एक कबीले के सभी लोग एक ही देवी की पूजा करते थे. कबीले के हर एक गण के यहा उस देवी की एक मूर्ति होती थी. उसकी पूजा करने के लिए गण के सभी लोग मिलकर एक वृद्धा स्त्री की नियुक्ति करते थे उसको "गणाचारिणी" (गण की आचारिणी) कहकर पुकारते थे. कुछ लोग उसको "पूजारिणी", भी कहा करते थे यह गणाचारिणी देवी की

पूजा ही नहीं करती थी, बल्कि यह कहकर झूमा करती थी कि देवी माता का मुझ में प्रवेश (आगमन) हुआ है. वह गण के सदस्यों को न जाने क्या-क्या बातें बताती थी और यह विश्वास दिलाती थी कि उसकी जबान से देवी माता बोल रही है. गण के सदस्य यह विश्वास करते थे कि गणाचारिणी जो कुछ कह रही है, वह सब सही है.

इस तरह उन दिनों जो देवी-देवताओं की पूजाएं, पशु-बलियां, मानव-बलियां, उत्सव-पर्व आदि शुरू हुए, उनसे संबंधित कहानियां हमारे प्राचीन ग्रंथों में हमें उपलब्ध होती हैं. यजुर्वेद तथा तैत्तरीय ब्राह्मण में उल्लिखित है कि पुरुष मेधयज्ञ में १८४ प्रकार के स्त्री-पुरुषों की बलि देते हैं. ऐतरेय ब्राह्मण में यह कथा है कि हरिश्चंद्र के द्वारा किये गये यज्ञ में शुनस्सेध नामक बालक को बलि पशु के रूप में यूपस्तंभ से बांधा गया था. यह कहानी भागवत में भी है. ओल्ड टेस्टामेंट में यह कहानी है कि अब्राहम ने ईश्वर के लिए अपने सगे बेटे की बलि दी. रामायण तथा महाभारत में यह उल्लेख मिलता है कि श्रीराम तथा धर्मराज ने अश्वमेध राजसूय यज्ञ किये. छठी सदी में विष्णु कुण्डिन वंश के प्रथम माधवन वर्मा द्वारा पुरुषमेध और सर्वमेध यज्ञ के उदाहरण मिलते हैं.

जिस तरह आजकल अंध विश्वासों के बीच भी विज्ञान और तकनीकी ज्ञान की उन्नति हो रही है, उसी प्रकार उस युग में भी विज्ञान का थोड़ा-बहुत विकास हुआ. छोटे-छोटे कंकड़ों को फेंकने के रस्सी के तथा बांस के उपकरण और तीरकमानों के जमाने से आगे बढ़कर मानव ने वैज्ञानिक उपकरणों के आविष्कार की ओर कदम बढ़ाया. कुम्हार के चाक का आविष्कार हुआ. उससे घड़े बनाये गये. उनमें बीज, कंद, मांस तथा मछलियों को पकाकर खाने का प्रचलन हुआ. इस प्रकार मानव ने वन्य युग से आगे बढ़कर सभ्यता के युग में पदार्पण किया.

पशुओं का पालन-पोषण

धीरे-धीरे मानव की समझ में यह बात आयी कि जानवरों को मारकर उनका मांस खाने के बदले, उनका पालन-पोषण किया जाय तो वे और भी उपयोगी हो सकते हैं—दूध देते हैं और हर साल उनके बछड़े पैदा होते हैं, अतः उनका पालन-पोषण करना अच्छा है. लोग पशुओं को पकड़कर उन्हें पालने-पोसने लग गये. पशुओं के झुण्ड बढ़ने लगे. जिन कबीलों ने पशु-सम्पदा का संग्रह किया, वे अन्य कबीलों की अपेक्षा अधिक विकास प्राप्त कर सके, दूध मक्खन और मांस उन्हें अत्यधिक मात्रा में मिले. वे शारीरिक और मानसिक रूप से अधिक विकसित हुए.

पशुओं के झुण्डों में बढ़ने के साथ-साथ देवी-देवताओं की संख्या में भी वृद्धि हुई. जिनमें उनकी गायें पानी पीती थीं, उन नदियों की तथा जिन पर गायें चरती थीं, उन पहाड़ों की भी वे लोग पूजा करने लगे. इसलिए गंगम्मा (गंगानम्मा), पर्वतम्मा (पार्वतम्मा-पार्वती) के नाम पर

उत्सव (जातराएं), पूजाएं होने लगीं. इनके साथ-साथ क्षुद्र देवी-देवताओं की पूजाएं तो थीं ही. इसी कारण पूजाओं तथा तीर्थयात्राओं से संबंधित कितनी ही कहानियां महाभारत में दिखायी देती हैं.

वन्य अवस्था में जो पूजाएं आरंभ हुईं, वे क्रमशः विकसित होकर शाक्त सम्प्रदाय की बुनियाद बनीं. कालक्रम में यह शक्ति आदिशक्ति अवतारमूर्ति या पराशक्ति के रूप में वर्णित हुई. कहते हैं शक्ति ने वामो, ज्येष्ठा, रौद्री, अंबिका, परा, इच्छा, ज्ञान, क्रिया, शांता नामक नौ अवतार धारण किये. उसके पश्चात् उसे त्रिपुरसुंदरी मानकर उसकी पूजा की गयी. ये अवतार तथा ये पूजा पद्धतियां पुराणों में उल्लिखित हैं. किन्तु मामला यहीं तक नहीं रुका. कालक्रम में वामाचार प्रबल हुआ. शक्ति पूजा के संबंध में शाक्त, शैव, वैष्णव, बौद्ध धर्मों के बीच में स्पर्धा बढ़ी. किसी निर्लज्ज युवती को विवस्त्र करके उसके योनि-पीठ पर देवी को प्रतिष्ठित करके पूजा करना अच्छा माना गया. पूजा के समय मद्यपान करना, मांस-मछली और मिष्ठान्न खाना तथा अंत में मैथुन भी आवश्यक कहा गया. इस प्रकार "मकार पंचक" को अमल में लाने से मोक्ष प्राप्ति होने का विश्वास दिलाया गया.

सम्पत्ति का विभाजन

चाहे कितने भी तंत्र सीखें जायें और चाहे कितने भी मंत्र पढ़े जायें उनसे समाज का विकास संभव नहीं. इसके लिए परिश्रम करना पड़ता है. पशुपालन के लिए उन्होंने मेहनत की. इसलिए उनके पशुओं की संख्या बढ़ी. दूध, मक्खन और मांस पर्याप्त मात्रा में मिलने पर आबादी बढ़ी. इससे यह बात सिद्ध हुई कि आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन तथा जनसंख्या की वृद्धि में संबंध है. किन्तु उनके सामने अब एक समस्या खड़ी हो गयी.

पशु-पालन का जब प्रारम्भ हुआ, तब सारे झुंड की मिलकियत सामूहिक थी. कबीले के सब लोगों का उन पर हक होता था. उसी प्रकार उनके पालन-पोषण की जिम्मेदारी भी सामूहिक थी. इस व्यवस्था में सारे काम ठीक तरह से चलते थे. किन्तु पशुओं के झुण्डों के बढ़ जाने से उन सब को एक ही जगह पर रखने और चराने में कठिनाई महसूस हुई. इस वजह से गणों के हिसाब के अनुसार इन झुंडों का बटवारा किया गया. बटे हुए पशुओं को अलग-अलग जगहों पर चराते हुए उनका पालन पोषण किया जाने लगा. फिर पशुओं के बढ़े झुंडों का अपने वंशों के हिसाब से उन्होंने बटवारा कर लिया. इसके कारण सामूहिक पशु-संपत्ति सम्मिलित परिवार की संपत्ति के रूप में विभक्त हो गयी.

श्रम विभाजन

उस स्थिति में स्त्रियां अगर घर का काम सम्हालने लगीं तो पुरुष बाहर का काम देखने लगा. अतः इसमें कोई संदेह नहीं कि इतिहास में

सबसे पहले श्रम-विभाजन स्त्री-पुरुषों के बीच हुआ खाना पकाना, बच्चों का पालन-पोषण करना आदि घरेलू काम स्त्रियों के जिम्मे थे. पशुओं को चराना, दूध दुहकर लाना, इनके अतिरिक्त कन्द-मूल जुटाना, मास इत्यादि खाद्य सामग्री का प्रबंध करना पुरुषों के जिम्मे था तो भी पुरुषों को स्त्रियों का आज्ञाकारी होकर रहना पडता था. इसके सिवा कोई चारा ही न था इसका कारण क्या था ?

मातृ-सत्तात्मक समाज में बच्चों को यह मालूम होता था कि उनकी मा कौन है ? लेकिन उनका पिता कौन है इसकी जानकारी नही होती थी इसलिए वश परपरा को स्त्रियो के कारण ही पहचाना जा सकता था अत पारिवारिक रक्त सबध स्त्रियो से ही होता था इसलिए अधिकार एव प्रतिष्ठा भी स्त्रियों को ही प्राप्त होते थे आज तक भी मातृ-सत्तात्मक समाज वाले खासी और जयतिया कबीलो में स्त्रिया प्रमुख है

केरल मे आज भी मातृ-सत्तात्मक समाज के तत्व विद्यमान हैं चद्रगुप्त मौर्य तथा गौतमी-पुत्र शातकर्णि के नामों के पहले उनकी माताओ के नामो का होना भी मातृ-सत्ताक समाज के कारण ही है.

नाते-रिश्तों का प्रारम्भ

आदिमानवों के इस दशा तक पहुचने में कई हजारों सालों का समय लगा सुदीर्घ काल में मानव समाज के विस्तार के साथ स्त्री-पुरुषों के बीच सम्बन्धों में कुछ प्रतिबध लगने लगे पहले बाप-बेटी और मा-बेटे के बीच लैंगिक सबध निषिद्ध माना गया उसके उपरात भाई-बहनों के बीच के लैंगिक सबधों का भी निषेध किया गया फिर कुछ और समय बीतने के बाद कुछ कबीलों के लोगों ने एक ही गण के स्त्री-पुरुषों के बीच सबध होना अच्छा न माना कुछ कबीलों के लोगों ने यह मान लिया कि एक ही गण के स्त्री-पुरुषों के सम्बन्धो से अच्छी सतान पैदा नही होती और उन्होंने इस पर रोक लगाने का निर्णय कर लिया. इस निर्णय के अच्छे परिणाम निकले विभिन्न कबीलो के स्त्री-पुरुषों के बीच सम्बध से बच्चों की बेहतर नस्ल पैदा हुई मा की तरफ के लोगों का शक्ति-सामर्थ्य तथा बाप की ओर के लोगों का शक्ति-सामर्थ्य उन बच्चो को विरासत में मिले. इसलिए एक गण की स्त्रिया अपने कबीले के दूसरे गण के पुरुषों को निमत्रण देती थी पुरुष स्त्रियों के यहां जाकर उनके साथ रहते थे

पितृसत्तात्मक समाज

जब पशुपालन का आरम्भ हुआ तब यद्यपि स्त्रिया ही प्रमुख होती थीं, लेकिन पशु उनके अधीन नहीं होते थे. वे पुरुषों की देखभाल में रहते थे. शिकार के लिए उपयोगी औजार पुरुषों के पास ही रहते थे. स्त्रियों का इनसे कोई सरोकार न था. पशु-पालन प्रारम्भ होने से पहले पुरुषों के साथ स्त्रियां भी जंगलों में जाती थीं और कंद-मूल, फल, मास

जैसे खाद्य पदार्थों का संचयन करती थीं. परन्तु पशुओं की संख्या बढ़ने के बाद स्त्रियां ज्यादातर घरेलू काम-काज में ही बंध गयीं. वे खाना पकातीं, दूध उबालकर मक्खन निकालतीं, कंबल बुनतीं और बच्चों का पालन-पोषण करती हुई सदा के लिए घर पर ही रह गयीं. हालांकि ये काम मुश्किल थे, फिर भी पशुओं को चराने, तीर-कमान जैसे हथियारों का इस्तेमाल करने को जो महत्व प्राप्त था, वह इन घरेलू कामों को न प्राप्त था. इसके अलावा घर पर ही रहते-रहते स्त्रियों में कोमलता आने लगी. फलस्वरूप ऐसी परिस्थितियां बन गयीं जिनके कारण स्त्रियां खाद्य सामग्री के लिए पुरुषों की मोहताज होती चली गयीं.

खाद्य सामग्री की प्राप्ति के लिए आवश्यक पशु-संपत्ति और शिकार खेलने के लिए जरूरी हथियारों के पुरुषों के हाथों में ही रह जाने से, उन्हें स्त्रियों से अधिक महत्व प्राप्त होने लगा. इसलिए स्त्रियों के साथ कोई झगड़ा होने पर पुरुष झुकते नहीं थे. अपने हथियार और औजार लेकर, जिस गण में अपना जन्म हुआ, उसमें चले जाते थे. चरवाहों की अनुपस्थिति के कारण पशु बिखर जाते थे. दूध और मांस की कमी पड़ जाती थी. कभी-कभी पुरुष पशुओं को भी अपने साथ हांक ले जाते थे. इस कारण स्त्रियां पुरुषों से दब कर रहने लगीं. कालक्रम में पुरुष चाहने लगे कि वे अपनी अधीनता में रहने वाले पशु और औजार अपनी निजी संतान को ही दें. उसने सोचा कि यदि मेरी अपनी संतान मुझे पिता के रूप में मान्यता दे तो मेरा महत्व बढ़ेगा. मगर मातृसत्तात्मक समाज में यह कैसे संभव हो सकता है? बच्चे यह जानते ही न थे कि हमारा जन्मदाता पिता कौन है?

इसलिए पुरुष ऐसी स्त्री को ही पाने का प्रयत्न करने लगा, जो सिर्फ उसी के साथ रहे. स्त्री को अपने वश में करने के लिए पशु-संपदा दिखायी. शिकार करने में अपनी क्षमता का, हर तरह से अपनी श्रेष्ठता का प्रदर्शन किया.

अनेक पुरुषों के साथ यौनिक सम्बन्धों से पैदा हो रही विरक्ति के कारण, सब प्रकार से समर्थ, योग्य पुरुष के साथ रहने को स्त्री भी उत्सुक थी.

किंतु गण के सदस्यों ने इसे स्वीकार नहीं किया. उनका कहना था कि यह एक गण के पुरुषों के दूसरे गण की स्त्रियों के साथ सामूहिक रूप से रहने के नियम के विरुद्ध है. उन्होंने यह शर्त लगायी कि अगर कोई स्त्री एक ही पुरुष की होकर रहना चाहे तो पहले उसे उस गण के दूसरे पुरुषों की इच्छा पूरी करनी होगी. पुरुष को, अपने साथ रहने के लिए राजी होने वाली स्त्री के पहले कितने पुरुषों के साथ शारीरिक सम्बन्ध रह चुके थे इस पर कोई एतराज नहीं होता था.

प्रत्येक स्त्री पहले दूसरे पुरुषों की इच्छा-पूर्ति करने के बाद ही अपने मन चाहे पुरुष के साथ रहने का हक पाती थी. इससे स्त्रियों की सत्ता छिनने का रास्ता निकला. स्त्री के अपने मन चाहे पुरुष के साथ रहने के कारण, उसकी कोख से पैदा हुए बच्चे अपने पिता को भी पहचानने लगे.

फिर क्या था ! वंश-परम्परा मातृसत्ताक न रहकर पितृसत्ताक होने लगी. अब तक वंश-परम्परा में जो मुख्य स्थान माता को प्राप्त था वह अब पिता को प्राप्त होने लगा. इस तरह मातृसत्ताक समाज पितृसत्ताक समाज में परिणत हो गया.

इस प्रकार के परिवर्तन की स्थिति में स्त्री-पुरुषों के बीच जो समझौते हुए, जो संबंध स्थापित हुए, उनके विवरण महाभारत में उपलब्ध हैं. गालव की कथा में वे स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होते हैं.

माधवी ययाति की बेटी थी ययाति की इच्छा के अनुसार उसने आठ सौ अनोखे घोड़े प्राप्त कर गालव को देने का बीड़ा उठाया. वह एक पुत्र का जन्म होने तक इक्ष्वाकु राजा के साथ रही और उसके यहां से दो सौ घोड़े लेकर, माधवी ने उन्हें गालव को दिया फिर वह काशी के राजा के पास गयी. काशी के राजा से दो सौ घोड़े लेकर फिर पुत्र के पैदा होने तक माधवी उसके साथ रही उसके पश्चात् भोजपुर के राजा से भी दो सौ घोड़े लेकर उसे माधवी ने एक पुत्र दिया अंत में विश्वामित्र के यहां जाकर उनके द्वारा भी एक पुत्र को जन्म देकर उनसे दो सौ घोड़े लेने के बाद आठ सौ घोड़ों का हिसाब पूरा किया तब गालव उन घोड़ों को गुरु दक्षिणा के रूप में विश्वामित्र को देकर उऋण हुआ

गण के नियमों में परिवर्तन

पितृसत्तात्मक समाज बनने के पश्चात् गण के नियमों में कुछ परिवर्तन किये गये किसी एक ही पुरुष के साथ रहने की इच्छा रखने वाली स्त्री द्वारा पहले गण के सभी पुरुष सदस्यों की इच्छा-पूर्ति करने के नियम को बदल दिया गया नियम यह बनाया गया कि ऐसी स्त्री का गण के मुखिया की इच्छा-पूर्ति करना काफी है अथवा कुछ दिन मंदिर में रहकर अपने मनचाहे पुरुषों के साथ शयन-सुख के बाद मिली संपत्ति को देवी के लिए अर्पित करने पर भी उसे अपने मन पसंद पुरुष के साथ रहने की अनुमति मिल जाती थी एक ही पुरुष की होकर रहने की इच्छा न रखने वाली स्त्री किसी से भी शारीरिक सम्बंध स्थापित करने को स्वतंत्र थी

एंगेल्स ने लिखा—एशिया माइनर के लोग अपनी जवान लड़कियों को कुछ साल तक "अनैतिस" के मंदिर में रखते थे बेबिलोनियन स्त्रियां साल में एक बार "मिलिट्टा" के मंदिर में आत्मसमर्पण करती थी. अब भी हमारे देश में जहां-तहां जवान लड़कियों को मंदिरों में रखने और उनको व्यभिचार में उतारने का रिवाज दिखाई देता है "सोंदट्टि" क्षेत्र में यह कुप्रथा आज भी विद्यमान है वहां हर एक परिवार से एक युवती "यल्लम्मा" देवी के नाम पर समर्पित की जाती है.

कुछ कबीलों में भिन्न रिवाज था. किसी के विवाह में शामिल होने के लिए

आये हुए सभी स्त्री-पुरुषों का तीन दिन तक स्वेच्छा-संगम होता था. चोलियों के त्यौहार और काम-दहन के उत्सव तो केवल स्वेच्छा-संगम के निमित्त ही थे.

समय व्यतीत होने के साथ स्वेच्छा-संगम को धर्म-सम्मत न मानने वाले गण-प्रमुखों ने उनके साथ शाप या वरदान की कहानियां जोड़ दीं. लेकिन इन पर्दों को हटाने पर उनका सही रूप सामने आता है. कहते हैं कि माहिष्मती नगर की स्त्रियां अत्यंत सुंदर होती थीं, इसलिए अग्निदेव ने वहां के निषध नामक राजा को उन्हें स्वेच्छा संगम की अनुमति देने का आदेश दिया. इस तरह यह कहानी महाभारत में जोड़कर यह सिद्ध किया गया कि उनके स्वेच्छा-संगम निर्दोष हैं. ऐसी ही एक दूसरी कहानी भी है. नील राजा की बेटी से अग्निदेव प्यार करता था, इसलिए जब वह दिखाई नहीं देती, तब वह कमजोर होकर बुझ जाता और जब वह आकर अग्निकुण्ड पर पंखे से हवा करती, तब वह प्रज्वलित हो उठता था. इसे देख पुरोहितों ने राजा से यह बात कही, और अग्निदेव ने यह वरदान दिया कि उस नगर की स्त्रियों के स्वेच्छा-संगम करने पर भी कोई दोष नहीं होगा.

इस तरह की चाहे कितनी कहानियां क्यों न सुनायी जायें तो भी महाभारत से यह तथ्य स्पष्ट है कि उसके रचनाकाल में भी कुछ कबीलों में स्वेच्छा-संगम चलते थे.

अंगराज कर्ण ने यह कहकर शल्य की निंदा की कि बिना किसी संबंध का ख्याल किये तुम्हारे मद्र देश की स्त्रियां पुरुषों से संगम करती हैं और उसे बुरा नहीं माना जाता, तो शल्य ने यह कहकर कर्ण की भर्त्सना की कि तुम्हारे अंगदेश में तो पुरुष अपनी पत्नियों को बेचते तक हैं ? पांडुराजा ने कुंती को जो कहानी सुनायी उसमें यह बात स्पष्ट है कि उत्तर कुरु-भूमि में स्वेच्छा-संगम धर्मसम्मत माना जाता था. यह कहानी सुनने पर ही कुंती ने 'देवर-न्याय' के अनुसार पुत्रों को जन्म दिया.

इन सब उदाहरणों से यह प्रमाणित होता है कि हमारे देश में किसी समय स्वेच्छा-संगम प्रचलित था. पशुपालन प्रारंभ होने के बाद जब कि स्त्रियां एक ही पुरुष के साथ रहने लगीं, तब भी उन्हें गण धर्म का पालन करना पड़ा. पहले-पहल गण के सारे सदस्यों की इच्छा की पूर्ति करना उन स्त्रियों के लिए अनिवार्य था. कुछ समय बीतने के बाद यह मान लिया गया कि गण प्रमुखों को ही शयन-सुख देना काफी है.

पशुपालन की अवस्था से खेती-बारी की अवस्था में पहुंचे कुछ कबीलों के गण-नियम में कुछ फेर-बदल हुए. यह माना जाने लगा कि यदि कोई स्त्री गण-प्रमुख या पुरोहित को तीन दिन तक शयन-सुख प्रदान करे तो उसका धर्मपालन पूर्ण माना जायेगा.

इन परिवर्तनों का मूल कारण पशुपालन का प्रारम्भ ही था. पशुपालन करने वाले लोग खाद्य सामग्री को चुनने की अवस्था को पार करके स्वयं उसका उत्पादन करने की अवस्था में पहुंच गये थे. उत्पादन के संसाधनों

पर मानवों के ऐसे विशेष अधिकार का रास्ता खुल गया था जो किसी अन्य प्राणी को प्राप्त न था. अपनी आवश्यकता से अधिक उत्पादन कर सकने के कारण उसकी संपत्ति बढी. संपत्ति पर अधिकार जमाये हुए पुरुषों ने स्त्रियों को पीछे ढकेल दिया जैसा कि एंगेल्स कहते हैं, स्त्रियों को इसी अवस्था में ऐतिहासिक पराजय मिली.

गायें ही जीवन का मूलाधार

जंगली जीवन से निकल कर विकास की ओर बढने का मूल कारण पशुपालन था. इसीलिए वैदिक काल के आर्यों ने गायों को अपने प्राणों के समान माना. वे उनकी रक्षार्थ देवी-देवताओं से प्रार्थनाएं भी करते थे.

उनकी प्रार्थना होती थी—"भूली-भटकी गायों को ढूंढने के लिए जाने वाला, गायों के साथ जंगल जाने वाला, गायों को चराने के लिए जाने वाला, उन्हें वापस लाने वाला, गोपाल गायों के साथ सुख से घर लौटे" (ऋग्वेद १०-१९)

"देवताओं के प्राणों का आधार गाय है. मानवों के जीवन का मूलाधार गाय है. गाय ही यह संसार है. सूरज आकाश में जितनी दूर तक अपना प्रकाश फैलाता है, उतनी दूर तक फैली यह सारी दुनिया गाय ही है." (अथर्ववेद १०-१०)

इन प्रार्थनाओं तथा प्रशंसाओं से यह समझ लेना भूल होगी कि वैदिक कालीन आर्य गो मांस-भक्षण नहीं करते थे. इस बात के अनेक प्रबल प्रमाण वेदों में ही मिलते हैं कि आर्य बकरियों और घोड़ों के मांस के साथ-साथ गाय का मांस भी खाते थे. तो भी आर्यों ने अपने प्राणों से बढकर गायों की रक्षा की तो इसका मुख्य कारण उन गायों की उपयोगिता ही था

कद्दूओं को कद्दू खाने के लिए ही उगाया जाता है. बकरियों को पालना उनको काटकर खाने के लिए ही है. प्रायः गायों को पालना भी इसी तरह का है गायों से दूध, मक्खन, मांस और चमड़ा भी पर्याप्त मात्रा में मिलता था. अतः उन दिनों पशु-संपत्ति ही सबसे उत्तम संपत्ति मानी जाती थी इसीलिए गाय को उतना महत्व मिला. यज्ञों में गाय की बलि चढाकर आर्य देवताओं को संतुष्ट करने का प्रयास करते थे.

भारत के आर्य खासकर गायें पालते थे, तो मंगोलिया के लोग घोड़े पालते थे यहूदी भेड़ों को पालते थे और अरबी भेड़ों के साथ ऊंटों को भी पालते थे जिस प्रदेश में जो जानवर अच्छी तरह पल सकते थे, उस प्रदेश के लोग उन जानवरों को पालते-पोसते थे अमेरिका महाद्वीप में भेड़ों, घोड़ों और गायों का अभाव होने से वहा के लोग पशुपालन नहीं कर पाये इसीलिए रेड इंडियन जैसी नस्लों के लोग पिछड़े रह गये. यूरोप से जहाजों पर लादकर पशुओं को ले जाने के बाद ही वहा पशुपालन आरम्भ हो सका

भारत देश में यज्ञ-हवन आदि क्रतुओं का बोलबाला हो जाने पर यज्ञ में गायों और बछड़ों की बलि की प्रथा बहुत बढ़ गयी. इसके कारण पशु-पालन तथा खेती-बारी को नुकसान पहुंचा. फसल और दूध की कमी होने लगी. इसीलिए महावीर तथा बुद्ध ने यज्ञ-हवन आदि का विरोध किया. लोग समझने लगे कि अगर पशुपालन में वृद्धि नहीं होगी तो दूध और अनाज के लिए तरसना पड़ेगा. अतः एक बार फिर वे गायों को अपने प्राणों से बढ़कर मानने लगे

देवियों के साथ देवता

पशुओं की संख्या बढने के बाद मातृसत्तात्मक समाज पितृसत्तात्मक समाज में परिवर्तित हो गया तो देवियों के स्थान पर देव प्रकट होने लगे देवों की पूजा के लिए स्त्रियों को अयोग्य मान पुरुष पुजारी बनने लगे.

भूदेवी तो माता जैसी हैं. फिर पिता कौन है ? माता के गर्भ से पिता के बिना संतान पैदा नहीं होती. अगर सूर्य अपने प्रकाश और तेज का प्रसार नहीं करता तो भूदेवी के गर्भ से पेड़-पौधे पैदा नही होते अतएव उन लोगों ने सूर्य को पिता के समान समझा. भूमि की पूजा के साथ सूर्य नमस्कार भी शुरू किया गया मिस्र देश के लोगों ने आइसिस (प्रकृति देवी) की पूजा करके "ओसिरिस" को भी प्रणाम किया. यदि हमारे यहा सूर्य के द्वारा कुंती के गर्भ से कर्ण के जन्म की कहानी प्रचलित हुई तो मिस्र में "आइसिस" और "ओसिरिस" के संयोग से "होरस" के पैदा होने की मिस्र के लोग ही नहीं बल्कि ग्रीक और रोमन भी ईसा सन् चौथी शताब्दी तक "आइसिस" की पूजा करते रहे आज भी हमारे देश में ऐसे लोग हैं जो सूर्य नमस्कार करते हैं और ऐसे भी लोग हैं जो गौता-लम्मा (कुन्ती) का त्यौहार मनाते हैं

इस प्रकार देवों के साथ देवियों की पूजा होने पर भी देवों को प्रमुख स्थान देने के लिए कुछ कहानियां गढी गयीं स्त्रियों से बढकर पुरुषों के महत्व की घोषणा करने के लिए भी कुछ कहानियों की कल्पना की गयी ये कहानियां हमारे पुराणों के साथ दूसरे देशों के पुराणों में भी मिलती हैं.

ग्रीक पुराणों में एक कथा है—"किलताम्नेस्त्रा" नामक स्त्री ने अपने प्रिय अजिस्टस पर मोहाकर्षण के कारण अपने पति "अगमेम्नास" की हत्या कर दी. उसके प्रतिशोध में उसके पुत्र "ओरेस्टस" ने कुल्हाड़ी से अपनी मां के टुकड़े कर दिये तब मातृसत्तात्मक समाज की उग्र देवियां मातृहत्या को महापाप मान उसके पीछे पड गयीं. इतने में पितृसत्ताक समाज के दो देवों ने उनके बीच पडकर उसे बचाया. दोनों पक्षों के बीच कुछ वाद-विवाद के बाद उन्होंने पंचायत के सामने अपना मामला पेश किया

मातृसत्तात्मक देवियों ने जिरह की कि मातृहत्या के अपराधी "ओरेस्टस"

को मार डालना चाहिए मृत्यु दड के सिवा इस पाप का कोई प्रायश्चित नही. "ओरेस्टस" ने अपने पक्ष का समर्थन करते हुए कहा कि मेरी मा ने अपने पति की हत्या की अर्थात मेरे पिता की हत्या की इस प्रकार उसने दो हत्याएं की. दो हत्याओं की हत्यारिणी अपनी मा की मैंने हत्या की. चूंकि मैंने एक ही हत्या की, इसलिए मुझे हत्यारा कहकर मेरे पीछे पड़ जाना उचित नहीं.

"ओरेस्टस" के तर्क का खंडन करते हुए मातृसत्ताक देवियों ने अपनी बात पर जोर देकर कहा कि तुम्हारी माता और पिता के बीच रक्त सबध नहीं. वे दोनों अलग-अलग गणों में पैदा हुए अतः तुम्हारी माता ने तुम्हारे पिता की हत्या की, तो भी उसमें कोई पाप नही है मगर तुम्हारे और तुम्हारी मा के बीच संबंध है उनके दोनों के रक्त से तुम पैदा हुए इसलिए अपनी माता की हत्या के अपराध में तुम्हें मार डालना अनिवार्य है.

पंचों के रूप में आये हुए देवताओं ने दोनों पक्षों के वाद-विवादों को सुना और दोनों पक्षों की तरफ दो पंच हो गये इस पर अध्यक्ष ने अपने विशिष्ट मताधिकार का उपयोग किया, जिससे "ओरेस्टस" बच गया

इसके फलस्वरूप जब मातृसत्ताक देविया अपनी हार पर दुःखी होने लगी, तब उनको कोई विशेष स्थान दिखाकर, वहा उनकी स्थापना सम्मानपूर्वक कर दी गयी

भगवद्गीता इस प्रश्न का जवाब थी कि अपने सगे-सम्बन्धी (रक्त सम्बन्धी) लोगों की हत्या की जा सकती है जब अर्जुन ने यह मानकर शस्त्र-त्याग किया कि अपने सगे-सबधियों को मारना महापाप है तब कृष्ण ने उसे क्षात्र-धर्म की शिक्षा देकर उससे युद्ध कराया और स्वजनों का वध कराया इसलिए इससे साबित होता है कि महाभारत युद्ध के पहले रक्त सम्बन्ध का महत्व था.

भागवत में एक कहानी है जिससे पता चलता है कि पितृसत्तात्मक समाज का प्रारम्भ होते ही माताओं का महत्व घट गया. जमदग्नि महामुनि की पत्नी थी रेणुका देवी एक बार वह पानी लाने के लिए नदी तट पर गयी. वहा चित्ररथ नामक गधर्व को अप्सराओं के साथ जल क्रीड़ा करते देख उसका मन विचलित हो गया इसका पता लगते ही जमदग्नि आपे से बाहर हो गया तुरन्त उसने अपने पुत्रों को उसे मारने का हुक्म दिया. यद्यपि उन दिनों में बार-बार दोहराया जाता था "मातृदेवो भव, पितृ-देवो भव". तथापि वह समय ऐसा था जबकि पिता की आज्ञा का उल्लंघन करना संभव न था. फिर भी तीन बड़े बेटों ने पिता की आज्ञा का उल्लंघन किया किन्तु सबसे छोटे पुत्र परशुराम ने कुल्हाड़ी से माता के टुकड़े कर दिया ज्योंही जमदग्नि ने अपनी आज्ञा न मानने वाले तीनों बड़े बेटों का भी वध करने की आज्ञा दी, त्योंही परशुराम ने उन तीनों

बड़े भाइयों को भी मार दिया फिर बाद में अपने पिता को प्रसन्न करके परशुराम ने अपनी मा और तीनों बडे भाइयों को जिला लिया.

अंत में यह कहकर कहानी समाप्त की गयी कि जिस परशुराम ने मां और तीनों बड़े भाइयों को काट डाला, वह भगवान विष्णु का अवतार था जिसने मारने की आज्ञा दी, वह महान तपस्वी जमदग्नि महामुनि थे यज्ञ फल के रूप में वे पैदा हुए, इसलिए वे मारे गये लोगों को जिला सके

चाहे इस कहानी को हम दरकिनार कर दें तो भी यह बात स्पष्ट है कि एक समय में पत्नियों को मारना, पत्नी और बच्चों को बेचना, अथवा जुए के दाव पर चढाना बुरा नहीं माना जाता था वेद में इसका उल्लेख है कि एक जुआरी जुए में अपनी पत्नी हार बैठा. धर्मराज ने भी जुए में ही अपनी पत्नी खोयी हरिश्चन्द्र ने अपनी पत्नी और पुत्र को बेच डाला. अजीगर्त ने अपने पुत्र शुनस्सेप को यज्ञ पशु के रूप में बेच दिया. यह जानने के लिए कि उन दिनों गृह स्वामी के अधिकार कैसे थे, ये कहानियां पर्याप्त हैं

पुरुषों का महत्व स्थापित हो जाने पर इस बात के लिए बहस छिडी कि देवताओं में बडा कौन है ? कुछ लोगों ने कहा कि अग्नि की स्तुति के साथ ऋग्वेद का प्रारम्भ हुआ है, इसलिए अग्नि देव ही सबसे बडे हैं दूसरे कुछ लोगों ने कहा कि सूर्य को ही देवताओं का वास्तविक रूप कहकर उसकी स्तुति करने वाले मंत्र ऋग्वेद में हैं, अत सूर्य ही सर्वप्रथम देवता है अत में तय किया गया कि वायु, वरुण, अग्नि जैसे देवताओं के अधिपति इन्द्र हैं चूंकि पानी, हवा और आग के बिना मनुष्य मात्र का अस्तित्व ही असभव है, इसलिए ऋग्वेद काल में ही उन तीनों को वरुण, वायु और अग्नि देवता कहकर उनकी स्तुति की गयी चद्र से चांदिनी और सूर्य से प्रकाश मिलते हैं, अत. उन दोनों को भी देवताओं की सूची में जोडा गया कुछ लोगों ने "उषस्" को सबसे बडा मानकर उसकी स्तुति की कुछ ने कहा कि अश्वनी देवता प्रमुख हैं कुछ का कहना था आकाश की बिजली गिरने से लगने वाली चोट की बराबरी कोई नहीं कर सकता, इसलिए "इध" (बिजली) की प्रार्थना करना बेहतर है "इध" को "इन्द्र" के रूप में बदल दिया गया

रात के अधकार में उजाला फैलाने वाले दिये की तरह आकाश में दिव्या (नक्षत्र) कांति का प्रसार करता है इस प्रकार के "दिव्या" तैंतीस करोड हैं इन दिव्याओं को देवताओं के रूप में बदल दिया गया. उन नक्षत्र मण्डलों के जो नाम रखे गये, उन्हे लेकर तरह-तरह की कहानियां कही जाने लगी

जिस देवता को सबसे बडा दिखाना होता उसके सम्बध में अपने अनु-कूल अर्थवाली ऋचाओं को उठाकर उदधरण दिये जाते थे किन्तु ऋग्वेद का अनुशीलन करने पर हम क्या पाते हैं

देवी-देवताओं में रिश्ते-नाते विचक्षण नहीं हैं

"सूर्य अग्नि से पैदा हुआ, अग्नि सूर्य से पैदा हुआ दक्ष अदिति से पैदा हुआ, अदिति दक्ष से पैदा हुई", ऐसे कई और वर्णन ऋग्वेद में हैं. यह सब क्या हैं ? बेटी से पिता का पैदा होना क्या हैं ? बेटे से मा का पैदा होना क्या हैं ? यह पूछने पर जवाब मिलता हैं कि यह देवता धर्म हैं इसे सच साबित करने के लिए अवतार सम्बन्धी कहानिया जोड दी गयी कुछ और कहानिया लिखी गयी कि वे देवता हैं, इसलिए उन्हें सगे-सम्बन्धों की इस विचक्षणता से मतलब नही भागवत मे प्रद्युम्न की कहानी पढने से हमें इसकी विस्तृत जानकारी मिलती हैं भागवत में लिखा हैं—"रुक्मिणी देवी से प्रद्युम्न का जन्म हुआ शबरासुर ने यह जानकर कि उसके हाथ में मेरा मरण होना अनिवार्य हैं, सातवें दिन उस शिशु को ले जाकर समुद्र में फेंक दिया. एक मछली ने उस शिशु को निगल लिया उस मछली को मछुआरों ने पकड कर शबरासुर को भेंट के रूप में दिया जब मछली काटी गयी, तब उसके पेट के अदर से निकले बच्चे की सुदरता को देख शबरासुर की पत्नी मायावती ने कहा कि मैं इसे पालूगी जब वह लडका बालिग हुआ तब मायावती उसके प्रति आकर्षित हुई प्रद्युम्न ने मायावती की भर्त्सना की कि बेटे के प्रति माता का ऐसा आकर्षण गलत हैं. तब मायावती ने कहा कि पिछले जन्म में तुम मन्मथ थे और मैं रति थी मैं तुम्हारी प्रतीक्षा मे ही यहा हू तुम शबरासुर का वध करो फिर हम दोनों मिलकर द्वारका चले जायेंगे प्रद्युम्न ने तुरन्त शबरासुर को मार दिया और वह मायावती (रतीदेवी) के साथ द्वारका जा पहुचे"

दूसरे देशों मे भी इस प्रकार की कई कहानिया प्रचलित हैं मिस्र देशवासियों की देवी का पति उसका बेटा ही था. उसका नाम था तम्मज. ग्रीक पुराणों में दूसरे प्रकार की कहानी हैं देवाधिदेव "जियस" एक सुन्दर युवक को देखकर उसे उठा ले गया उस युवक का नाम था "गानिमेड" इससे पता चलता हैं कि मानवों मे जो कमजोरी हैं, वह देवों में भी मौजूद हैं

मानवों के बीच सगे-सम्बंध

देवी-देवताओं के बीच सगे-सम्बन्धों की जरूरत न थी तो भी मनुष्यों के लिए इनकी जरूरत पडी

यद्यपि कुछ कबीलों ने एक ही गण के स्त्री-पुरुषों के बीच लैंगिक सम्बध का निषेध किया, तथापि कुछ कबीलों ने ऐसा नहीं किया किन्तु जब पितृसत्तात्मक समाज बना, तब भाई-बहन के बेटे-बेटियों के विवाह का निषेध किया गया जैसे एक ही रक्त वाले भाई-बहन के बीच लैंगिक सम्बध की मनाही कर दी गयी, वैसे ही उनकी सतानों के बीच भी लैंगिक

सम्बन्धों पर रोक लगा दी गयी किन्तु उस तरह के कबीलों में भाई-भाई की संतान के बीच में विवाह सम्बध स्वीकृत थे वही अतर्विवाह पद्धति थी

इस प्रकार के विवाह तथा निषेध अब भी हैं

इज़ार्यली कबीले के योसेफ गोत्र में पैदा हुए सेलोफेहाद के कोई पुत्र न था, किन्तु पाच पुत्रिया थी योसेफ गोत्रियों को डर लगा कि यदि इन पांचों लडकियो की शादिया दूसरे गोत्र के लडको के साथ कर दी जायेगी तो उनकी सम्पत्ति का बंटवारा हो जायगा और उन लडकियों के साथ वह सपत्ति भी बाहर चली जायगी , इसलिए मोसे ने आज्ञा दी कि वे उसके पांच लडकों के साथ शादी कर सकती हैं मोसे ने कहा कि भगवान से सलाह-मशविरा करने के बाद ही मैं इस तरह का हुक्म दे रहा हू इस तरह उसने इस स्वार्थपूर्ण कार्य के बीच में भगवान को भी फसाया इस कारण से उन पाचों कन्याओं ने अपने चचेरे भाइयो से शादी कर ली यह बाइबिल के ओल्ड टेस्टामेंट में लिखी गयी कहानी है.

उक्त कहानी से यह स्पष्ट है कि सपत्ति के लालच मे किस प्रकार इस वैज्ञानिक तथ्य को ठुकरा दिया गया कि सन्निकट रक्त सम्बन्धियों के बीच विवाह-सम्बन्ध स्थापित होना अच्छा नही.

सपत्ति के लालच के साथ वशगौरव की बात भी थी साथ ही यह अहकार भी प्रबल हुआ कि अन्य गणों से हमारा गण श्रेष्ठ है इसीलिए आज भी कहीं-कही भाई-भाई के और भाई-बहिन के लडके-लड़कियों के बीच में विवाह होते हैं, मामा अपनी भानजी से विवाह करता है, तो अपनी बेटी का अपने साले के साथ विवाह कर देता है

वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि इस प्रकार के रिश्तों से विकारग्रस्त बच्चे पैदा होंगे उन्होंने सपिड और सगोत्र विवाहों का निषेध किया उनका कहना है कि माता की ओर से चार पीढियों तक, और पिता की ओर से सात पीढियों तक वैवाहिक सम्बन्ध कायम करना ठीक नही रहता

ऐसे सदर्भो में चाहे वैज्ञानिक सूत्रों का उल्लघन किया जाय, तो भी नित्य जीवन के अनुभव में इनका तिरस्कार नहीं किया जा सकता तकनीकी एव वैज्ञानिक शास्त्रों को छोड तात्रिक तथा मात्रिक प्रक्रियाओं द्वारा सपत्ति का उत्पादन नही किया जा सकता. यह नग्न सत्य है जो आज नही, बल्कि बरसो पहले सिद्ध हो चुका है .

खेतीबाडी का प्रारंभ

जब बढई और लोहार हल और उसके लिए जरूरी औजार तैयार करने लगे तब कृषि का आरम्भ हुआ खेती बढी और फसलें विस्तृत रूप से उगायी जाने लगी पशुओं की खूब वृद्धि हुई यज्ञ-योग आदि से नहीं, मनुष्य के परिश्रम से सपत्ति की वृद्धि हुई यज्ञों से पशु सपत्ति के

नाश और खेती की हानि के सिवा कुछ फायदा न हुआ इसलिए यज्ञों का विरोध करने वाले बौद्ध व जैन धर्मों का प्रसार होने लगा

अगर खेतीबाडी करके फसलें न उगायी जाती तो पशु-सपत्ति की वृद्धि नही होती. तुरानियन पठार जैसी जगहो में सर्दी के दिनों में खेत बरफ से ढके रहते हैं और उस समय पशुओं को चारा नही मिलता. इसी प्रकार भारत देश में भी गर्मियों में चारागाहें सूख जाती हैं. इस-लिए वर्षाकाल में ही फसलों को पैदा करके उनका संचय करना पडता था इसी कारण से पशुपालकों ने फसलें बढाने के लिए कमर कस ली इसके लिए उन्होंने कई मुसीबतों का सामना किया. तो भी फलों के पौधे लगाने का उन्हें जो अनुभव था, उसके आधार पर वे आगे बढ़ते रहे

लोग फल खाकर उनके बीज इधर-उधर फेंक देते थे, तब उनसे पौधे निकल आते थे स्त्रिया पौधों से फल निकालती और लोग उन्हें खाते इस प्रक्रिया में आसानी से फल मिलने के कारण उन्होंने और भी कुछ फलों के पौधे लगाये इस प्रकार फलों के बगीचों को बढाने का काम स्त्रियो द्वारा प्रारम्भ हुआ

इसी तरह उन्होंने जान लिया कि जौं, गेहू वगैरह की फसलों को लगाने पर वे पशुओं के चारे के लिए भी उपयोगी होगी अत वे गर्मियों में ठूठों को जला देते पानी बरसने के साथ ही नोकदार लकडियों से जमीन की खुदाई कर उनमें बीज डाले जाते फल लगने पर उन्हें काटकर उनका सचय कर लिया जाता मगर पशुओं की वृद्धि के साथ चारे की कमी होने लगी पशु राष्ट्र का कांटा बन गये अत उन्हें विस्तृत क्षेत्रों में फसलें उगानी पड़ी इस क्रम में उन्हें ऐसी जमीनें भी मिली जहा लकडियों से छेद करना सम्भव न हुआ अत उन्हें उसके लायक औजारो की जरूरत महसूस हुई इस कारण बढई और लोहार हल तैयार करने की ओर प्रवृत्त हुए बहुत माथा-पच्ची के बाद एक अच्छा हल तैयार करने में वे सफल हुए और खेती के काम में उसकी उपयोगिता से वे सतुष्ट हुए

उनकी खुशी का ठिकाना न रहा हल की प्रशसा करते हुए उन्होंने अपनी खुशी प्रकट की—"यह हल कैसा है ? वह वज्र की तरह पैनी धार-वाला है किसान को किसी प्रकार का कष्ट दिये बिना वह जमीन को छेदता है ऊबड़-खाबड जमीनों में भी वह चलता है वह कृषकों की प्रशसा के लायक है इसकी मदद से खेत में फसलें पनपती हैं तो मालिक पशु-गण इत्यादि की समृद्धि से मालामाल बनता है" (तै. सं ४-२-५-६)

इस हल की मदद से किसानों ने बीहड़ जमीनों को जोता फसलें बढ़ीं और पशुओं की टोलिया भी बढ़ी. इसलिए किसानों ने खेती-बाडी के लायक स्थानों में अपने स्थिर-निवास का प्रबन्ध कर लिया. कृषक गीत गाते उन्होंने बीहड़ जमीनों को जोता.

उनकी यह प्रार्थना है—"हल की नोक से जुती भूमि ! हम तुम्हारी

वदना करते हैं तुम हमारे अनुकूल बनो. सुन्दर धान्यरूपी फल प्रदान करने वाली बनो." (ऋग्वेद-४-५७-६)

इस तरह ठूठों को काटकर बनी नोकदार लकडियों के सहारे जमीन को जोतकर फसल उगाने के दिनों की कथाएं गाथाओं के रूप में परिणत हुई राम की कथा उसी काल की है एसाबू की कहानी भी उसी जमाने की है राम की कथा इक्ष्वाकु वश की है तो एसाबू की कथा इसाक वश की

"इसाक ने अपने बड़े बेटे एसाबू को ऊसर जमीन वाले जगल में भेजा तो भी एसाबू हताश नहीं हुआ. उसने बेकार की पड़ी हुई ऊसर जमीनों को अपना पसीना बहाकर उपजाऊ कृषि क्षेत्रों में बदल दिया पशुगण की वृद्धि करके सस्य सपत्ति को बढाकर "केबुर" में उसने अपने स्थिर-निवास का प्रबन्ध कर लिया" (ओल्ड टेस्टामेंट से)

श्रीराम ने जगल में जाकर हल हाथ में लिया उन्होंने अहिल्या (जो न जोती गयी) को जोत कर धान्यलक्ष्मी की सृष्टि की इसलिए रामायण में शिला को स्त्री के रूप में बदलने की अहिल्याशाप-विमोचन की कहानी कल्पित हुई

इस सारी प्रगति की कुजी हल था जिस कबीले के लोग उसका उप-योग करना जानते थे, उन्होंने अपने दोस्त बने दूसरे कबीलो के लोगों को उसे दिया उन्हें उसे बनाने का और उससे खेत जोतने का तरीका उन्हें सिखाया.

"सीत्यम्", "हल्यम्" अर्थात् जुती हुई जमीन, "द्विवर्सीत्यम", "द्विहल्यम्" अर्थात् दो बार जुती हुई जमीन कहकर "अमरकोश में उल्लिखित है

"सीता शब्द के अर्थ भूमि, हल और जुती हुई जमीन में हल की नोक से बनी रेखा बताये गये हैं खेती के लिए उपयुक्त हल राजा जनक को मिला इसीलिए कहा गया कि हल से जोती गयी जमीन की रेखा में मिली हल का आविष्कार होने से शिकार के काम में आने वाले तीर-कमान का महत्व घट गया इसलिए रामायण में यह कथा वर्णित हुई कि श्रीराम ने शिवधनुष को तोडा, जिससे सीता (हल) के द्वारा सूर्यवश और चद्रवश के बीच रिश्तेदारी बढी" इस तरह के जो विचार डा मजुमदार तथा डा पुसालकर ने अभिव्यक्त किये, वे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं

ऐसी भी एक कहानी है कि अगस्त्य ने विंध्य पर्वत को दबा रखकर, उत्तर से दक्षिण में हल लाकर दिया इसीलिए तमिल लोग हल को "अगस्त्य" कहते हैं, चाहे यह कहानी सच हो या झूठ तो भी अगस्त्य, अत्रि, वामदेव, और बुध महर्षियों ने हल की प्रशंसा करते हुए, कृषि के विकास के लिए जो परिश्रम किया, वह वेदों के वर्णनों में दृष्टिगत होता है

इस तरह कृषि का विस्तार होने से सदस्य-सम्पत्ति तथा पशु-सम्पत्ति की वृद्धि हुई. पिछडी हुई जातियों के लोग इस सम्पत्ति को लूट कर न ले जायें, इस ख्याल से गावों के चारों ओर दीवारें खडी की गयी. क्रमशः इन चारदीवारियों के बीच में नगर बने हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो की खण्ड-हरों में प्रकट हुए नगर इसी प्रकार के हैं. ये ही नगर क्रमश. महानगर बने. इन महानगरों में रहने वाले लोगों की संस्कृति ही नागरिकता कही गयी इस तरह नागरिक युग (सुसभ्यता युग) के प्रागण में कृषकों ने पदार्पण किया. किन्तु उसके साथ ही पिछड़े हुए कबीलों की स्वतत्रता का अपहरण भी आरम्भ हुआ

गुलामों की आवश्यकता

जब कृषि तथा पशु सम्पत्ति की वृद्धि हुई, तब खेती-बारी करने के लिए तथा पशुओं की देखभाल के लिए अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता पडी. वास्तव में, पशुपालन का विकास होने पर ही काम के लिए ज्यादा लोगों की जरूरत महसूस होने लगी अत पिछड़े हुए कबीलों के लोगों को गुलाम बनाने की प्रथा चल पडी उनसे निकृष्ट से निकृष्ट सेवाएं ली गयीं एक मनुष्य द्वारा दूसरे मनुष्य के श्रम का फल छीनने की प्रथा शुरू हुई

पशुपालन से पहले यह स्थिति न थी प्रकृति प्रदत्त खाद्य सामग्री का सचयन करके खाने वाले लोगों को गुलामों की जरूरत नहीं पडती थी

उन दिनों में किसी एक स्थान पर खाद्य वस्तुओं का अभाव हो जाने पर लोग दूसरे स्थान पर चले जाते यदि वहा पहले से कोई बसा न होता तो कोई दिक्कत न होती थी अगर पहले से वहा कोई बसा होता तो उनके साथ नवागतुकों का सघर्ष होता जीते हुए कबीले के लोग हारे हुए कबीले के लोगों का कत्लेआम करते उन्हें डर रहता कि ऐसा न करने पर खाद्य पदार्थों की प्राप्ति में बाधा पडेगी दूसरे सब जीव-जतुओं की तरह मनुष्य भी पूर्ण रूप से प्रकृति पर ही निर्भर रहकर जीते थे

जिन लोगों ने पशुपालन करते हुए खेतीबारी शुरू की, वे अपनी आवश्यकता से अधिक खाद्यान्न का उत्पादन कर सके अत उनके लिए आहार की कमी न थी उन्हें काम में हाथ बटाने वाले लोगों की आवश्यकता थी. अत हारे हुए कबीलों के लोगों की हत्या करने के बजाय उन्हें बन्दी बनाकर गुलामों की तरह इस्तेमाल किया जाने लगा. इस प्रकार गुलामी की प्रथा शुरू हुई.

अत्यत प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में दस्युओं (दासों) का उल्लेख मिलता है हडप्पा तथा मोहनजोदडो के खण्डहरों में गुलामों की प्रतिकृतियां प्राप्त हुई हैं. सैकडों सालों तक यहूदी लोग ऐंगुप्तों के यहां गुलामी करते रहे. हालाकि गुलाम रह चुके अनेक यहूदियों ने बाद में कितने ही लोगों को स्वयं गुलाम बनाया. यह प्रथा सभी जगह प्रचलित थी ये गुलाम दूसरे सब

काम तो करते ही थे, जरूरत पड़ने पर अपने मालिकों की तरफ से हाथ में तलवार लिये, पैदल सिपाही के रूप में युद्ध भी करते थे.

योद्धा होने के कारण ये गुलाम अवसर मिलने पर अपने मालिकों से विद्रोह कर देते अथवा उनके चंगुल से भाग निकलते थे. मोसे के नेतृत्व में यहूदियों के एगुप्तों के चंगुल से भाग निकलने की घटना का ब्यौरा ओल्ड टेस्टामेंट में मिलता है. अतः मालिक ऐसे विश्वासी लोगों को पाने का प्रयत्न करते जो इन गुलामों को दबाकर रख सकते.

एक और डर उन्हें सताया करता था कि कहीं उनसे शक्तिशाली कबीले के लोग उन पर हमला करके उनकी सम्पत्ति न लूट लें, उनके पशुओं के साथ उन्हें भी बन्दी बनाकर न ले जायें, तब उन्हें गुलाम की तरह रहना पड़ता और उनकी कन्याओं को दासी बनना पड़ता. इस वजह से उनमें यह विचार पैदा होना स्वाभाविक ही था कि उनके रक्त सम्बन्धी सगे लोग जितनी अधिक संख्या में होंगे, उतनी ही अधिक उनकी सुरक्षा सुनिश्चित होगी.

कोई एक कबीला जितना बड़ा और मजबूत होता था, उतनी ही मजबूत उसकी सुरक्षा-व्यवस्था होती थी. कबीले में जिस गण के लोग अधिक शक्तिशाली होते थे, उसी का आदेश सर्वमान्य होता था. इसी तरह जिस परिवार में अधिक संख्या के सदस्य—खासकर ज्यादा युवक—होते थे, उसकी सम्पत्ति की वृद्धि अधिक होती थी. इसलिए यह मानकर कि जितनी अधिक पत्नियां होंगी, उतने अधिक पुत्र पैदा होंगे, हर पुरुष अधिक से अधिक विवाह करने लगा. इसके लिए चाहे उसे मुंह मांगा दाम ही क्यों न चुकाना पड़ता. अगर पर्याप्त संख्या में स्त्रियां अपने कबीले में न मिलती तो दूसरे कबीलों पर हमला करके उनकी कन्याओं को उठा लाते और उन्हें अपनी रखैलें बना लेते. जिनके लिए हमला करना सम्भव न होता वे आवश्यक दाम चुका कर दूसरे कबीले की कन्याओं को रखैल बना लेते थे. चाहे पत्नी से पैदा हो या रखैल से, पुत्र तो पुत्र ही होता था. अब्राहम की दासी से इस्मायेल का जन्म हुआ तो उनकी पत्नी शारा से इस्साक पैदा हुआ. दोनों अब्राहम के ही बेटे थे.

पर्याप्त संख्या में पुत्र न होने पर अथवा उनके जल्दी मर जाने पर दूसरों के बच्चों को गोद ले लिया जाता था—कभी-कभी गुलामों के बच्चों तक को भी.

यदि गुलामों के बच्चों की संख्या अपने बच्चों की संख्या से अधिक होती तो मालिक उन बच्चों को मार डालते थे. जब गुलाम इज्रायल कबीले की जनसंख्या अधिक होने लगी तब मालिक एगुप्त घबरा गये. उन्होंने हुक्म दिया कि इज्रायल कबीले की स्त्रियों के गर्भ से पैदा हुए पुरुष शिशुओं को नदी में फेंक दिया जाय.

अवसर मिलने पर गुलाम ही विद्रोह नहीं करते थे, बल्कि समय और

सुविधा देखकर जंगली लोग भी विकास संपन्न लोगों पर आकस्मिक हमले करके यथासम्भव अधिकाधिक संपत्ति लूट ले जाते थे सम्भव हो तो स्त्रियों को भी उठा ले जाते. वे गुपचुप आकर गांवों और फसलों को आग लगा देते थे.

इस प्रकार के आक्रमण तथा प्रत्याक्रमण के जारी रहने से स्त्रियों—खासकर कन्याओं—को नरक-यातनाएं भोगनी पड़ीं. कुछ कबीले के कबीले नष्ट हो गये. ऐसी क्रियाएं केवल एक ही स्थान पर नहीं, बल्कि सर्वत्र हुईं. यदि हम ओल्ड टेस्टामेंट पढ़ें तो ये सभी दारुण अत्याचार प्रत्यक्ष दृष्टिगत होते हैं. अतएव विकसित कबीलों के लोगों ने अपने गावों के चारों ओर चारदीवारी निर्मित करके, वीर योद्धाओं को सुरक्षा के लिए तैनात कर दिया. पिछड़े कबीलों के लोगों ने जंगलों में भागकर अपनी जान की रक्षा की.

ऐसी पृष्ठभूमि में हर कोई अधिक से अधिक पुत्र तथा पौत्रों की कामना करता था इसलिए गण प्रमुखों ने प्रतिबन्ध लगाया कि पुत्र संतान की प्राप्ति के बिना किसी को सन्यासी बनना नहीं चाहिए.

अपुत्रस्य गतिर्नास्ति:

वंश का नाम बनाये रखने के लिए बच्चों की आवश्यकता होती है. इसलिए नियम बनाया गया कि कबीले के सब लोगों को संतान पैदा करनी चाहिए कहा गया कि संतानहीन व्यक्तियों के पितृ-पितामहों का नरक में जाना निश्चित है. इस बात को स्पष्ट करने वाली कहानियां महाभारत में तथा अन्य पुराणों में मिलती है

महाभारत में एक कहानी है कि जरत्कार ने आजीवन बृह्मचारी रहना चाहा, किन्तु अपनी संतान के न होने पर पितृ-पितामहों के पुन्नाम नरक में गिरने के डर से वह बहुत दुःखी हुआ. उस दुर्गति से उनको बचाने के लिए उसने आस्तिक नामक पुत्र के पैदा होने तक एक नागकन्या के साथ दांपत्य जीवन बिताया

इसी तरह की एक दूसरी कथा है कि मंदपाल नामक एक मुनि ने हजार साल तपस्या की उसके उपरांत मानव-देह त्याग कर जब वह पुण्य लोक की ओर जा रहा था, तब उसे उसका रास्ता दिखायी नहीं दिया. तब देवों ने कहा कि चाहे कितनी ही तपस्या करें तो भी जिनकी संतान नहीं है, उन्हें पुण्यलोक प्राप्त नहीं होगा इसलिए मंदपाल भूलोक में लौट आया और जल्दी से जल्दी संतान की प्राप्ति के लिए उसने एक चातक पक्षी से संभोग किया तो तुरन्त उस पक्षी से बृह्मवेत्ता पुत्र पैदा हुए.

जिस प्रकार हमारे पूर्वजों ने ऐसी असंभावित कल्पनाओं से भरी कथाओं की सृष्टि की, उस प्रकार सेमेटिक कबीलों के लोगों ने कहानियां कल्पित नहीं की. अतः उनकी कहानियां उस समय की वास्तविक परिस्थितियों के निकट हैं.

कदम-कदम पर हमारे पंडितों द्वारा अवतारों की, शापों की, और वरदानों की बात करते रहने से वास्तविक परिस्थितियां पृष्ठभूमि में चली गयीं.

भागवत में एक कथा है कि रुचि प्रजापति की पत्नी याकूति थी उनके बेटे का नाम श्री यज्ञ था और बेटी का नाम दक्षिणा था भाई-बहन के बीच लैंगिक सम्बन्ध होने से बच्चे पैदा हुए, तो भी यह विश्वास उत्पन्न करने के लिए कि यह भाई-बहन के बीच लैंगिक सम्बन्ध नहीं है, अवतार सिद्धांत को आड़े लाया गया अतः यह कहा गया कि रुचि प्रजापति को दिये गये वरदान के अनुसार श्री महाविष्णु के श्री यज्ञ के रूप में और श्री महालक्ष्मी के दक्षिणा के रूप में पैदा होने से यह बात हुई, इसलिए उनका यौन-सम्बध गलत नहीं है.

अब्राहम के भतीजे का नाम "लोत" था, कुछ कारणों से उसको अपनी दोनों बेटियों के साथ किसी पहाडी घाटी में रहना पडा उस समय में उसकी बडी बेटी ने संतान पाने की अभिलाषा से किसी दूसरे पुरुष को पाने का मौका न होने के कारण, पिता के साथ ही संभोग किया इसके फलस्वरूप मोयाबीयों का मूल पुरुष "मोयाब" पैदा हुआ उसके बाद छोटी बेटी ने भी पिता के साथ संभोग किया जिससे अम्मोनियों का मूल पुरुष "बेन्मम्मि" पैदा हुआ यह बात ओल्ड टेस्टामेंट में स्पष्ट रूप से लिखी गयी है. हां, इसमें थोडा सा घुमाव पाया जाता है उसमें लिखा गया कि द्राक्षरसपान के नशे में होने के कारण "लोत" को इसका पता ही न था कि मैं अपनी बेटियों के साथ ही संभोग कर रहा हूं

अब्राहम की पत्नी थी शारा उन दोनों का पिता एक ही था, किन्तु उनकी माताएं अलग-अलग थीं जवान हो जाने पर भी, उसके संतान नहीं हुई बिना बच्चे के नाम कैसे चलता ? इसलिए शारा ने अपनी एक दासी को अपने पति के पास भेजा उनसे इस्माइल का जन्म हुआ. यह बात भी ओल्ड टेस्टामेंट में साफ तौर से लिखी गयी है

'देवर-न्याय'

संतान पैदा होने के पहले ही विधवा हो गयी स्त्रियों के लिए, संतान पैदा करने की शक्ति से रहित पुरुषों की पत्नियों के लिए, संतान पाने की दृष्टि से "देवर न्याय" धर्मसम्मत माना गया

पहली पत्नी से संतान न होने पर पति दूसरी स्त्री से शादी कर लेता है. एक पत्नी के मर जाने पर भी वह दूसरी शादी कर लेता है. तब पति के मर जाने पर या पति के नपुंसक होने पर स्त्री की स्थिति क्या होगी? संतान न होने पर स्त्री को संपत्ति में हिस्सा नहीं मिलता और वंश की वृद्धि नहीं होती. इसलिए ऐसी स्थिति में स्त्री अपने देवर के साथ लैंगिक सम्बन्ध जोड़कर अथवा किसी दूसरे पुरुष के साथ मिलकर संतान प्राप्त कर सकती है. यह उस समय का न्याय था.

यूदा का बड़ा बेटा संतान पैदा होने के पहले ही चल बसा दैवर न्याय का पालन करने के लिए नियुक्त दूसरे बेटे ने यह सोचकर कि ऐसा करने से उत्पन्न संतान हमारी पशु संपदा में हिस्सेदार होगी, अपनी भाभी के गर्भवती न होने के लिए आवश्यक सावधानी बरती. ऐसा करना पाप होने के कारण वह मर गया तीसरे बेटे की उम्र कम होने के कारण यूदा ने बहू को मैके भेजा उसने वादा किया कि जैसे ही मेरा छोटा बेटा बालिग होगा, वैसे ही उसे मैं तुम्हारे यहां भेजूंगा किन्तु यूदा अपना वादा पूरा न कर सका उसे डर था कि मेरी बहू के साथ संभोग करने से जिस तरह मेरे दोनों बड़े बेटे मर गये, उसी तरह यह छोटा बेटा भी मर जाएगा. फिर उसकी बहू एक वेश्या का वेष धारण करके आयी और स्वयं यूदा के साथ ही उसने संभोग किया तब उसके जुड़वा बच्चे पैदा हुए उनमें बड़े का नाम "जेरहू" और छोटे का नाम "पेरुस" था इस "पेरुस" के वंशज ही थे दावीद तथा सोलमन राजा

इस दैवर न्याय के अनुसार ही वेद व्यास ने धृतराष्ट्र तथा पांडु राजा के जन्म की कथा रची पांडु राजा संतान पैदा करने के अयोग्य थे, इसलिए पंच पांडव किन्हीं अन्य व्यक्तियों से उत्पन्न हुए. महाभारत में लिखा गया है कि कुन्ती एवं माद्री ने देवों को निमंत्रित करके उनके द्वारा पुत्रों को जन्म दिया इस प्रकार पैदा हुए क्षेत्रजों (विवाहित स्त्री और पराये पुरुष के मिलन से उत्पन्न पुत्रों) तथा गोद लिये हुए पुत्रों को भी औरस पुत्रों (विवाहित स्त्री-पुरुषों के पुत्रों) के बराबर गिना गया क्षेत्रज पांडवों को पांडु राजा की पत्नियों ने जन्म दिया, इसलिए उन्हें पांडु राजा के पुत्र ही कहा गया इस प्रकार की आवश्यकता दूसरी बार न हो, इसके लिए भीष्म ने राक्षस-विवाह की पद्धति के अनुसार सौ कन्याओं को लाकर धृत-राष्ट्र के साथ उनकी शादी करा दी, किसी न किसी प्रकार से धृतराष्ट्र के सौ पुत्र पैदा हुए

गाय से जुड़ने वाला सांड चाहे किसी का भी हो, किन्तु गाय से पैदा होने वाला बछड़ा तो गाय के मालिक का ही माना जाता है यही बात उन दिनों मानव के बच्चों पर भी लागू थी

इतने प्रकार के स्वजनों की संख्या की वृद्धि करते रहने पर भी विकसित समाज के लोगों की समस्याओं का हल नहीं हो पाया गुलामों से कसकर काम लेने के लिए और शत्रुओं को हटाने के लिए योग्य वीरों की जरूरत थी. अत. उन्होंने अपने युवकों को धनुर्विद्या में, खड्गयुद्ध में, और घुड़-सवारी में चतुर बनाया. अत्यधिक बल-पराक्रम का प्रदर्शन कर सकने वाले समर्थ व्यक्ति चाहे जहां भी दिखाई दिये, चाहे जहां भी वे पैदा हुए तो भी उन्होंने उनको अपने कबीले में आने के लिए निमंत्रित किया और उन्हें मुंहमांगी सभी चीजें दीं. इस प्रकार सुशिक्षित वीरों के समुदायों से उन दिनों क्षत्रिय वर्ण की व्यवस्था हुई. (इससे सम्बन्धित कथाएं महाभारत में तो हैं ही, दूसरे देशों के पुराणों में भी हैं.)

पुरोहितों की प्रार्थनाएं

खड्ग धारण करने वाले योद्धा हमेशा शत्रुओं से जूझने को तत्पर रहते थे. कारीगर उनके लिए जरूरी हथियार तैयार करने के साथ खेतीबारी के लिए उपयोगी औजार भी बनाते थे. किसान खेतीबारी के साथ पशुपालन करते थे. पुजारी पूजाएं करते थे तो पुरोहित यज्ञ-याग चलाते हुए समाज के लिए भले-बुरे का निर्णय करते थे. गुलाम इन सब लोगों की सेवा करते थे.

पुजारी और पुरोहितों के साथ "हराम, हरीम, हुरं, हरं" कह कर भूत-प्रेतों को भगाने का विश्वास जमाने वाले मृतवैद्य तथा अपने मन्त्र-तन्त्रों की शक्ति से किसी भी असंभव कार्य को संभव बनाने की ढींग मारने वाले तान्त्रिक भी होते थे.

इन सबसे बढ़कर यज्ञ-याग आदि क्रतुओं को विधिवत चलाने की शक्ति रखने वाले ऋषियों का अधिक महत्त्व था हर स्थिति में वे पूजा सम्बन्धी कार्य कराने के योग्य थे

"हमारे वृषभ सामान अच्छी तरह ढोयें किसान अच्छी तरह खेती-बारी करें हल सीधे ढग से खेत जोतें रस्से गठरियों को खूब जकड कर बाधें" (ऋग्वेद, ४-५७-४)

"हमारे हल खेतों को अच्छी तरह जोतें हमारे चरवाहे बैलों के साथ सही-सलामत लौटें

"हे सोमरस ! जैसे बाप बेटे को सुख देता है, वैसे तुम हमारे पेटों में प्रवेश करके हमें सुख पहुचाओ

"हमने जो सोम पिया, वह हमें कर्माचरण के समर्थ बनावे हमको वह रोगों से बचावे" (ऋग्वेद, ८-४८)

उनकी प्रार्थनाएं इस प्रकार होती थीं जब पुरोहित यह कहते रहे कि इन प्रार्थनाओं के बिना पानी नहीं बरसता, फसलें नहीं उगतीं, पशु दूध नहीं देते, प्रजा सुख से जी नहीं सकती, शत्रुओं को हराना सम्भव नहीं होता, तब हाथ से काम करने वालों ने उनके विरुद्ध विद्रोह किया कि ये सब बेकार बातें हैं आलसी, धोखेबाज और परान्नभोगी धूर्तों के ये षड्-यन्त्र हैं

हल तैयार करने वाले बढ़ई हैं उसमें लोहे का फलक लगाने वाले लोहार हैं उसको खींचने वाले बैल हैं उससे खेत जोतने वाले किसान हैं. इस प्रकार कितने ही लोगों की मेहनत से फसलें फलती हैं. न कि यह प्रार्थना करने से कि हे हल, तुम अच्छी तरह खेत जोतो हल से जुती हुई जमीन तुम हमें अनाज दो. क्या आप इसे ठीक नहीं मानते ? तो इन पुजारियों एव तान्त्रिक-मान्त्रिकों से कहें कि वे प्रार्थना करके हल तैयार करें, अथवा एक घड़े की या किसी दूसरी चीज की सृष्टि करें वे इस तरह की

चुनौती देने लगे कि इन मंत्र-तंत्रों के द्वारा कोई जीवनोपयोगी उत्पादन नहीं हो सकता ? (चार्वाक सिद्धांत)

इस तरह के विद्रोही लोगों में बृहस्पति लक, धिषण परमेष्ठिन, भृगु इत्यादि प्रमुख थे. उनके पश्चात पुराण काश्यप, मक्खलि गोशाल, पगिघ कात्यायन, अजित केशकंबलि इत्यादि ने भौतिक सिद्धांतों को और भी सुस्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया. चूंकि ये सिद्धान्त उनके विरुद्ध थे, इसलिए पुरोहितों ने उन्हें मूर्ख और नीति-नियम रहित कहकर इनकी निंदा की. उन्होंने प्रचार किया कि जल, अग्नि, वायु आदि देव हैं. यदि हम उनकी प्रार्थना न करें तो हमको कोई शुभ परिणाम नही मिलेगा

फिर भी दस्तकार उन पर हावी हुए. घरेलू काम-काज की चीजें, खेती-बारी के औजार, हथियार, वस्त्र इत्यादि दैनिक आवश्यक वस्तुओं को बनाने वाले, मकान और नावों का इस्तेमाल करने वाले, ये सब दस्तकार हैं, इसलिए इनको प्रथम स्थान मिला. आज भी किसी न किसी रूप में इनका महत्व कायम है

अब तक विवाह के समय घास की मटकी तथा अरवीणि-घड़े की पूजा की जाती है बढ़ई और सुनार को दक्षिणा तथा तांबूल देकर उनके यहां से विवाह का तख्ता, भापिकम् मंगलसूत्र, बिछिया लाये जाते हैं. अंत में पुजारियों को भोजन सामग्री दी जाती है गृह प्रवेश के अवसर पर राज और बढ़ई के औजारों की पूजा करने के बाद ही पुरोहितों का आदर-सत्कार होता है पहले ये सारे आदर-सत्कार व्यक्तियों के होते थे, किन्तु अब स्पर्धा में हस्त-कलाओं के मार खाने से परिस्थिति में बदलाव आया है धन-संपन्न व्यक्ति गरीब कारीगरों का आदर करना पसंद नहीं करते अतः अत्यंत प्राचीनकाल से चली आ रही प्रथा में परिवर्तन हो गया और अब व्यक्तियों के बदले उनके औजारों की पूजा होती है या उनकी तैयार की हुई वस्तुओं की पूजा होती है

भाववाद और भौतिकवाद

चार्वाक ने जिस भौतिकवाद का प्रतिपादन किया, वह बीज रूप में ऋग्वेद में पाया जाता है भौतिकवाद के सूत्र उपनिषदों में स्पष्ट रूप से दिखायी देते हैं स्वसन्वेद उपनिषद् ने पदार्थवाद एवं स्वभाववाद को महत्व दिया. जाबालि महर्षि ने श्रीराम को जो सलाहें दी, वे भौतिकवादी दृष्टिकोण से ही दी गयी. महाभारत में नास्तिकवाद, स्वभाववाद, परिणामवाद तथा याद्दच्छवाद का उल्लेख मिलता है उसमें कुछ ऐसी कल्पित कथाएं भी हैं जिनमें धर्मराज द्वारा चार्वाक का वध किये जाने की बात कही गयी है. इसीलिए डा सर्वपल्लि राधाकृष्णन ने कहा कि भाववाद, अध्यात्मवाद जितना प्राचीन है, भौतिकवाद भी उतना ही प्राचीन है

भौतिकवाद को दबाकर मटियामेट करने के लिए भाववादियों ने कई कहानियां गढ़ी उन्होंने तैंतीस करोड़ देवों की सृष्टि करके उनसे भौतिक

जगत को भर दिया यज्ञों की धूम मच गयी. तांत्रिक सिद्धांत का बोलबाला हुआ

पानी नहीं बरसने पर कुछ लोग यज्ञ करते थे; कुछ लोग मेंढकों का जुलूस निकालकर उनकी पूजा करते थे तांत्रिक लोग कन्याओं से खेत की जुताई करवाते थे वे यह विश्वास दिलाते थे कि स्वच्छ चांदनी रात में, समतल भूमि में, अविवाहित नग्न कन्याएं अगर हल खींचती हैं तो चंद्र उनके लिए आसमान से उतर आता है और साथ ही पानी भी बरसता है (आज भी कहीं-कहीं मेंढकों की पूजा और नग्न कन्याओं द्वारा खेतों की जुताई होती हैं)

इसके विरुद्ध भौतिकवादियों का कथन है कि इनकी सब बातें सफेद झूठ हैं. वृत्त (अर्थात् मेघ) में इन्ध (अर्थात् बिजली हैं. इनके घर्षण से गरज और बिजली की चमक के साथ वर्षा होती हैं

यदि भौतिकवादियों की बात पर लोग विश्वास करें तो यज्ञ करने वाले नहीं रहेंगे अत पुरोहितों ने एक लम्बी कहानी गढी उन्होंने इंध (ईंधन-बिजली) को इंद्र के रूप में तथा मेघ को वृत्तासुर के रूप में वर्णित किया वृत्तासुर का जन्म, इन्द्र-वृत्तासुर के बीच युद्ध की कहानियां गढी गयी मेघ को वृत्तासुर का रूप तथा विद्युत को इन्द्र का रूप देकर, उस इंद्र को उन्होंने तीन करोड़ देवों के अधिपति के रूप में अभिषिक्त किया यज्ञ-यागों की धूम मच गयी ज्यादा पानी बरसा तो यज्ञ किया गया, पानी बिलकुल न बरसा तो भी यज्ञ किया गया दूसरों की संपत्ति का अपहरण करने के लिए प्रार्थनाएं की गयीं, सोमरस पान अधिकाधिक होने लगा

"हे इंद्र ! अनार्यों के निवास कीकट नामक जनपदों में रहने वाली गायें तुम्हें क्या दे रही हैं ? क्या वे सोमरस में मिलाने के लिए दूध दे रही हैं ? उन गायों को लाकर हमें दो कुसीद धंधे से धन बढाने वाले प्रमगंध का धन लाकर हमें दो नैचा शाखा (नीच जाति)के लोगों का धन लाकर हमें दो." (ऋग्वेद, ३-५३-१४)

वे लोग इस तरह की कामनाएं करते हुए, खूब सुरापान करते हुए ठूंस-ठूंसकर गोमांस और बकरी का मांस खाते थे इसीलिए वाल्मीकि की रामायण में सीता और राम के गोमांस भक्षण का और अयोध्या के निवासियों के सुरापान का उल्लेख मिलता है फिर महाभारत के बारे में कहना ही क्या है वैसे तो वेदों में ही ये सुस्पष्ट दृष्टिगत होते हैं

"हे राम ! कोई बेटा जिस तरह अपनी बढोंती का अनुभव करता है, उसी तरह हम भी तुम्हारा अनुभव कर रहे हैं तुम हमें दीर्घायु प्रदान करो (ऋग्वेद, ८-४८)

"अंगिरसों ने इन्द्र के लिए अत्यधिक मांसल शरीर वाले बकरे को पकाया"

"इन्द्र हमारे यज्ञ पशु वृषभों का भक्षण करें."

"हे अग्नि! बाझ और बली गायों से, बली बर्दनों से...मृगों से आराधित हुए. (ऋग्वेद, १०-२७-१७, १०-२८-८, १०-८६-१३)

देवों के नाम पर मांसभक्षण करते हुए और सुरापान करते हुए भोली-भाली जनता को बहकाने वाले लोगों का तीव्र विरोध भौतिकवादियों ने किया. जिन लोगों ने इन भौतिकवादियों के तर्कों को सुना, उनके मन में भाववादियों (आध्यात्मिकवादियों) के उपदेशों के प्रति संदेह उत्पन्न हुआ.

"किसने इन्द्र को देखा है? किसी ने भी नहीं? इसलिए हम किसकी, कैसी स्तुति करें? इन्द्र का अस्तित्व काल्पनिक है, वास्तविक नहीं." (ऋग्वेद, ८-१००-३)

इस तरह कुछ लोगों ने इन्द्रयाग का परित्याग किया. भागवत की यह कहानी ध्यान देने योग्य है कि यादवों द्वारा इंद्रयाग की तैयारी करने पर श्रीकृष्ण ने उन्हें ऐसा करने से मना किया.

इन्द्र के प्रति भक्ति के इस कमजोर पड़ने पर ही कुछ ऋषियों ने पंच-रुद्र सूक्त की रचना की.

"रुद्र मेघ में गरज पैदा करने वाला है, मेघ के उदर में रहकर ध्वनि करता हुआ उसे द्रवित करने वाला है. वह शत्रुओं को दुःखी करने वाला है." इसलिए रुद्रयाग करना श्रेयस्कर कहकर उन्होंने जनता को प्रोत्साहित किया. इन्द्र के स्थान पर उन्होंने रुद्र की सृष्टि की.

फिर कुछ लोग विष्णु की स्तुति देव रुद्र के छोटे भाई उपेंद्र के रूप में करने लगे. इसी विष्णु के चरणों से उत्पन्न गंगा के जल से मानव जीवित है. मनुष्यों के साथ समस्त जीवकोटि की भी सृष्टि उसी ने की, ऐसी कई कहानियां बनाकर उनका प्रचार किया गया.

भौतिकवादियों ने इस प्रचार का भी विरोध किया और सवाल किया— पृथ्वी, जल आदि पंचभूतों से युक्त इस सृष्टि में प्राणियों का पैदा होना, बड़ा होना और अंत में नष्ट होना सहज परिणाम के सिवा और कुछ नहीं. इस सृष्टि का मूलकर्ता कोई भगवान नहीं. यदि आप कहते हैं कि भगवान है, तो दिखाइए कि वह कहां है? बताइए कि उसने इस विश्व की सृष्टि कैसे की?

इस सवाल का सामना करने के लिए वैदिक पंडितों ने एक अच्छी कहानी गढ़ी. उन्होंने भक्तों को सिखाया कि श्रीमहाविष्णु ने क्षीर समुद्र में वट-पत्र शायी होकर अपने नाभि-कमल से ब्रह्मदेव की सृष्टि की तथा उस ब्रह्मदेव ने इस चराचर जगत की सृष्टि की.

हमारे पंडितों की ही तरह इज़ायल के याजकों ने भी कहा :

"भगवान की आत्मा जल के ऊपर विचर रही थी. .....भगवान यहोवा ने पृथ्वी की मिट्टी से मनुष्य का निर्माण करके उसकी नासिका के रंध्रों में जीववायु को फूंका तो वह जीवात्मा बना."

कुछ अन्य लोगों ने कहा—"सृष्टिकर्ता ब्रह्मदेव के शरीर के दो हिस्से हो गये. एक हिस्से से स्वयंभू मनु और दूसरे हिस्से शतरूपा नामक कन्या पैदा हुई. उनके दो पुत्र और तीन पुत्रियां पैदा हुई."

इसे देख कर जब भौतिकवादियों ने सवाल किया—"तो क्या इस आदि-मानव की कोई मा नहीं थी ? उस ब्रह्मदेव पत्नी कौन थी ? उनकी संतान कैसे पैदा हुई ?" तब उन्होंने जवाब दिया कि ब्रह्मदेव ने पहले सरस्वती की सृष्टि की और उसी को अपनी पत्नी बना लिया. (भागवत)

फिर किसी विद्वान ने यह कथा लिखकर महाभारत में जोड़ दी कि ब्रह्मदेव के दाहिने हाथ के अंगूठे से दक्ष नामक पुरुष और बायें हाथ के अंगूठे से धरणि नामक कन्या पैदा हुई. उन दोनों ने मिलकर सौ पुत्र और पचास पुत्रियों को जन्म दिया. उन पुत्रियों के गर्भों से सांप, मेंढक और पक्षियों के साथ सुर और असुर भी पैदा हुए.

याजकों ने कहा—"आदम की बगल की एक हड्डी निकालकर यहोवा ने हव्वा की सृष्टि की. आदम और हव्वा के दो पुत्र जन्मे." ओल्ड टेस्टामेंट में आगे वर्णित है—"उसके पश्चात लोत् और उसकी बेटियों से, अब्रहाम और उसकी सौतेली बहन यूदा और उसकी बहू से उत्पन्न संतानों की संख्या बढती गयी."

इसी भांति भागवत में भी वर्णित है कि श्रीयज्ञ और उसकी बहन से, कश्यप और उसकी बहन पूर्णिमा से उत्पन्न संतानें कई गुना बढती चली गयीं.

जब यहूदियों ने एक कहानी सुनायी कि संसार के सभी मानव हमारे "नोवहू" की संतानें हैं तब आर्यों ने एक दूसरी कहानी सुनायी कि समस्त मानव हमारे "मनु" की संतान हैं.

ओल्ड टेस्टामेंट में लिखा है कि संसार में पाप अत्यधिक बढ जाने पर भगवान ने उसका नाश करना चाहा, किन्तु नोवहू से प्रसन्न भगवान उसके सामने प्रकट हुए. भगवान ने नोवहू को सलाह दी कि तुम एक तिमंजिला जहाज बनाकर उसमें अपनी पत्नी और बच्चों के साथ बैठ जाओ. प्रलय आते ही भगवान ने सभी जीव-जंतुओं के एक-एक जोड़े को उस जहाज पर पहुंचा दिया और नोवहू के साथ उन सबकी भी रक्षा की. भगवान ने आशीर्वाद दिया कि इस प्रकार बचाये गये नोवहू के परिवार के द्वारा मानव जाति का विस्तार होगा. उसने यह वादा भी किया कि इसके बाद मैं फिर कभी सृष्टि का नाश नहीं करूंगा. इतना ही नहीं इसकी निशानी के रूप में उसने अपने धनुष (इंद्रधनुष) को मेघों में रखा. उस प्रकार बचाये गये पशु-पक्षी आदि से भूमण्डल पर फिर से समस्त जीवकोटि की वृद्धि हुई.

इधर शतपथ ब्राह्मण ग्रंथ में एक कहानी है कि जलप्रलय में मत्स्य अवतार ने सिर्फ मनु को नाव पर चढ़ाकर बचाया. तब मनु ने जो पाक-

यज्ञ किया उसमें से एक स्त्री उत्पन्न हुई. उन दोनों की संतान ही क्रमश: विस्तृत हुई. मनु की यह कथा अथर्ववेद में भी है, महाभारत मे भी. पारसियों के धर्मग्रंथ वेंदिदाद में जलप्रलय की बात नहीं है, किन्तु हिमप्रलय की बात है. उसमें लिखा गया कि "अहुर मज्दा" नामक देव ने हिमप्रलय से "इमा" नामक राजा को बचाया.

भागवत में उल्लेख है कि द्राविड राजा सत्यव्रत जब सन्यास लेकर तपस्या कर रहा था, तब एक छोटी मछली के रूप में भगवान उसके सामने प्रकट हुए. उसने उस राजा को चेतावनी दी कि जलप्रलय सन्निकट है जलप्रलय के समय सत्यव्रत के साथ सप्तर्षियों तथा औषधियों को जहाज पर चढ़ाकर, स्वयं मत्स्य अवतार ग्रहण करके जहाज की रक्षा करते हुए भगवान ने उन्हें बचाया. तब उस तरह जो जीवित बच रहे उनके द्वारा फिर इस भूमंडल पर समस्त जीवकोटि तथा औषधियों की वृद्धि हुई

अविश्वसनीय कहानियां

भगवान का मत्स्य अवतार ग्रहण करके सत्यव्रत की रक्षा करना, आदम की बगल की हड्डी से हव्वा की सृष्टि करना, ब्रह्मदेव के बायें हाथ से धरणि का जन्म होना जैसी दंत कथाओं को विकासवादियों ने ठुकरा दिया. मानव विकास के परिणाम क्रम में आयी हुई दस अवस्थाओं को उन्होंने स्पष्ट किया. सबसे पहले प्राणिकोटि का जन्म समुद्र जल में हुआ. इस प्रकार उत्पन्न प्राणि समुदाय सिर्फ समुद्र जल में विचर सकता था, अत. उसे "मत्स्य दशा" नाम दिया गया. उसके उपरांत कुछ जीवों के समुद्र तट पर भी जी सकने की दशा को "कूर्मदशा" कहा गया. उस जीवकोटि के पशु, पक्षी, सर्प इत्यादि के रूप में परिणत होने की दशा को "वराह दशा" कहा गया मृग रूप से मानव रूप के विकास की दशा "नरसिंह" दशा कहलायी आदि मानव के आविर्भाव की उस दशा को "वामन दशा" कहा गया उसके पश्चात् जंगली दशा, पशुपालन दशा, कृषि दशा, तथा वैज्ञानिक दशा का उल्लेख किया गया इसी विकासक्रम से मानव वर्तमान अवस्था में पहुंचा

इस प्रकार विकासवादियों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत जनता तक न पहुंचे तथा गहरे खड्डे में दफना दिये जायें, इसके लिए आध्यात्मवादियों ने जी-तोड कोशिश की मत्स्य, कूर्म, वराह आदि पुराणों की रचना करके, दस-अवतारों की कल्पना करके उन्होंने इस प्रकार का विस्तृत प्रचार किया कि वामन, परशुराम, बलराम आदि विष्णु के अवतार हैं. राम-लक्ष्मण, रावण-कुंभकर्ण एवं कुरु-पांडवों के रूप में जन्मों के अतिरिक्त सवा लाख जन्मों के साथ अवतार सिद्धांत जोडकर उन्होंने अनगिनत कहानियां बनायी इनमें कई महाभारत में हैं, कुछ रामायण

में फिर भागवत की बात ही क्या हैं ? उसमें ऐसे अनेक जन्मों की कहानियां देखने को मिलती हैं, जिन पर विश्वास कर सकना संभव नहीं

पुराणों की कहानिया चाहे जैसी भी हों, यह बात सच है कि आदिमानव सगे सम्बंधों का विवेक नही रखते थे. आदिमानवों में ही नहीं प्रत्युत कबीलों में भी सगे सम्बन्धों के यौन-व्यवहारों के उदाहरण, स्वेच्छा-संभोग की अनुमति देने के उदाहरण अनेक मिलते हैं, बहुत बाद तक सगे सम्बन्धों का ख्याल न रखे जाने के कई प्रमाण मिलते हैं यूनान देश (ग्रीस) में हिस्थास्पस ने अपनी बहन से शादी कर ली यह तथ्य विश्वविख्यात हैं कि मिस् देश की रानी क्लियोपेट्रा के पति उसके भाई ही थे अपने कुल को ही श्रेष्ठ मानने के कारण भाई-बहनों के बीच विवाह हुए. इसीलिए एक रामकथा में यह कहा गया हैं कि राम-सीता भाई-बहन थे. इन नग्न सत्यों को जो स्वीकार नही करना चाहते थे, उन विद्वानों ने कितनी ही झूठी कहानियां गढी

उन्होंने लिखा कि बालि इन्द्र का बेटा था और सुग्रीव, सूर्य का इतना ही नही, उन्होंने कहा कि गौतम की पत्नी अहिल्या से बालि और सुग्रीव पैदा हुए

एक और कहानी बनायी गयी कि शिव का वीर्य भूमि पर स्खलित हो रहा था तो वायु ने तुरन्त उसे उडा अजनी देवी के गर्भ में रख दिया, उसी से हनुमान का जन्म हुआ

कुछ और कहानिया भी प्रचलित हुई कि सीता जमीन से पैदा हुई, मत्स्य वल्लभ मछली के पेट से उत्पन्न हुए भीष्म का गगा के गर्भ से, द्रोण का कुम्भ से, और द्रौपदी का होमकुड से जन्म हुआ. शक, यवन, पौंड्र, पुलिद, द्रविड, सिहल, शबर और बर्बर वशिष्ट की होमधेनु की पूछ और उसके मल-मूत्रों से पैदा हुए इन्हें सच साबित करने के लिए भी कहानिया गढी गयी जिनके पिता के बारे में कोई जानकारी न थी, उन सबको देवों की सूची में जोड दिया गया इस तरह की कहानिया पुराणों मे दर्ज हैं

ऐसी दतकथाए रामायण में थोडी-बहुत और महाभारत में बहुत अधिक मिलती हैं इसीलिए इस आलोचना का अवसर मिला कि रामायण व्याभिचार की कहानी हैं तो महाभारत सफेद झूठ की इतना ही नही, इन कथाओं से देवों की सख्या बढती गयी देवों की पूजा के साथ कुछ दूसरे प्रकार की पूजाए भी आरम्भ हुई.

जैसे-जैसे कबीलों का विस्तार होने लगा, वैसे-वैसे उन्होंने अपनी पहचान के लिए नाग, वानर, गरुड आदि भाति-भाति के नाम रख लिये अपनी-अपनी विशाल ध्वजाओं के ऊपर उन चिह्नों को चिपका लिया. इसलिए उनके लिए वानर जाति, गरुड जाति, नाग जाति जैसे नाम सुस्थिर हो गये अतः कबीलों के लोगों को वानर, नाग, गरुड कहकर बुलाने की प्रथा चल पड़ी जिस कबीले के लोगों ने जिस पशु-पक्षी आदि पर अपना

नाम रखा, वे उसी पशु-पक्षी को पवित्र मान उसकी पूजा करने लग गये. आज भी केरल के "कादार" कबीले के लोग भैंस की पूजा करते हैं, उसका खून छूआ तो वे समझते हैं कि बस ! अब पाप का घडा फूट जायगा

वीर पूजा

जो हाथ में तलवार लेकर लोगों की रक्षा करते हैं, उनकी पूजा होना स्वाभाविक ही हैं किन्तु जो दूसरों की संपदा ही नहीं प्रत्युत उनकी कन्याओं की इज्जत भी लूटते थे, ऐसे लोगों को भी वीर कहकर उनकी स्तुति की जाती थी इसी कारण विकसित जातियों का पिछड़ी जातियों के ऊपर हमले करना धर्म-सम्मत समझा गया अत युद्ध में विजयी वीर पराजित जातियों की संपदा लूटते थे, उनकी कन्याओं को रखैल बना लेते थे और जनता से प्रशंसाएं तथा आदर-सत्कार पाकर सीनाजोरी करते थे उनके यहां लूटमार की संपत्ति के साथ गुलाम भी रहते थे, बच्चे पैदा करने के लिए कई-कई पत्नियों के अतिरिक्त रखैल भी रहती थी. उनके मरने के पश्चात भी उन वीर योद्धाओं की पूजा जारी रहती थी इस वजह से जो कोई तलवार उठाकर लड सकते थे, वे सब अपने को क्षत्रिय और कुलीन घोषित कर लेते थे

अगर हम अनुशीलन करें कि ये कुलीन कौन हैं ? क्या सचमुच इनके वंश उन्नत हैं ? क्या वास्तव में इनके जन्म पवित्र हैं ? तो पता लगेगा कि सब कुछ गोरख-धंधा हैं उन दिनों में चाहें मालिक हों या गुलाम, चाहें औरस पुत्र हो कि क्षेत्रज, जो भी हो, अगर वे बल पराक्रम का प्रदर्शन करते थे तो उनको वीर क्षत्रिय माना जाता था

यूनान (ग्रीस) देशवासी "तूक्रोस" दासी पुत्र था तो क्या हुआ ? ट्राय नगर पर घेरा डाले हुए यूनानी सैनिकों में सबसे अव्वल दर्जे के तीरंदाज और बहादुर के रूप में उसको मान्यता मिल गयी सांड की तरह तगड़ा आदमी दिखाई पड़े तो स्पार्टन जाति के लोग अपनी स्त्रियों को उसके साथ लैंगिक संबंध के लिए भेजते थे अथीनियन स्त्रियां स्पार्टन पुरुषों को संभोग के लिए निमंत्रित करती थी मतलब यह कि किसी न किसी तरह सुदृढ शरीर वाले बच्चों को वे पाना चाहती थी उसके उपरांत यूनानियों ने कई जातियों तथा देशों को जीता

महाभारत में हमको क्या दृष्टिगत होता हैं? पांडु राजा ने अपनी पत्नियों को स्वयं प्रोत्साहित किया, अतएव कुन्ती और माद्री ने जाने किस-किसको संतान प्राप्ति के लिए निमंत्रित किया इसके फलस्वरूप पंच पांडव पैदा हुए राक्षस कन्या हिडिम्बा से विवाह कर लेने के लिए धर्मराज ने भीम को प्रोत्साहित किया. उनसे घटोत्कच का जन्म हुआ नागकन्या उलूपि से अर्जुन ने विवाह कर लिया और उससे इरावत नामक पुत्र को पाया. फिर उसने चित्रांगदा से विवाहित होकर बभ्रुवाहन को और सुभद्रा से पाणिग्रहण करके अभिमन्यु को जन्म दिया इसी प्रकार धर्मराज, नकुल तथा

सहदेव ने भी पुत्र पैदा किये. इनके अतिरिक्त पाचों पांडव की पत्नी द्रौपदी से उत्पन्न पुत्र तो थे ही इस तरह अनेक स्त्रियों को अपनी पत्निया बना लेने से पाडवों को पांचाल, विराट तथा यादव वीरों की सहायता के अतिरिक्त कितनी ही अन्य जातियों की मदद मिली उन्होंने कौरवों पर विजय प्राप्त की.

कहा गया कि कर्ण के पैदा होते ही उसकी माता कुन्ती ने उसे एक संदूक में रखकर गगा नदी में बहा दिया अतिरथ नामक सूत को वह सन्दूक मिला. उस सन्दूक में पड़े बच्चे को पाल-पोसकर उसने बडा किया इस प्रकार जन्म पाकर, बड़ा बना हुआ कर्ण चाहे कानीन ही क्यों न हो, अपने अद्वितीय पराक्रम एव दानशीलता के कारण दानवीर-शूरवीर कर्ण के नाम से विख्यात हो गया.

लेवि वंश की गुलाम स्त्री के गर्भ से एक खूबसूरत बच्चा पैदा हुआ अपने मालिक एंगुप्तों की आज्ञा के अनुसार उसे उस बच्चे को फेंक देना चाहिए था, नही तो उसे मृत्युदण्ड मिलना अनिवार्य था. तो भी उस स्त्री से उस बच्चे को, मातृ प्रेम के कारण, नदी में फेंका न गया उसने उसे एक छोटे-से सन्दूक मे रखकर नदी-तट की घास-फूस में छिपा दिया नदी स्नान के निमित्त आयी हुई राजकुमारी ने घास-फूस मे से बच्चे के रोने की आवाज सुनी तो उसने अपनी दासियों से वह पेटी मगवाकर, उसे खोलकर देखा उसमें पडे बच्चे को देख उसने अपनी दासियों को उसे पालने-पोसने का आदेश दिया यह बालक ही बडा होकर मोसे के नाम से जाना गया यही वह मोसे था जिसने एंगुप्तो के यहा गुलामों के रूप मे जीने वाली इज़ायली जनता को विमुक्त करके विशेष कीर्ति पायी

ऐसे कितने ही ख्याति प्राप्त वीर हुए, इसी कारण तो महाभारत में यह कहा गया कि "शूर-वीरों के जन्म, सुरों के जन्म, तथा नदियों के उद्गम जाने जा सकते हैं क्या? इतिहास साक्षी है कि ऐसे वीरों की मृत्यु पर उनके सम्मान में जगह-जगह पर पिरामिड, मकबरे और समाधिया निर्मित हुई

फिर भी इनमें कर्ण, एकलव्य, मोसे जैसे योद्धा कम थे क्रूर, रक्तपिपासु और भोगविलासी वीरों की सख्या अधिक थी इनमें कुछ तो सेनापति बने कालक्रम में कुछ सेनापति राजा चुने गये परन्तु कुछ समय के बाद राजा-पद पाना वश परम्परागत अधिकार बन गया तब से जनता की पचायत का शासन खत्म हुआ और निरकुश प्रशासन के नीचे प्रजा दब गयी

ऐसी कई कहानियां प्रचलित हुई कि अमुक राजा वरदान के प्रभाव में पैदा हुआ, अमुक यज्ञ के होमकुण्ड से उत्पन्न हुआ, तथा अमुक-अमुक राजा ने वायु, वरुण, इन्द्र आदि से जन्म प्राप्त किया. इससे भी संतुष्ट न होकर किसी ने कहा कि हमारा वंश चद्रवंश है तो किसी ने कहा कि हमारा वश सूर्यवश है किसी का अग्निवश था तो किसी का पद्मवश. इस तरह हर किसी ने अपने-अपने बडप्पन की डींगें मारी

तब ब्राह्मण उठ खड़े हुए और कहने लगे कि यदि क्षत्रिय सूर्यवंशी तथा चंद्रवंशी हैं तो हम भी ब्रह्मदेव के वंशज हैं. फिर दानवों का दावा था कि कश्यप ब्रह्म से हमारे पैदा होने के बाद ही देव पैदा हुए. हर किसी ने स्वयं ही कहानियां बना लीं ताकि लोगों में विश्वास जमे कि इनका कहना अक्षरशः सत्य है. ऐसी कहानियों से उन्होंने **रामायण** और **महाभारत** को भर दिया.

कहा जा सकता है कि जिस युग में लोग एक दूसरे से बढ़कर वीरता की डींगें मारते हुए कहानियां गढ़ रहे थे, उसी युग में वाल्मीकि की **रामायण** और बाद में **महाभारत** ने जन्म पाया. इसी प्रकार यूनान में **इलियड** तथा **ओडेसी** काव्यों का आविर्भाव हुआ. अतएव इन सब काव्यों में कुछ समानताएं मिलती हैं.

जिस प्रकार यह विदित नहीं होता कि **रामायण** के प्रणेता वाल्मीकि, तथा **महाभारत** के व्याख्याता वैशंपायन किस काल के थे, उसी प्रकार यह ज्ञात नहीं होता कि **इलियड** और **ओडेसी** काव्यों के सृष्टा कब हुए. होमर किस जमाने का था. कुछ कहते हैं कि वह ई. पू. ८५० वर्ष में था तो कुछ मानते हैं कि वह ई. पू. १२०० वर्ष में हुआ. कुछ लोग तो यहां तक पूछते हैं कि क्या सचमुच होमर नामक महाकवि का अस्तित्व था ?

जिस तरह हमारे **रामायण** का गान कुशीलवों ने किया उसी तरह गायकों ने होमर के काव्यों का गान करके लोगों को सुनाया. जैसे हमारी **रामायण** तथा **महाभारत** अनेक पंडितों के हाथों में पड़कर विस्तार पाते गए उसी तरह पिसिस्ट्राटस, हिस्पार्कस, हिप्पियास जैसे लोगों के हाथों में पड़कर होमर के काव्य व्यापक बने.

यदि वाल्मीकि ने कहा कि रावण के सीताहरण के कारण राम-रावण संग्राम हुआ तो होमर ने कहा कि पारिस द्वारा हेलेन को उठा ले जाने के कारण ट्राजन युद्ध हुआ.

महाभारत के भीम की तरह यूनानी पुराणों में हमको हर्क्यूलिस दिखाई देता है. **महाभारत** के कर्ण तथा **इलियड** काव्य के अकिलेस में अनेक समानताएं मिलती हैं. परन्तु अकिलेस सिर्फ वीर की तरह दिखाई देता है तो कर्ण वीर ही नहीं, अपितु दानवीर के रूप में भी दृष्टिगत होता है.

एंगेल्स ने अपना विचार यूं व्यक्त किया कि प्रकृति-आराधक प्राचीन आर्य-संस्कृति से यूनानी पुराणों की सैकड़ों कहानियां आविर्भूत हुईं. दोनों की पुराण गाथाओं में समानताएं होना स्वाभाविक ही है. इसी तरह हमारे पुराणों की कथाओं तथा **ओल्ड टेस्टामेंट** की कहानियों में समानताएं पायी जाती हैं. टैग्रिस व यूफ्रेटीस नदियों की पूर्वी और उत्तरी दिशाओं में आर्यों के तथा पश्चिमी दिशा में सेमेटिक प्रजा के फैले रहने से और दोनों के बीच में कुछ आदान-प्रदान होने से उनमें कुछ समानताएं मिलती हैं. दूसरी खास बात यह है कि पारसियों की "अवस्था" और आर्यों के ऋग्वेद में सम्बन्ध है. कहा जा सकता है कि दोनों के पूर्वज जब आज के ईरान प्रदेश में थे, तब यह सम्बन्ध बना था.

उस युग में संयुक्त परिवार के मालिक यथासंभव अधिकाधिक स्त्रियों को अपनी पत्नियां बना लेते थे. जिनके पास ज्यादा संपत्ति नहीं थी, केवल वे ही एक पत्नी से संतुष्ट होकर रह जाते थे.

उस अवस्था में सभी पुरुषों के लिए पत्नियां मिलना मुश्किल था. इसलिए गरीब परिवारों में सारे भाई मिलकर एक ही स्त्री से शादी कर लेते थे.

"दस प्रचेतासों ने मिलकर मरिष नामक स्त्री से विवाह कर लिया" (भागवत).

"वितंतु" नाम राजर्षि के पुत्र साल्वेय, शूरसेन आदि ने मिलकर "अजित" नामक कन्या से शादी की.

बहुपति एवं बहुपत्नी प्रथा से सम्बन्धित कितनी ही कहानियां ग्रीक पुराणों में हैं. जर्मनों के बीच में भी बहुपति प्रथा प्रचलित थी. सीजर के लिखे नोट्स में दर्ज था कि दस-बारह ब्रिटन मिलकर एक ही स्त्री से शादी कर लेते थे. यह भी जिन लोगों के लिए संभव न होता था वे देव मंदिरों में रहने वाली दासियों के पास जाते थे अथवा प्रेम मंदिरों में रहने वाली वेश्याओं के पास जाते थे.

पुरोहितों को जब चाहे तब कन्याएं मिल जाया करती थीं. ऋषि राज कन्याओं को पा सकते थे. महाभारत में यह बताने वाली कहानियां हैं कि च्यवन ने सुकन्या से, अगस्त्य ने लोपामुद्रा से, ऋचिक ने सत्यवती से विवाह किया. दूसरी ओर मुनि कन्याओं ने राजाओं को वर लिया. शकुन्तला ने दुष्यंत को वरा. देवयानि ने ययाति को वरा. जब एक मुनिकन्या ने ध्रुव को वरा तब उससे शातवाहन पैदा हुआ.

विवाह कर अपना घर न बसाने वाले परिव्राजक गृहस्थों के अतिथि-सत्कार से फायदा उठाते थे. जिस घर में अनेक स्त्रियां होती थीं, उस घर में जाकर वे भरपेट भोजन कर मालिक द्वारा निश्चित स्त्री के साथ शयन-सुख का अनुभव करते थे. एक ऋषि दूसरे ऋषि की पत्नी की मांग करता था. भागवत में लिखा गया है कि बृहस्पति ने उचथ्य की पत्नी ममता को पाया और उससे भारद्वाज को उत्पन्न किया. महाभारत में उद्दालक नाम के मुनि की पत्नी के प्रति एक वृद्ध ब्राह्मण की कामना का उल्लेख मिलता है. ऐसी कितनी ही दूसरी कहानियां भी हैं.

आज भी संसार के कुछ देशों में इस प्रकार के अतिथि-सत्कार की प्रथाएं हैं. आस्ट्रेलिया की आदिवासी जातियों में तथा हमारे देश के दो-तीन जंगली कबीलों में ये प्रथाएं अब भी चालू हैं.

उस समय पुरुष की कामना की पूर्ति करना स्त्री की शिष्टता माना जाता था. इसी कारण यह कहा जाता था कि पुरुष की कामना की पूर्ति न करने वाली स्त्री की निष्कृति नहीं होती. वरदराज रामायण में साहसपूर्वक यह लिखा गया है कि अहल्या ने इंद्र की कामना की पूर्ति की. यूनानी पुराणों

से प्रतीत होता है कि स्पर्टान स्त्रियों ने इस शिष्टता का पालन किया था इस तरह जैसे स्त्री पुरुष की कामना की पूर्ति करती थी, वैसे ही स्त्री की कामना की पूर्ति करना मनुष्य की शिष्टता समझा जाता था तारा और चन्द्र की कहानी ऐसी ही शिष्टता से सम्बंधित थी

बृहस्पति की पत्नी तारा ने चद्र से प्रेम किया. चद्र ने उसे स्वीकार किया फिर दोनों मिलकर कही एकात प्रदेश में चले गये उसके पश्चात उन्हें एक पुत्र प्राप्त हुआ. यह समाचार मिलने पर बृहस्पति तुरन्त उसे देखने पहुंचा बच्चा बहुत सुन्दर था इसलिए उसे देखकर बृहस्पति खुशी से फूला न समाया. उसने कहा कि मेरी पत्नी से उत्पन्न पुत्र पर मेरा ही हक है इसलिए इसे मैं ले जाऊगा चद्र ने कहा कि ऐसा नही हो सकता तारा भी जाने के लिए राजी नही हुई तब बेचारा बृहस्पति क्रोध से आपे से बाहर हो गया अपने बड़े भाई की पत्नी, जो पूर्ण गर्भवती थी, से स्वय बलात्कार करने की और दीर्घतम की दोनों आंखें फोड़ देने की बात वह भूल गया चद्र को सबक सिखाने की धमकी देते हुए वह सारे देवगण को इकट्ठा कर लाया तुरन्त बृहस्पति को सबक सिखाने की घोषणा करते हुए शुक्राचार्य सारी राक्षस सेना के साथ चद्र से आ मिले दोनों के बीच घोर संग्राम हुआ उसमें चद्र ने सारे देवों के छक्के छुड़ा दिये अत लाचार होकर बृहस्पति के पिता अगिरस ने ब्रह्मा से विनती की उसने दोनों पक्षों में समझौता कराकर तारा को बृहस्पति को सौंप दिया उसके पुत्र को बुध नाम देकर उसने उसे चद्र के सुपुर्द किया इससे चद्र की शिष्टता का पालन पूरा हुआ परन्तु ब्रह्मदेव के "दूध का दूध और पानी का पानी" वाले इन्साफ से बृहस्पति ने क्षत्रज बुध पर अपना हक गवा दिया.

तारा तथा चद्र की कहानी से भिन्न रूप में उर्वशी और अर्जुन की कहानी है जिस प्रकार तारा की कामना की पूर्ति चद्र ने की, उस प्रकार उर्वशी की कामना को अर्जुन ने पूरा नही किया अर्जुन ने उर्वशी को यह कह कर उसकी कामना पूर्ति से इन्कार किया कि वह वशकर्ता पुरुष की पत्नी है और उसके पिता इन्द्र की सेविका इसलिए तुम मेरी मा हुई. अतः तुम्हारा मेरे प्रति कामना रखना उचित नही ये वचन सुनकर उर्वशी आगबबूला हो गयी उसने अर्जुन को शाप दे डाला, "तुमने मेरी इच्छा पूर्ति न की, अत तुम मर्त्यलोक में जाकर, मान विवर्जित होकर, मानिनियों के मध्य नपुसक बने रहो" (महाभारत)

इस तरह के प्रसग आजकल धर्मसम्मत नही और कानून के अनुकूल भी नहीं. परन्तु यह निर्विवाद है कि किसी समय ये धर्मसम्मत माने जाते थे. काल-क्रम में समाज में आए परिवर्तन इसका कारण है.

"अतिथि के रूप में आये हुए एक ब्राह्मण ने उद्दालक नामक एक मुनि की पत्नी की इच्छा की तो उद्दालक का पुत्र श्वेतकेतु अत्यंत क्रुद्ध हो उठा. उसने नियम बनाया कि स्त्रियों को पराये पुरुषों के साथ भोग नहीं करना चाहिए. उसने घोषणा की कि जो इस नियम का उल्लंघन करेगा, उसे

घोर पाप लगेगा. इसलिए तब से स्त्रियों के लिए पराये पुरुष के साथ समागम धर्म-विरुद्ध हो गया." (महाभारत)

आजकल के कानून पति और पत्नी दोनों में किसी को भी व्यभिचार की आज्ञा नहीं देते. फिर भी गुप्त रूप से स्त्री-पुरुषों के बीच ऐसा व्यवहार जारी है. अतिथि-सत्कार और देवर-न्याय जैसी प्रथाएं किसी न किसी जगह, किसी न किसी कबीले में आज भी प्रचलित हैं. बहु-पत्नीत्व तथा बहु-पतित्व हमारे देश में आज भी प्रचलित हैं. इस्लाम मजहब के अनुसार एक पुरुष चार स्त्रियों से शादी कर ले तो भी गलत नहीं माना जाता. हिमालय के आंचल में जीने वाले कुछ कबीलों के लोग आज भी बहु-पतित्व को गलत नहीं कहते.

महाभारत काल की कुन्ती ने इस उद्देश्य से पांचों पांडवों को द्रौपदी से विवाह कर लेने का आदेश दिया कि उसके तीन पुत्र धर्मराज, भीम और अर्जुन तथा उसकी सौत माद्री के दो पुत्र नकुल और सहदेव सदा मिलजुल कर रहें. इसका कारण उसका यह डर ही था कि पांडवों में आपसी फूट पड़ गयी तो दुर्योधन का षड्यंत्र सफल होगा और उन्हें राज्य न मिल सकेगा.

जो पंडित इसे सीधे ढंग से बताना नहीं चाहते थे, उन्होंने इसे शाप तथा वरदान की कहानी के साथ जोड़ दिया. इसे डर से कि बहु-पतित्व को स्वीकार किया गया तो पुरुषों का महत्व घट जायगा और समाज कलुषित हो जायगा, एक कहानी गढ़ी गयी. उसमें यह कहा गया कि द्रौपदी यज्ञकुंड से पैदा हुई. इस प्रकार पैदा होने के पहले पूर्व जन्म में काम-वासना की तृप्ति न होने से उसने भगवान पशुपति को ध्यान में रखकर तपस्या की. तब ज्यों ही भगवान प्रत्यक्ष हुए, त्यों ही उसने जल्दबाजी में "पति" "पति" कहकर पांच बार वरदान मांगा. इसके फलस्वरूप उसको पांच पति मिले.

इस प्रकार के वरदानों के बिना ही हिमाचल प्रदेशों में कुछ कन्याएं अब भी चार-पांच पतियों से विवाह कर रही हैं. पति के लिए वे तपस्या भी नहीं कर रही हैं और पति, पति कहकर बहुपतियों के लिए वरदान भी नहीं मांग रही हैं. बात इतनी है कि वहां की आवश्यकता के अनुसार ऐसे विवाह हो रहे हैं.

हिमाचल प्रदेश की कुछ जगहों में नित्य जीवन की आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए पर्याप्त अवसर नहीं है. भूमि का अधिकांश कंकड़-पत्थरों से और बर्फ से भरा रहता है. वहां यदि आबादी बहुत अधिक बढ़ जाय तो जरूरी खाना और कपड़ा मिलना मुश्किल हो जाय. सारे भाई अलग-अलग स्त्रियों से विवाह करके अपना एक घर बसा लें तो जीवन के आधारभूत खेत और पशुगण बंट जाते हैं. संतान बढ़ती है. जीवन दूभर हो जाता है. इसलिए सभी भाई मिलकर एक ही स्त्री से शादी कर लेते हैं. फिर उससे पैदा हुई सभी संतानें मिलकर एक ही स्त्री

से विवाह कर लेते हैं इसलिए पीढ़ी-दर-पीढ़ी घर, खेत, पशु, और औजार अविभाजित रहते हैं. आबादी अधिक नहीं बढ़ती, जीवन व्यतीत करना सुगम होता है इसी वजह से वहां बहु-पतित्व की प्रथा धर्म-सम्मत मानी जाती है

ऐसे प्रदेशों में पुराने जमाने में अधिक संख्या में कन्याओं का होना अच्छा नहीं समझा जाता था एक-दो से अधिक कन्याओं का जन्म होने पर उनके मां-बाप उनका गला घोंट कर मार डालते थे ज्यादा कन्याएं होने पर उनकी शादियां करना मुश्किल था उनका पालन-पोषण करना भी दुश्वार था इसके अतिरिक्त यह भय भी रहता था कि बलवान समुदाय हमला करके उन कन्याओं को जबर्दस्ती बंदी बना सकते हैं इसी वजह से वे अपनी कन्याओं को मार डालते थे किन्तु आजकल परि-स्थितियां बदल गयी हैं अविवाहित कन्याएं भी मेहनत-मजदूरी करके अपना जीवन-निर्वाह कर लेती हैं

जिन लोगों ने स्वेच्छा संभोग, अतिथि-सत्कार जैसी बातों को प्रति-बिंबित करने वाली कहानियों को ज्यों की त्यों रहने देना अच्छा न समझा, उन्होंने उनके साथ शाप तथा वरदानों की कहानियां जोड़ दीं कुछ लोगों ने उनकी आलोचना करते हुए नीति की शिक्षा देने वाली कहानियां सुनायीं इनके साथ-साथ ब्राह्मण एवं क्षत्रिय वर्गों के बीच चली स्पर्धा में कई कहानियां निकलीं उस समय रामायण और महाभारत की कथाओं को प्राधान्य मिला अतः हर एक ने अपने बड़प्पन का प्रचार करने के लिए खुद ही अपनी-अपनी कहानियों को उनमें जोड़ दिया इससे उन काव्यों का विस्तार हुआ

पुराण संस्कृत में लिखे गये तो बौद्धों की जातक कथाएं आम जनता की समझ में आने वाली पाली भाषा में लिखी गयीं जैन गाथाएं अर्ध-मागधी में लिखी गयीं. गुणाढ्य ने अपनी बृहत्कथा को पैशाची भाषा में लिखा तो हाल की गाथा-सप्तशती प्राकृत में लिखी गयी है

बृहत्कथा संस्कृत में अनूदित हुई इसकी कथाओं के आधार पर रूपक लिखे गये हाल की गाथा-सप्तशति का भी संस्कृत में अनुवाद हुआ इसकी सात सौ गाथाएं ललित शृंगार के भंडार हैं

इनके साथ भट्टि-विक्रमार्क की कहानियां, सर्व साधारण लेखकों की विविध कथाएं तथा लघुकथाएं इत्यादि कितनी ही कहानियां लिखी गयीं

इसी प्रकार की कहानियां हैं अरेबियन नाइट्स की कहानियां हर किसी देश में ऐसी कहानियां प्रचलित हैं. इनमें कुछ का आदान-प्रदान भी हुआ, फिर भी रामायण तथा महाभारत की तरह व्यापक ख्याति सपन्न कहानियां बहुत कम हैं

हां एक बात तो सच है, निस्सन्देह रामायण या महाभारत, अथवा यूनानी महाकवि होमर के लिखे काव्य, उन कालों में प्रचलित कहानियों की ही देन हैं.

कथाओं के आधार पर काव्य बने

आज कोई कहानी चुनकर सिनेमा का निर्माण किया जाता है. इसी प्रकार किसी कहानी को आधार बनाकर विगत काल में काव्यों का सृजन किया गया. भास, कालिदास आदि महाकवियों की अधिकांश रचनाएं इसी प्रकार प्रणीत हुईं. समाज के गुण-दोषों को तथा जनता की आशा-आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करने वाली कहानियों की आज कोई कमी नहीं है. पत्र-पत्रिकाओं में तरह-तरह की कहानियों का प्रकाशन हो रहा है. श्रोता आकाशवाणी द्वारा प्रसारित होने वाली कहानियों को उत्सुकता से सुन रहे हैं, सिनेमा तथा नाटकों को धक्का-मुक्की करके देख रहे हैं, फिर भी लोक कथाओं का महत्व कम नहीं हुआ है. इसके आधार पर हम यह कल्पना कर सकते हैं कि जिन दिनों पत्र-पत्रिकाएं न थीं, सिनेमा तथा आकाशवाणी के प्रसारण नहीं थे, अक्षरों का आविष्कार ही नहीं हुआ था, उन दिनों इन कहानियों की कितनी महत्ता रही होगी और किसी के द्वारा कहानियों के सुनाये जाने पर लोग कितनी तत्परता से इन्हें सुनते होंगे.

इसके अतिरिक्त उन दिनों रामकथा का एक विशिष्ट स्थान था. आर्यों के पशुपालन की दशा में उत्पन्न होकर जो रामकथा काल के अनुसार बढ़ती गयी, उसके अत्यधिक लोकप्रिय होने का मुख्य कारण यह है. यह संदेश उद्घोषित करने के लिए वह काव्य अत्यंत उपयुक्त था कि भाई-भाई आपस में मिल-जुलकर रहें तो सुख प्राप्त होगा, नहीं तो गुलामी में रहना पड़ेगा.

अतएव वाल्मीकि ने रामकथा को अपनी काव्य-वास्तु के रूप में स्वीकार किया. वेदों में जहां-तहां पाये जाने वाले "अनुष्टुप्" छंद को संवार-सुधार कर मंजी हुई शैली में उन्होंने रामायण की सृष्टि की. इसे उन्होंने स्वयं तो गाया ही, वीरगाथाएं गाने वाले चारणों अथवा भाटों को भी सिखाया. अन्यथा यह महाकाव्य हमें उपलब्ध नहीं होता, क्योंकि उन दिनों किसी काव्य को लिपिबद्ध करने के लिए अर्थात् किसी एक पत्र पर लिख रखने के लिए, लिपि का अभाव था. अतएव सब श्लोकों को कंठस्थ करना पड़ता था. एक नहीं—दस नहीं—हजारों श्लोकों को एक-एक करके कंठस्थ करते हुए, फिर अन्य श्लोकों की रचना करते हुए काव्य सृष्टि करने का काल था वह. इसी कारण वाल्मीकि ने अपने काव्य को स्वयं गाने के अलावा अपने शिष्यों को भी उसे गाने की शिक्षा दी.

आजकल जिस प्रकार हरिकथा का गान करने वालों को "हरिदास"

कहा जाता है, उसी प्रकार उन दिनों में वीर गाथाएं गाने वालों को "कुशीलव" कहकर पुकारते थे. वाल्मीकि महर्षि को भी रामायण गान करने से "कुशीलव" नाम मिला. वाल्मीकि ने रामायण महाकाव्य का गान किया तो उग्रश्रव, वैशंपायन तथा संजय ने महाभारत की गाथाएं सुनायीं ऐसी गाथाएं दूसरे देशों के पुराणों में भी उपलब्ध हैं. हमारे रामायण तथा महाभारत ग्रंथों की मूल कथाओं जैसी कथाएं ईसाइयों के ओल्ड-टेस्टामेंट में भी मिलती हैं

"राम" नामधारी व्यक्ति यूरोप तथा एशिया के आर्यों में ही नहीं, सेमेटिक और लैटिन भाषाभाषी जनता में भी थे "रामास्" नाम के तीन राजाओं ने मिश्र देश में शासन किया. यहूदियों के गावों में कुछ के तो "रामा" नाम थे यूदा के वंश में "रामु", "आरामु", "येहोरामु" नाम के व्यक्ति थे. अब्राहाम का असली नाम "अब्रामु" था इज्रायल के राजा बयेषा ने "रामा" नामक नगर का निर्माण करवाया था आज के दमास्कस नगर के प्रदेश का नाम किसी जमाने में "आरामदेश" था.

रामलोव, कुरूलोव जैसे नाम वाले आज भी सोवियत संघ में मौजूद हैं. पेरू देश के इंका कबीले के लोग "रामसीत्वा" नामक त्यौहार मनाते हैं. उनकी स्त्रियां साड़ियां पहनती हैं. इस विषय पर अनुसंधान हुए कि इस "इंका" कबीले के लोगों का, आर्यों के साथ कोई संबंध था या नहीं ? इनके फलस्वरूप यह कहा जाता है कि इस "इंका" कबीले के लोग दक्षिण पूर्व एशिया के देशों से प्रशांत महासागर से होकर पेरू देश में पहुंचे थे.

लैटिन कबीलों में भी यह नाम प्रचलित था ई.पू. आठवीं सदी में रोम नगर को बसाने के लिए जिस व्यक्ति ने शिलान्यास किया था, वह "रामुलस" नामक चरवाहा था उसी के नाम पर इस नगर का नाम "रोम" पड़ा

सेमेटिक कबीलों के साहित्य में, अथवा लैटिन कबीलों के साहित्य में रामकथा तो नहीं है, किन्तु रामकथा से मिलती-जुलती एक कथा ओल्ड टेस्टामेंट में मिलती है

कथाओं में समानताएं

यदि दशरथ की तीन रानियां थीं तो अब्राहाम की भी तीन पत्नियां थीं. दशरथ ने अपने बड़े बेटे राम को वनवास के लिए भेजा तो अब्राहाम ने अपने बड़े बेटे इस्मायेलु को जंगल में भेजा. दशरथ ने कैकेयी की बात मानकर भरत को राज्य सौंपा तो अब्राहम ने शारा की बात स्वीकार करके इस्साक को सारी संपत्ति का मालिक बनाया. कैकेयी ने अपने पति को अपने मोहजाल में फंसाकर अपने सौतेले पुत्र को वन में भेजा तो शारा ने भी अपने पति पर अपना जादू चलाकर अपने सौतेले बेटे को जंगल में भेजा.

दशरथ को बुढ़ापे में संतान प्राप्त हुई थी, उसी तरह अब्राहम को भी बुढ़ापे में संतान प्राप्त हुई. यज्ञ-फल के रूप में दशरथ के पुत्रों के पैदा होने की बात कही गयी, तो येहोवा की मेहरबानी से अब्राहम के पुत्रों के जन्म लेने की बात कही गयी कैकेयी को दिये गये वरदानों का तिरस्कार न कर सकने के कारण दशरथ ने श्रीराम को वन में भेजा तो यहोवा की आज्ञा का उल्लंघन न कर सकने के कारण अब्राहम ने शारा की इच्छा के अनुसार इस्मायेल को जंगल में भेजा

फिर इस्साक के पुत्रों के विषय में भी यही बात हुई इस्साक की पत्नी रिब्का थी उसके जुड़वे बच्चे पैदा हुए उनमें बड़े का नाम एसाव और छोटे का नाम याकोब था. छोटे पुत्र के लिए रिब्का ने ऐसा उपाय किया कि अंधे इस्साक की सारी संपत्ति छोटे बेटे को ही मिल जाय इसलिए बेचारा बड़ा बेटा जंगलों में चला गया दशरथ की पत्नी सुमित्रा के भी जुड़वें बच्चे हुए. बड़ा बेटा लक्ष्मण और छोटा बेटा शत्रुघ्न था छोटा घर पर रह गया तो बड़ा राम के साथ वन में गया

जैसे भरत अपने मामा के यहां था, वैसे ही याकोब भी अपने मामा के यहां था भरत ने अपने को दिया गया राज्य राम को अर्पित किया तो याकोब ने भी अपने को मिली हुई संपत्ति एसाव को सौंप दी

राम की तरह एसाव भी तीरंदाजी में बेजोड़ था इसीलिए हिम्मत करके वह किसी बीहड़ इलाके में गया, वहां जंगल काटकर, खेती-बाड़ी और पशुपालन आरम्भ किया उसने ऐसे स्थान पर अपना निवास बनाया जहां आसानी से पशुओं के लिए जरूरी चारा मिल सके जंगलों में जाते समय लक्ष्मण राम के साथ चला, तो राम ने अहल्या (बिना जोती जमीन) को सुधार कर, उसे जोतकर सुनहली फसलों को (धान्यलक्ष्मी को) उत्पन्न किया लगता है कि अहल्या के शाप-विमोचन की कहानी का यही अर्थ है शाप और वरदानों की कहानी जोड़ने से तथा बिजली का इंद्र, बंजर भूमि का (अहल्या को) के रूप में वर्णन करने से असली बात छिपी रह गयी

जो भी हो दोनों कहानियां एक ही प्रकार से चलीं इस कहानी के दशरथ के समान ही उस कहानी का अब्राहम था यहां भरत ने जो काम किया, वहां याकोब ने वही काम किया यहां कैकेयी की तरह वहां शारा और रिब्का थीं इस कथा के राम लक्ष्मण की तरह उस कथा में इस्मायेल और एसाव दिखाई देते हैं यह एक ही पीढ़ी से संबंधित कहानी है तो वह दो पीढ़ियों से संबंधित कथा है. दोनों में बस यही अंतर है

फिर भी दोनों कथाओं ने रक्त संबंध को प्रधानता दी चाहे सही हो या गलत, पिता की बात बेटे को माननी ही चाहिए और उसके अनुसार चलना ही चाहिए जवान पत्नी के प्रति मोह के कारण परिवार का मुखिया भले ही गलती कर बैठे, पर बेटों को उसे निभाना चाहिए चूंकि विद्रोह करके झगड़ने से परिवार के हित में आघात लगता है, इसलिए

बड़े बेटे को जंगल में जाने का आदेश दिया जाय तो उसे जाना ही चाहिए

आर्यों के सोवियत संघ के दक्षिणी इलाके के मैदानों में और ईरान के आर्याना में पशु-पालन तथा सेमेटिक लोगों के इराक और उसके आस-पास के इलाकों में पशुपालन से दोनों के बीच कुछ आदान-प्रदान होना स्वाभाविक था इसी कारण दोनों कथाओं के मूल विषय में समानता है

किन्तु आर्यों की रामकथा की तरह सेमेटिक प्रजा की कथा का विस्तार नहीं हुआ शायद इज्राइल की जनता के चार सौ साल तक एंगुप्तों के यहा गुलामों की तरह जीने के कारण उनकी कथा वीरगाथा के रूप में परिणत नहीं हो पायी होगी ? पर रामकथा ने विविध रूपों में विस्तृत होकर, अत में एक महाकाव्य का रूप ग्रहण किया अत हमें इसका अनुशीलन करना होगा कि राम कथा कब उत्पन्न हुई और उसका प्रसार किस प्रकार हुआ

जब धन-दौलत न थी, तब राम कथा भी नहीं थी

फ्रेडरिक एंगेल्स ने लिखा है—"वन्य अवस्था में मानव ने पेडों की छालों से रेशे निकालकर, उनसे कपड़े बनाकर पहना उन्होंने छालों तथा टहनियों से टोकरिया बुनी पत्थर की कुल्हाडिया तैयार होने पर उनकी मदद से किश्तिया बनाना सभव हुआ कुछ जगहों में लोगों ने लकडियों और बासों के सहारे घर बनाना सीखा. जहा-तहा गदा और बर्छी जैसे साधारण हथियारों के साथ, विशेष हथियारों के रूप में तीर-कमान तैयार किये गये फिर भी उनको उस समय घडे बनाना मालूम न था आज अमेरिका के रेड इडियन इसी अवस्था में हैं"

मोर्गन ने कहा—"कुम्हार की चाक का आविष्कार करके घड़े बनाना सीख जाने पर मानव ने वन्य अवस्था को पारकर असभ्य दशा में प्रवेश किया"

अत केवल कुल्हाडियों, गदाओ और तीर-कमानों के होने से रामकथा जैसी कथाए कहने का अवसर नहीं होता उसके लिए सपदा होनी चाहिए, अथवा राज्याधिकार होना चाहिए

कहना न होगा कि आर्य, सेमेट (सेम नामक पुरुष के वशज) और शायद तूरानियन जैसे कबीलों के सभी लोग पशुपालन को अपना कर ही उन्नति कर सके इस कारण से असभ्य जनसाधारण से गोपालक-जातिया अलग हो गयी यही सबसे पहला सामाजिक श्रम विभाजन था अन्य असभ्य जातियों की अपेक्षा गोपालक लोग अपने दैनिक जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं को अधिक मात्रा में कमा सके; दूध, दूध से बनी चीजें, ऊन, और ऊन कातकर बनाये गये कपड़े जैसी नयी-नयी वस्तुए वे उपलब्ध कर सके.

सेमैट कबीले के अब्राहम और इस्साक की संपत्ति केवल पशु संपत्ति थी. अब्राहम ने अपने बड़े बेटे को जंगल में भेजकर इस्साक को जो सौंपा, और एसाव को जगल में भेजकर इस्साक ने जो याकोब के सुपुर्द किया, वह भी केवल पशु संपत्ति थी. इसी संपत्ति से संबंधित हैं अब्राहम, एसाव इत्यादि की कहानियां.

इसलिए कहा जा सकता है कि राम कथा भी पशु संपत्ति से संबंधित ही होगी और आर्य जब असभ्य दशा के मध्यकाल में थे, तब यह कथा जन्मी होगी

पशु संपत्ति को बढ़ाते हुए प्रगति करने वाली पशुपालक जातियों में स्त्रियों का महत्व कम हुआ और पुरुषों का महत्व बढ़ा हालांकि उन दिनों में पुत्र पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होता था, पर पुत्र के लिए पिता की आज्ञा का उल्लंघन करना संभव न था.

उन दिनों में धनी परिवार का मालिक चाहे कितनी ही स्त्रियों से विवाह कर सकता था इस उद्देश्य से कि जितने ज्यादा बेटे पैदा होंगे उतना ही फायदा है, वे यथासम्भव अधिक से अधिक स्त्रियों से विवाह कर लेते थे उनमें जिन्हें पुत्र सन्तान नहीं होती थी उनकी स्थिति अच्छी नहीं मानी जाती थी पुत्रों के होने पर भी यदि उनके हाथ में संपत्ति नहीं होती थी तो उनके लिए गुलामी का जीवन अनिवार्य था

इस तरह संपत्ति के साथ उत्पन्न होने वाले आन्तरिक कलहों की रोक-थाम करते हुए, आर्य, सेमैट विकसित समाजों ने पशुओं की बड़ी-बड़ी टोलियों का पालन-पोषण आरंभ किया चारे की कमी होने पर वे पशुओं को दूसरे स्थानों पर हांक ले जाते थे वहां भी यदि चारा कम पड़ता था तो फिर आगे बढ़कर किसी नये स्थान की खोज में निकलते जाते.

इस तरह प्रसार करते हुए अर्याना से निकले हुए आर्य (अनु-द्रुह्यु-तुर्वय-यदु-पुरुव-वंशों के लोग) सिन्धु तथा सरस्वती नदियों के तटों पर पहुंचकर, वहां के हरी घास वाले मैदानी भागों में बस गये. उनके पीछे भृत्सु तथा भरत वंशों के लोग आये यदि कुछ आर्य यूरोप में फैल गये

एंगेल्स ने लिखा—"आर्य और सेमैट पशुओं को पालतू बनाकर बड़ी-बड़ी टोलियों को पालते थे. दूसरी असभ्य जातियों की अपेक्षा उनके आगे बढ़ने का कारण यही मालूम होता है"

सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्री एस बी राय ने लिखा है—"वेदकाल के आर्यों का इतिहास, संस्कृति आदि सब कुछ अर्याना में ही आरंभ हुआ."

इसलिए हम यह बेशक कह सकते हैं कि अर्याना में और सोवियत तुर्कमेनिया में बहने वाली सिरदर्या, अमूदर्या नदियों के तटों पर जिन आर्यों ने पशुपालन का प्रारंभ किया, वे कालक्रम से दूसरे प्रान्तों में फैल गये

इस प्रकार हरी घास के मैदानों में पशु-चारण करके जीवन-यापन करने वाले पशुपालक लोगों ने काफी प्रगति की. दूध, मक्खन और मांस के पर्याप्त मात्रा में मिलने से आबादी में वृद्धि हुई. वे आंख की पुतली की तरह पशुओं की रक्षा करते थे. इसलिए पशुओं की टोलियों में वृद्धि हुई. उष्ण प्रदेशों में गर्मी के मौसम में और ठंडे प्रदेशों में जाड़े के मौसम में पशुओं का चारा काफी नहीं मिलता था. इसलिए ऐसे समय में पशुओं को चराने के लिए, उन्होंने फसलें उगाकर जमा करना आरंभ किया इस तरह खेती का प्रारंभ होने के कारण उन्हें खाने के लिए अनाज भी मिला. अब विकास और भी तीव्र गति से होने लगा

फिर भी पशुपालकों को एक समस्या का सामना करना पड़ा धीरे-धीरे इन आगे बढ़े हुए सब लोगों का एक ही जगह में रहना बहुत मुश्किल हो गया इसलिए कुछ लोगों को नये स्थानों में प्रवास के लिए जाना पड़ा. इसके लिए उन्होंने कुछ जगहें चुनीं. पहले कुछ लोग वहा गये उन्होंने वहा के झाड़-झंखाडों को काटकर जला दिया बाद में उन्होंने जमीन जोतकर उसमें बीज बोये फसलें बढ़ जाने के बाद वहा से वे वापस आकर पशुगणों को हांक ले चले

एंगेल्स ने कहा—"अनिवार्य परिस्थितियों में वे (आर्य, और सेमेट) कभी पश्चिम दिशा में कभी उत्तर दिशा में निकले ; यूरोप में फैली जंगली जमीनों के झाड़-झंखाडों को काटकर उन्होंने खेती करके पशुगण के लिए जरूरी चारे का प्रबंध कर लिया इन लोगों ने पशुओं के चारे के लिए ही पहले-पहल फसलें पैदा की बाद में ही अनाज मनुष्यों के खाद्य पदार्थों में महत्वपूर्ण बनी."

भारतीय उपमहाद्वीप में भी ठीक यही हुआ पहले सिन्धु नदी के ऊपरी हिस्से में पहुचकर जो आर्य वहा बस गये, वे क्रमश. कई दूसरे स्थानों में फैले. नये स्थानों में जाकर बसने के पहले उन्होंने वहां के जंगलों को जलाकर जमीन जोती कहीं किसी एक स्थान में कोई जंगली लोग बसे मिले तो उनको उन्होंने भगा दिया. अगर कहीं विकसित समाज के लोग मिले तो उन्होंने उनसे रिश्ते बढा लेने का प्रयास किया, जरूरत पडी तो लडाई भी की

ध्यान देने की बात यह है कि इस विस्तार को प्राप्त करने में कुछ ऋषि उनके मार्गदर्शक बने. ऋग्वेद में इसका उल्लेख है कि बुध, वासुदेव, अगस्त्य, अत्रि जैसे महर्षियों ने आगे बढकर, आश्रम कायम करके, किसानों की मदद की.

"मित्रो ! हल तैयार रखो. हल में बैलों को बाध कर खेत जोतो. हल की जुती जमीन की रेखाओं में बीज बोओ. हमारी मनोकामनाओं के साथ फसलें भी सफल हों. हमारे हंसिये पकी फसलों को काटें"

"दोस्तो ! पानी की बाल्टियां बनाओ. उनमें चमड़े के मजबूत रस्से बांधो कभी न घटने वाले पानी से भरे कुओं से पानी निकालो."

"होशियार लोगो ! घोड़ों और बैलों का पेट भर दाना खिलाकर पानी पिलाओ फसल के पौधों को ले चलने के लिए लायक गाड़ियों को तैयार बना रखो सभी गट्ठरों को एक जगह खिंचवाकर समेट रखो" (ऋग्वेद, १०-१०१)

ये ऋषिगण किसानों को सलाह देने के अतिरिक्त आश्रमवासियों को शिक्षा भी देते थे. आर्येतर लोगों को अपने अनुकूल बनाने के लिए, अगर वह संभव न हो तो उनसे लड़कर उन्हें हराने के लिए भी वे अथक-प्रयत्न करते थे

उन दिनों में कुछ लोग मैदानों में रहकर पशुओं को चराते थे तो कुछ लोगों को जंगल काटकर, उन्हें जलाकर खेती-बाड़ी करनी पड़ती थी, जरूरत पड़ने पर उन्हें जंगली लोगों से लड़ना भी पड़ता था. अतः पशुगण को चराने की अपेक्षा खेती करना ज्यादा मुश्किल होता था इसी वजह से सारा और कैकेयी जैसी स्त्रियों ने अपने पतियों को अपने मोह-जाल में फंसाकर अपने पुत्रों को पशु-संपत्ति दिलवायी होगी और सौतेले पुत्रों को जंगलों में भेजकर उनसे खेतीबाड़ी करवायी होगी

हालांकि जंगलों में रहते हुए झाड़-झंखाड़ साफ करके बंजर जमीनों को जोतकर फसलें पैदा करना मुश्किल था फिर भी क्रमशः इस प्रकार खेती करने वाले किसान ही उन्नति के पथ पर अग्रसर हुए पशुओं के चारे के साथ उन्हें अनाज भी मिला इसलिए वे खेती-बाड़ी करते हुए पशुगण का पालन-पोषण भी कर सके खेतीबाड़ी न करने वाले गोपालकों के पशुओं को काफी चारा नहीं मिलता था इसलिए उनको किसानों पर निर्भर रहना पड़ा इसी कारण से इस्साक के फिलिस्तीनियों के कब्जे वाली जमीनों में जाकर, उनकी अनुमति से वहां खेती चलायी और पशुओं का पालन-पोषण किया. खेती न करने वाला याकोब अपने पशुगण को एसाव के यहां हांक ले चला जो खेती-बाड़ी करता हुआ, और पशुगण को पालता हुआ शेयूर में अपना स्थायी मुकाम बना चुका था भागवत में कहा गया है कि छोटा भाई श्रीकृष्ण गायों को चराने ले जाता था तो बड़े भाई बलराम ने हल हाथ में लेकर खेत जोता ये कहानियां चाहे सच हों या झूठ, पर यह सच है कि पशुपालन के साथ खेतीबाड़ी करने से ही यादवों का उन्नति पाना संभव हो सका उसके पश्चात् उनकी राज्य स्थापना के लिए रास्ता खुला.

यों कह सकते हैं कि पशुपालन करना हो तो उसके लिए खेती करने की जो आवश्यकता ऋग्वेदकाल में ही महसूस की गयी ऋग्वेद में कहा गया है, "अरे जुआरी ! जुआ मत खेल ! खेती-बाड़ी कर ! खेती करने से गायें मिलती हैं और पत्नी भी प्राप्त होती है" यह एक जुआरी को एक तपस्वी की सलाह है इससे खेती की महत्ता का पता लगता है

इसलिए राम के लिए ही नहीं, उसकी तरह जंगल में भेजे गये किसी व्यक्ति के लिए उस दशा में झाड़-झंखाड़ काटकर खेती-बाड़ी करना स्वा-

भाविक ही था. किन्तु साधारण मानव से परे एक अलौकिक व्यक्ति के रूप में राम का वर्णन होने से असली बात आखों से ओझल हो गयी

यह कहने के बदले कि राम सीता (हल) को साथ ले गया, यह कहा गया कि सीता राम के साथ वन में गयी यह कहने के बदले कि राम ने जगल काटकर, बजर जमीन को जोत कर फसलें उगायी, यह कहा गया कि राम ने धान्य लक्ष्मी (सुनहली फसल) की सृष्टि की इतने से न रुककर यह कथा भी प्रचलित की गयी कि राम ने शिला को स्त्री के रूप में बदल दिया

इस तरह के परिवर्तनों से बढी हुई रामकथा क्षात्र (वीर) युग के प्रारभ मे कुछ और बढी उन दिनों में क्षत्रियों की वीरता और पराक्रम का वर्णन करने वाली कई कहानिया अस्तित्व मे आयी वैसी स्थिति में एक वीर गाथा के रूप में राम कथा का परिणत होना सहज ही था

उन दिनों मे कई क्षत्रिय बर्बर लोगों से भी बदतर बर्ताव करते थे पिछड़े हुए लोगों पर हमले करके, उनकी सपत्ति लूटकर और उनकी कन्याओं का अपहरण करके घमड से मूछों पर ताव देते फिरते थे चाहे किसी भी देश का इतिहास देखें, यही हाल दिखायी देता था वीर युग (क्षत्रिय युग) के यूनानियों की व्यवस्था के विषय मे एगेल्स ने जो लिखा, उसे हम पढ़ें तो पता लगता है कि वे वीर कैसे थे ?

एगेल्स ने लिखा है—"सपत्ति में कमी-बेशी होने से समाज निर्माण में भी परिवर्तन हो गया वश-परपरागत कुलीनता एव राज्यसत्ता के लिए नींव पडी गुलामी बढी आरभ में युद्ध-बंदियों तक ही यह गुलामी सीमित थी किन्तु क्रमश अन्य लोगों के साथ अपने कबीले के लोगों को ही नही, बल्कि अपने गण के लोगों तक को भी गुलामी में धकेला जाने लगा. इससे पूर्व कबीलों के बीच में ही सघर्ष होते थे लेकिन अब ये लोग पशुओं तथा दूसरे प्रकार की सपत्ति को लूटने के लिए और गुलामों को पकडने के लिए हमले और चढाइयां होने लगी "

इसी प्रकार कार्ल मार्क्स ने लिखा है, "वीर युग की यूनानी स्त्रियों से पुराण युग की अप्सराओं ने अधिक गौरव प्राप्त किया गुलाम कन्याओं के साथ की स्पर्धा में वीरों की पत्नियों को कई प्रकार के अपमानों का शिकार बनना पड़ा."

महाभारत पढें, या उससे भी बढकर ओल्ड टेस्टामेंट पढे तो ऐसे कार्यों से संबंधित विवरण स्पष्ट होते हैं. अतएव रक्त-सबध का महत्व बताने के अतिरिक्त वाल्मीकि ने पितृवाक्यपालन, भ्रातृवात्सल्य, त्याग, पातिव्रत्य, एक पत्नी-व्रत, जैसे आदर्शों की शिक्षा देने के लिए कमर कस ली इसी की पूर्ति के लिए उन्होंने अपनी सुनी हुई छोटी सी राम कथा को काव्य वस्तु के रूप में परिणत कर रामायण महाकाव्य की सृष्टि की

वाल्मीकि रामायण

"इक्ष्वाकूणाम् इद तेषां राज्ञा वंश महात्मानाम्
महदुत्पन्नम् आख्यान रामायणम् इति श्रुतम्"

"सुना जाता है कि रामायण महाख्यान इक्ष्वाकु राजवंश में उत्पन्न हुआ" यह स्वयं वाल्मीकि की कही हुई बात है, जो ध्यान देने योग्य है. इससे स्पष्ट है कि उन्होंने अपनी सुनी राम कथा को एक महाकाव्य का रूप प्रदान किया

इसके अतिरिक्त राम-कथा को संक्षिप्त करके महाभारत में घुसाया गया, भागवत में भी जोड़ दिया गया भागवत में वर्णित इक्ष्वाकु राजवंश पर नजर डालें तो ऐसी अनेक कल्पनाए उसमें दिखायी देती हैं, जिन पर विश्वास नहीं किया जा सकता

एक बार मनु चीखा तो उसकी नाक से इक्ष्वाकु बाहर निकला उस तरह प्रकट हुए इक्ष्वाकु के सौ पुत्र उत्पन्न हुए उनमें बड़े बेटे का नाम था "निकुक्षि" और दूसरे बेटे का नाम था "निमि"

निकुक्षि के वंश में पंद्रह पीढ़िया गुजर जाने पर "युवनाश्व" पैदा हुआ उसके सौ पत्नियां थीं फिर भी सन्तान उत्पन्न न हुई अत मुनियों ने युवनाश्व से यज्ञ करवाया यज्ञ की परिसमाप्ति पर पवित्र जल को अभिमंत्रित करके ऋषियों ने एक कलश में उसे छिपा रखा, ताकि युवनाश्व की बड़ी रानी को वह जल पिलाया जाय परन्तु उस दिन आधी रात के समय युवनाश्व को बहुत प्यास लगी तो उसने वह जल पी लिया इसके फलस्वरूप उसका पेट चीर कर मांधाता पैदा हुआ

मांधाता से छब्बीस पीढ़ियों के बीत जाने पर "सुदास" पैदा हुआ. उसके भी सन्तान न थी. इस कारण उसकी पत्नी मदयन्ति ने वशिष्ट के साथ समोग करके गर्भधारण किया मगर सात साल बीतने पर भी प्रसव न होने से वह बहुत तकलीफ उठा रही थी तो वशिष्ट ने एक पत्थर के पैने औजार से उसका पेट चीरकर बच्चे को बाहर निकाला. इस प्रकार पैदा हुआ "अश्मक"

अश्मक से मूलक पैदा हुआ उस समय में परशुराम सारे क्षत्रियों का सहार कर रहा था तो स्त्रियों ने अश्मक को छिपा दिया यद्यपि परशुराम के हाथों में सारे क्षत्रियों का नाश हुआ, तथापि यह मूलक जीवित रहकर निर्मूलित क्षत्रिय वंश का मूल बना उसका मूलक नाम सार्थक हुआ मूलक के पश्चात् आठ पीढ़ियों के गुजरने पर श्रीराम पैदा हुआ

इक्ष्वाकु के दूसरे पुत्र निमि ने वशिष्ठ की अनुपस्थिति में यज्ञ किया इससे क्रुद्ध होकर वशिष्ठ ने निमि को शाप दिया तो निमि ने वशिष्ठ को प्रतिशाप दिया इसके परिणामस्वरूप दोनों की मृत्यु हो गयी फिर भी वशिष्ठ मित्रा-वरुणों के द्वारा उर्वशी के गर्भ से उत्पन्न हुआ यद्यपि देवों ने निमि को सजीव करने के लिए तय किया, तथापि निमि फिर से जीवित होने के लिए राजी नहीं हुआ

राजा जीवित नहीं हुआ इसके अलावा उसके सन्तान न थी इसलिए राज्य के अव्यवस्थित हो जाने के भय से मुनियों ने निमि के शव का मर्दन किया तो जनक का जन्म हुआ इस जनक के वैदेह और मिथुल नाम भी हैं. इस कारण इनके द्वारा निर्मित नगर का नाम मिथिला पड़ा.

मिथुल के वंश में बीस पीढ़ियों के बीतने पर नीरध्वज पैदा हुआ जब वह यज्ञ करने के लिए जमीन जोत रहा था तब हल के फलक के नीचे से सीता निकली, इस प्रकार लम्बी-चौड़ी कहानी गढ़ी गयी तब क्या सीता नीरध्वज की बेटी थी ? या जनक की बेटी थी ? कौन जाने ? इन काल्पनिक गाथाओं का न सिर है, न पैर। सभी अभूत कल्पनाएं हैं। सभी असंभव जन्म हैं

खैर, इन जन्मों की बात कुछ भी हो, यह निश्चित रूप से विदित होता है कि सीता और राम दोनों इक्ष्वाकु वंश में पैदा हुए थे, अतः वे दोनों भाई-बहन ही थे, ऐसा कुछ लोगों का मत है उन्होंने यह भी लिखा कि इक्ष्वाकु के बड़े बेटे निकुक्षि के वंश में पचपन पीढ़ियों के बीतने के पश्चात राम का जन्म हुआ तो इक्ष्वाकु के दूसरे बेटे निमि के वंश में बाईस पीढ़िया गुजरने पर सीता का जन्म होने की बात कही गयी है. इससे तो लगता है कि राम से सीता ही बड़ी थी

सीता और राम की वंश-तालिका भागवत में लिखी गयी तो रावण तथा कुम्भकर्ण के जन्मों की कथा महाभारत में यों कही गयी है

ब्रह्मा के अपने मन में कल्पना करते ही पुलस्त्य का जन्म हुआ उसके एक पुत्र कुबेर पैदा हुआ. उसने अपने पिता की परवाह किये बिना अपने दादा ब्रह्मा के प्रति ध्यान लगा कर तपस्या की और उनसे कई वरदान पाये कुबेर के उसकी परवाह न करने के कारण पुलस्त्य ने अपने पुत्र पर क्रुद्ध होकर अपने शरीर के अर्ध-भाग से विश्रवसु नामक व्यक्ति को पैदा करके उसे कुबेर पर हमला करने भेजा इस विपदा से बचने के लिए कुबेर ने उससे क्षमा मांग कर, विश्रवसु को नृत्य-गीतविद्या विशारद तीन राक्षस स्त्रियों की भेंट दी

उन राक्षस स्त्रियों के द्वारा की गयी सेवाओं से प्रसन्न होकर विप्रवर विश्रवसु ने उन्हें गर्भ प्रदान किया उसके फलस्वरूप उन राक्षस स्त्रियों में पुष्पोत्कटा से रावण तथा कुम्भकर्ण, मालिनी से विभीषण, और राका से खर तथा शूर्पणखा पैदा हुए इस प्रकार अपने द्वारा पैदा हुए चार-पुत्रों के जात कर्म आदि संस्कार विप्रवर विश्रवसु ने किये और बाद में उनका

उपनयन भी किया. उसके पश्चात् रावण, कुंभकर्ण और बिभीषण इन तीनों ने तपस्या करके ब्रह्मा को प्रसन्न करके उनसे अनेक वरदान प्राप्त किया.

अत: उत्तर रामायण में लिखा गया है कि ऐसे ब्राह्मणों की हत्या करने से राम को ब्रह्महत्या का पाप लग गया, जिससे विमुक्त होने के लिए राम ने अश्वमेध यज्ञ किया मगर यह बात महाभारत की राम कथा में नहीं मिलती इस प्रकार एक दूसरे से भिन्न मालूम होने वाली कितनी ही रामकथाएं उपलब्ध हैं.

ई. सन् ४१२ में चीनी भाषा में अनूदित रामायण में न सीताहरण का उल्लेख है और न रावण संहार का सीता को वाल्मीकि आश्रम में भेजने तथा लव और कुश के पैदा होने की बात भी उसमें नही लिखी गयी.

तेरवादियों के बौद्धों की राम कथा के अनुसार देखा जाय तो उसका दशरथ दस रथ वाला नहीं, दस प्रकार के व्यसनों का आदी था. इसी कारण से उसने अपनी प्रिय पत्नी से डर कर राम को वन में भेजा राम ने पितृ वाक्य का पालन किया बारह साल के उपरान्त राम, लक्ष्मण और सीता अयोध्या लौट आये जब भरत ने राम से राज्यपालन करने की प्रार्थना की, तब राम ने उसे स्वीकार नही किया अन्त में कई लोगों के आग्रह करने पर और भरत के बहुत ज्यादा अनुरोध करने पर राम राज्याभिषिक्त हुए.

दूसरी एक राम कथा के अनुसार "दशरथ वृद्ध था और जवान पत्नी कैकई का दास था तो भी उसे राम के प्रति अपार प्रेम था इसलिए उसे शका थी कि कैकयी से राम को कोई खतरा हो सकता है अत उसने एक दिन एक ज्योतिषी को बुलाकर पूछा—"बताओ। मैं और कितने साल जीऊगा?" तब ज्योतिषी ने कोई हिसाब लगा कर, कुंडली खींचकर और ताराबल एव चन्द्रबल देखकर दावे के साथ कहा कि आप अवश्य और बारह साल जियेंगे"

उसके पश्चात् दशरथ ने अपनी अधीनता में रहने वाले जगली लोगों के यहा राम के रहने का प्रबध किया और यह कहकर उसे जगल में भेजा—"हे राम? यहा रहने से तुम्हें कोई खतरा हो सकता है इसलिए तुम बारह साल तक वन में जगली लोगों के यहा रहकर वापस आओ. तब तक मैं मर जाऊगा और यह राज्य तुम्हें प्राप्त होगा" लेकिन दशरथ तभी मर गया फिर भी राम वापस नही आये भरत के अनुनय-विनय करने पर भी वह नही लौटा बारह साल पूरे होने पर ही वह वापस लौटे"

ऐसी कहानिया ही नही, बल्कि यह कहने के लिए भी पर्याप्त प्रमाण मिले कि प्रारम्भ में राम कथा सिर्फ बनवास तक सीमित रहती थी. श्री एस. वी. राम ने घोषित किया—"चार हजार साल पहले बनी राम कहानी के विषय में ऐतिहासिक आधारों को उपलब्ध करना बडा मुश्किल

काम हैं तो भी राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से इसका समग्र अनुशीलन करना आवश्यक हैं. पांडवों से संबंधित कथा तो एक ही प्रकार से हैं किन्तु राम कथा एक ही प्रकार से नहीं हैं इतना ही नहीं, राम कथा को पूर्वी प्रदेशों में लिखने के पहले ही पश्चिम एशिया में खासकर, ईरान में राम कथा रची गयी फिर भी इन सब कथाओं में भारत देश में रचित राम कथा सबसे महान हैं."

ऐसा न होकर रामायण महाकाव्य त्रेतायुग से ही अर्थात् नौ लाख साल पहले ही—वाल्मीकि महर्षि ने लिखा होता, तो क्या वह बात पाणिनि या पतंजलि को मालूम नहीं हुई होती? यदि उन्हें इसका पता था तो उन्होंने राम का नाम क्यों नहीं लिया? सोवियत संघ की सिरदर्या और अमूदर्या नदियों के तटों पर डॉन और नीपर नदियों के तटों पर फैले हुए आर्यों को अथवा जर्मनी में रहने वाले आर्यों को हाल ही तक रामायण का नाम भी मालूम न होने का कारण क्या हैं?

यह बात सच हैं कि जिस राम कथा को वाल्मीकि ने खुद सुना उसको एक महाकाव्य का रूप उसने दिया इसीलिए उपर्युक्त प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं मिल रहा हैं चाहे कोई कितना ही घुमा-फिरा कर बतावें, चाहे कोई कितनी अभूत कल्पनाएं जोड दे, तो भी वाल्मीकि की स्वयं कही हुई इस बात को कोई इन्कार नहीं कर सकते कि यह रामायण महाख्यान इक्ष्वाकु राज वंश में उत्पन्न कथा के रूप में विश्रुत हैं

आर्य, दानव, राक्षस आदि जातियों के बीच में जो झगडे चले, उनको ध्यान में रखकर वाल्मीकि महर्षि ने राम-रावण युद्ध का वर्णन किया रामायण में वानरों का एक विशेष स्थान हैं श्रीराम के साथ समझौता करके, अपने भाई वालि को जिस सुग्रीव ने मरवा डाला उसके नेतृत्व में सारे वानर श्रीराम का सहारा बनकर खडे हुए बन्दरों का युद्ध करना, अपनी पूंछ में लपेट कर पहाडों को उखाड़ कर शत्रुओं पर फेंकना, समुद्रों को लांघना जैसी कल्पनाएं विश्वास कर सकने योग्य नहीं हैं तो भी वानरों का राम का सहारा बनना और विभीषण का अपने भाई के प्रति विद्रोह करके स्वार्थ बुद्धि से राम के पक्ष में पहुंच जाना तत्कालीन परिस्थितियों को प्रकट करता हैं ये घटनाएं यह सिद्ध करती हैं कि आर्य तथा आर्येतर जातियों के बीच में जो संघर्ष हुए उनमें कुछ आर्येतर लोगों ने अपने पक्ष के विरुद्ध विद्रोह करके आर्यों के साथ हाथ मिलाये

यदि ऐसे अनेक विभीषण आर्यों के पक्ष में न मिलते तो दानव, राक्षस इत्यादि जातियों को जीतकर सिन्धु सभ्यता के केन्द्र बने हुए प्रान्तों को हस्तगत करना आर्यों के लिए संभव नहीं होता

सिन्धु घाटी सभ्यता

जब आर्य पशुचारण करते-करते पंचनद (सिन्धु नदी के ऊपरी) प्रान्त में पहुंचे, हड़प्पा तथा मोहनजोदडो में नगर सभ्यता उच्च दशा में

थी सिन्धु घाटी सभ्यता के नाम से प्रसिद्ध सभ्यता यही थी. इस पुरातन सभ्यता को कुल विद्वानों ने मिस्री, बेबीलोनी तथा सुमरी सभ्यताओं के समकक्ष कहा तो कुछ ने उनसे भी ऊँची कहकर इसकी प्रशंसा की

मोहनजोदड़ो और हड़प्पा में कई खुदाइयां हुई. उनमें किले की चारदीवारियां, बहुमंजिले भवन, पक्की सड़कें, गन्दे पानी की नालियां, पीने के पानी के नल, स्नानागार, धान्यागार, रंग-बिरंगे मिट्टी के घड़े, ताम्रपत्र, कांसे के औजार, हथियार और आभूषण, हजार मुहरें, लगभग चार सौ वर्ण संकेतों से युक्त चित्रलिपि आदि प्राप्त हुए अयोध्या और हस्तिनापुर की खुदाइयों में मिट्टी के बर्तनों के सिवा वैसी कोई चीज बाहर नहीं निकलीं. अतः यह स्पष्ट रूप से प्रकट हो गया कि सिन्धु घाटी सभ्यता आर्यों की नहीं थी फिर यह सभ्यता किसकी थी?

सिन्धु घाटी की इन खुदाइयों में पाषाण युग के औजारों के साथ कृषि विकास के लिए आवश्यक उपकरण, और फसलों की खलिहानें भी बहिर्गत हुए. व्यापार-वाणिज्यों के लिए आवश्यक साधन भी यहां उपलब्ध हुए. इसलिए कहा जा सकता है कि इस सभ्यता को ऐसी उन्नत दशा में पहुंचने के लिए कई हजार साल लगे होंगे किन्तु इसे किसी एक जाति की प्रजा की सभ्यता नहीं कह सकते. कई जातियों के लोगों ने उस सिन्धु घाटी सभ्यता के विकास में अपना योगदान प्रस्तुत किया होगा पाषाण युग के स्थानीय निवासियों से लेकर आर्यों तक कई जातियों की जनता का यहां निवास करना और अनेक कारणों से उनका वहां से अन्य प्रान्तों में चला जाना घटित हुआ होगा

तो भी हरान तथा मकदोवन ने उद्घोषित किया कि यह द्रविडों की ही सभ्यता है किन्तु एन बी राय का कथन है कि इस विषय में अभी अन्तिम निर्णय होना बाकी है

प्रो. के श्रीनिवास राघवन का वक्तव्य है—"द्रविड" शब्द प्राचीन संस्कृत वाङ्मय में अथवा तमिल वाङ्मय में दृष्टिगत नहीं होता ई सन् ५वीं सदी तक संस्कृत एवं प्राकृत भाषाओं के साथ तमिल भाषा भी ब्राह्मी लिपि में लिखी गयी.

आचार्य के. लक्ष्मीरंजन ने अपने वक्तव्य में कहा कि कुछ समय तक तमिलों ने वेंगी लिपि (तेलुगु-कन्नड़ लिपि) का प्रयोग किया वेंगी लिपि चालुक्य राजाओं के जमाने में बनी. ऐसी हालत में यह कैसे कहा जा सकता है कि मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा की खुदाइयों में बहिर्गत चित्रलिपि द्रविड़ों की थी? यदि चित्रलिपि उनकी न थी तो यह कहना अनिवार्य होगा कि सिन्धु घाटी सभ्यता द्रविड़ों की नहीं थी.

किन्तु यह बात सच है कि उत्तर से दक्षिण की ओर जो जातियां निकल आयीं, उनमें कुछ कबीलों की प्रजा द्राविड़ नाम की थी. कहते हैं कि दक्षिण दिशा की ओर जाने वाले लोगों को आर्यों ने "द्रविड़" कह कर संबोधन किया.

आचार्य खंडवल्लि लक्ष्मी रंजन ने अपने "आन्ध्रों का इतिहास तथा

उनकी संस्कृति" नामक ग्रन्थ में लिखा—"तेन-अगु=तेनगु शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार दक्षिण दिशा में स्थित प्रजा अथवा दक्षिण-अभिमुखी होकर विचरने वाले ही "तेनगु" लोग हैं. भाषा विज्ञानियों का कहना है कि तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयालम और तुलु भाषायें द्राविड़ भाषा परिवार की हैं. इसलिए यह कह सकते हैं कि चाहे किसी भी कारण से हो उत्तर से दक्षिण की ओर निकलकर आये हुए लोग ही द्राविड़ थे. हां, यह भी कह सकते हैं कि जिन लोगों ने सिन्धु घाटी की सभ्यता के विकसित होने तथा विस्तृत होने के लिए अपना योगदान दिया, उनमें द्राविड़ भी थे. पर यह नहीं कह सकते कि सारी की सारी सिन्धु घाटी सभ्यता द्राविडों की थी

सिन्धु घाटी की सभ्यता सिर्फ हडप्पा तथा मोहनजोदडो तक सीमित नहीं थी. उनके पूर्वी तथा दक्षिणी प्रान्तों में भी इस सभ्यता से संबंधित अवशेष दृष्टिगत हुए ये उत्तर में कश्मीर प्रान्त प्रान्त में भी मिले दिखायी पडे, इसलिए कुछ अन्य शोधकर्ताओं का मत है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता में असुर, दानव, राक्षस आदि जातियों का भी पात्र है.

सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्री एस बी राय ने घोषणा की—"हड़प्पा राज्य दो सन्निकट सांस्कृतिक संबंधों से युक्त हो सकता है उत्तर भाग की दानव संस्कृति का केन्द्र हडप्पा, तो दक्षिण के दानव राज्य केन्द्र की राजधानी मोहेंजोदडो रही होगी इन दोनों राज्यों की जनता ने शिव-पशुपति तथा आदिशक्ति की आराधना की थी"

शायद इसी कारण से वेदकाल के आर्यों ने अपने शत्रुओं के रूप में असुर और राक्षस जातियों के नाम लिये होंगे फिर भी उन्हीं लोगों के साथ उन्होंने सगे-संबंध जोड़ लिये थे रावण, कुंभकर्ण, खर, दूषण आदि के अतिरिक्त अनेक अन्य असुरों को आर्यों के जीवन की कहानियों के साथ, ययाति और शर्मिष्ठा का संबंध, भीमसेन और हिडिंबा का संबंध, प्रभावति और उषा नामक असुर कन्याओं से प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध का विवाह कर लेना इत्यादि की कहानियां भी ध्यान देने योग्य हैं अतएव यह कह सकते हैं कि सिन्धु घाटी की सभ्यता के केन्द्र स्थानों में जातियों के तथा पंचनद प्रदेशों में आर्यों के रहने से इनके बीच में युद्ध और विवाह संबंध दोनों भी हुए

ध्यान देने की दूसरी बात यह है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता केवल कृषि पर अवलंबित होकर विकसित नहीं हुई इन प्रदेशों में रहने वाले लोगों के अन्य देशियों के साथ बने व्यापारिक संबंधों के कारण इनकी सभ्यता की उन्नति हुई.

खुर्शीद हसन शेख, शरुयद अश्फाक नामक दो पाकिस्तानी पुरातत्व-विदों ने "यूनेस्को" द्वारा प्रकाशित एक ग्रन्थ में लिखा—"सिन्धु घाटी में दौड़ती-कूदती फैली हुई कपास की फसल ही मोहंजोदड़ो की सभ्यता की मूल है. कपास के सूत से बने कपडों की ईरान और मेसोपोटेमिया से मांग बढने के कारण कपास की खेती बलूचिस्तान से सिन्धु घाटी में

फैली इसके फलस्वरूप हड़प्पा तथा मोहंजोदड़ो की सभ्यताओं का मेल-मिलाप हुआ मेसोपोटेमिया में मिले व्यापार संबंधी शिलालेखों में लिखा गया है कि मेल्लूहा से सामग्री का आयात हुआ. यह मेल्लूहा सिन्धु घाटी के कपास के व्यापक क्षेत्र के सिवा और कुछ नहीं है."

इस प्रकार विस्तृत बनी सिन्धु घाटी सभ्यता के निलय बने कुछ प्रान्तों को यद्यपि आर्यों ने जीता, तथापि यह कहने के लायक प्रमाण नहीं मिले कि उन्होंने मोहंजोदड़ो और हड़प्पा को जीतकर, नष्ट किया. किन्तु यह निर्णय करने के अनुकूल कई सबूत मिले कि सिन्धु नदी की बाढ़ों से फसलों के—खासकर कपास की फसल के—नष्ट होने से असुर जाति सहित कई समूह मोहंजोदड़ो प्रदेश से दूसरे प्रान्तों में चले गये इसलिए कहा जा सकता है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता के केन्द्र प्रदेशों से दक्षिण की ओर गये हुए आर्येतर जातियों को "द्राविद" कहकर आर्यों ने संबोधन किया और कालक्रम से वही "द्राविद" शब्द "द्राविड" के रूप में परिवर्तित हुआ होगा इसी प्रकार दक्षिण की ओर अभिमुख होकर फैले हुए लोगों को "तेलुगु" नाम दिया गया होगा

यद्यपि सिन्धु घाटी सभ्यता आंखों से ओझल हो गयी, तथापि उससे संबंधित जानकारी तो कुछ हद तक वैदिक वाङ्मय में उपलब्ध है

श्री के दामोदरन ने लिखा—"इन लोगों के शरीर का रंग काला था इनकी नाकें चपटी थीं आज से चार हजार साल पहले ही इनके अच्छे मजबूत किले, और विशाल नगर थे खेती की उपजाऊ जमीनें थीं धनी व्यापारी थे खेती करना, सूत कातना, कपड़े बुनना, मिट्टी के घड़े, तांबे के बर्तन, चांदी-सोने के गहने बनाना इनको अच्छी तरह मालूम था इन सब बातों का उल्लेख वैदिक वाङ्मय में पाया जाता है."

प्रश्न है कि आर्यों ने इस अत्यंत विकसित जाति पर किस प्रकार विजय प्राप्त की ?

आर्य लोग धनुर्विद्या में अत्यंत निपुण थे शिरस्त्राण, कवच, लोहे की तलवारें जैसे हथियार उनके पास थे घोड़े और रथ भी उनके यहां थे.

जहां सिन्धु घाटी सभ्यता विकसित हुई, वहां रहने वाले आर्येतर जातियों के लोग कुशल तीरन्दाज नहीं थे लोहे के बने हथियार भी उनके यहां उतने ज्यादा नहीं थे. तब तक उन्हें अभी लोहे की खानें खोदकर लोहा बाहर निकालना और उसे पिघला कर सांचे में ढालना ठीक तरह से मालूम न था इसके अतिरिक्त कितने ही विद्रोही विभीषणों ने उनके पक्ष में से निकलकर आर्यों के साथ हाथ मिलाये सारी वानर जाति आर्यों के पक्ष में खड़ी हो गयी. एक ओर सिन्धु नदी की घाटी की मुसीबतों का सामना करते हुए दूसरी ओर आर्यों के हमलों का मुकाबला करने की स्थिति में वे फंस गये, उनकी धन-दौलत और विविध संपत्तियां उनकी आपसी फूट का मूल कारण बन गयीं इसीलिए उन्हें

आर्यों के सामने झुकना पड़ा. तो भी उनकी संस्कृति को अपनाना आर्यों के लिए अनिवार्य हो गया.

वैभव-विलास एवं सुख-सुविधाओं से संपन्न रोम साम्राज्य लगातार तीन सौ साल तक जर्मन कबीलों के विद्रोह और हमलों का युद्ध और प्राकृतिक शक्तियों के तीव्र प्रकोप का शिकार होकर सिन्धु घाटी की सभ्यता के प्रमुख नगर उजड़ गये सिर्फ उनके खंडहर बचे हैं.

उस समय असुर, दानव, राक्षस आदि जातियों के लोगों के आर्यों के साथ घमासान युद्ध होते थे. इस कारण आर्यों ने उनको विकृत एवं भयंकर आकृति वालों के रूप में चित्रित किया तो भी वे सत्य को छिपा नहीं पाये अभेद्य किले और नगर वाले त्रिपुरासुर, रावण एवं बलि-चक्रवर्ती, तत्वज्ञ विरोचन तथा प्रह्लाद इत्यादि सब असुर, दानव, राक्षस जातियों के ही थे न ? क्या शुक्राचार्य दानव गुरु नहीं थे ? पुराणों में लिखा गया कि कश्यप ब्रह्मा से असुरों के पैदा होने के पश्चात् ही सुर पैदा हुए

तो फिर वह स्वर्णलंका अब कहां है ? श्री एस. बी राय ने एक लेख में लिखा— 'सिन्धु नदी और नारारुप के बीच में मोहनजोदड़ो एक लंका की तरह थी ऐसे कुछ पुरावस्तु एवं साहित्य संबंधी प्रमाण प्राप्त हैं जिनके आधार पर सिद्ध किया जा सकता है कि मोहनजोदड़ो नगर ही रावण की स्वर्णलंका थी ''

यह बताने वाली एक कहानी है कि रेवा नदी के तट पर जो युद्ध हुआ, उस में कार्तवीर्यार्जुन ने रावण को बन्दी बनाया था और उस को खूब मरम्मत करके उसे छोड़ दिया. मध्य प्रदेश में रावणासुर का मन्दिर है रावणासुर की मूर्तियां तमिलनाडु में मौजूद हैं डा संकालिया, डा. पुसालकर आदि जैसे प्रमुख विद्वानों का मत है कि विन्ध्य के उत्तर में स्थित छोटानागपुर प्रदेश में अथवा उसके आसपास किसी दूसरी जगह पर रावण की स्वर्ण-लंका विद्यमान रही होगी

अतएव यह कहा जा सकता है कि रावण की लंका श्रीलंका नहीं है, हड़प्पा की सभ्यता जहां व्याप्त हुई, वहां के किन्हीं स्थानों में वह उपस्थित थी. हम यूं समझ सकते हैं कि जब दानव, राक्षस आदि जातियों पर आर्यों का आधिपत्य जमा था, तब रामकथा में युद्ध की घटनाओं को जोड़कर वाल्मीकि महर्षि ने रामायण महाकाव्य का प्रणयन किया

महाभारत

रामायण की कथा से भिन्न है, महाभारत की कथा. रामायण का मूल त्याग है, तो महाभारत का मूल है स्वार्थ और राज्य का लोभ. राम कथा ने रक्तसबंध का महत्व माना संजय द्वारा कथित युद्ध गाथा ने उसका तिरस्कार किया जब पशुगण की वृद्धि हुई और कृषि का आरम्भ हुआ तब निकली थी रामकथा जब खेती का विकास और नागर-सभ्यता का प्रारम्भ हुआ, तब प्रकट हुई थी महाभारत की कथा अतएव इनके दृष्टि-कोण तथा उद्देश्य अलग-अलग हैं.

जिस समय आर्य असुर, राक्षस आदि जातियों से लड रहे थे, तब उनमें बडी एकता थी रक्तसबंध का महत्व था एक गोत्र के सभी लोग अपनी सारी गायों को एक ही जगह पर चराते थे अगर दूसरों से लडना पडा तो बारी-बारी से एक गोत्र के लोगों की मदद में दूसरे सब गोत्रों के लोग आकर लड़ते थे. यह एकता सिर्फ यहीं पर नहीं थी बल्कि पशुगण का पालन करने की दशा में रहने वाले सभी देशों में होती थी यूनान म रक्तसबंध का जो महत्व था उसका वर्णन होमर महाकवि ने अपने काव्य में किया

होमर के काव्य में लिखा है कि ट्राजन युद्ध में सेनाओं का कबीलेवार और गणवार विभाजन करो ऐसा करने से कबीलों और गणों के लोग आपस में मिलजुल कर शत्रुओं से युद्ध करेंगे कबीले का एक गण दूसरे गण का सहारा बनेगा.

इतना महत्व रखने वाले रक्तसबंध का कालान्तर में राज्य लोभ ने तिरस्कार कर दिया. जब अर्जुन ने गण धर्म की बात उठायी, तब कृष्ण ने क्षात्रधर्म की शिक्षा दी कृष्ण ने कहा कि चाहे पिता हो, या गुरु हो, किसी का भी ख्याल किये बिना, जो कोई तुम्हारे आड़े आये, उसे तुम खतम कर डालो.

कार्ल मार्क्स ने कहा—"जैसे-जैसे जमाना बदलता जाएगा वैसे-वैसे रक्त सबंध बरफ-सा घनीभुत हो जाएगा किन्तु जब-जब समाज में प्रधान परि-वर्तन होंगे, तब-तब तो वह जरा-सा पिघलेगा."

हा ! ठीक वैसे ही हुआ जगली दशा में यदि मानव गणों तथा कबीलों के रूप मे मिलजुल कर नहीं जीते तो उनका अस्तित्व ही असंभव हो जाता. इसी कारण से तब रक्त सबंध ने उतनी महत्ता प्राप्त की पशुगण पालन की दशा में भी वही स्थिति जारी रही. किन्तु कृषि-दशा में आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन होने से संपत्ति की वृद्धि हुई. इसके फलस्वरूप

समाज में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ रक्त संबध का प्राधान्य घट गया. इसका विवरण देते हुए कि यह परिवर्तन कैसे हुआ, एंगेल्स ने लिखा है

"जब से मानव ने कच्चा लोहा पिघलाकर ढालने की कला सीखी, तब से असभ्यता युग के बाद की दशा आरम्भ हुई मानव समाज के विकास क्रम में तब तक बीती हुई दशाओं में जो उत्पादन हुआ, उससे असभ्य दशा के बाद की दशा में किया गया उत्पादन कई गुना अधिक था. उस युग के यूनानी, रोमनगर के निर्माण काल के पहले के इटालियन, टासिटस के काल के जर्मन, तथा वीकिंग के समय के नार्सिमन जैसे लोग इसी दशा के थे."

"होमर के गीतों में—खास कर इलियड महाकाव्य में—हमें दृष्टिगत होता है कि असभ्य दशा के बाद की दशा बहुत ही उच्च स्थिति में थी उस समय तक लोहे के औजारों का अत्यधिक विकास हुआ लुहार की धौंकनी, हस्त-कला, कुम्हार का चाक इत्यादि का आविष्कार हुआ. तेल निकालना भी उस जमाने के लोगों ने सीख लिया लोहे का उद्योग एक कला के रूप में विकसित हो रहा था गाडी और रथ भी बन गये लकडी के तख्तों तथा पेड के तनों से जहाज निर्मित हुए पडोसी देशों से ही नहीं, समुद्रों के पार वाले देशों से भी व्यापार आरम्भ हुआ गृह निर्माण की विद्या भी एक कला के रूप में परिणत हो रही थी बुर्ज और कुब्जों के साथ किलों का निर्माण होने लगा होमर के काव्य जैसे महाकाव्य तथा पुराण लिखे गये"

इस प्रकार सभी क्षेत्रों में विकास हुआ इस विकास के साथ समाज में वर्ग बने. यूनान के समाज के लोग कुलीन (पंचायत) के प्रमुख तथा (वीर योद्धा) किसान तथा हस्त-कलाकार (दस्तगीर) इन तीनों वर्गों में संगठित हुए इनकी बेगारी करने वाले गुलाम होते थे. ध्यान देने की बात यह है कि इन गुलामों में कुछ आर्य जाति के भी थे

वर्ण व्यवस्था का आरम्भ

यह वर्ण विभाजन यहा तक न रुका आर्यों से हारी हुए आर्येतर जातियों के साथ, वैदिक कर्मानुष्ठान न करने वाले आर्यों को भी शूद्र वर्ण में शामिल किया गया. कहा गया कि इन शूद्र वर्ण के लोगों को अग्र वर्णों के लोगों के समान जीने तथा शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार नही है. ऐसे दण्ड निर्णय करने वाले धर्म-सूत्रों का निर्माण किया गया कि शूद्र यदि तपस्या करें तो उसका सिर काट दिया जाना चाहिए, वेद-पाठ सुने तो सीसा पिघलाकर उसके कान में डाल दिया जाना चाहिए और वेद-पाठ करे तो जीभ काट दी जानी चाहिए ऐसी कहानिया लिखी गयीं कि अग्र वर्ण वाले की सेवा करें, तो बस, शूद्रों को मुक्ति मिल जाती है. यह कैसा

अन्याय है ? पूछने वालों की जबान बन्द करने के लिए पुरुषसूक्त की रचना की गयी—

"ब्राह्मणोऽस्यमुख मासीत् बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरूतदस्य यद्वैस्य· पद्भ्या शूद्रो अजायत ॥

इस ऋचा के साथ "पुरुषसूक्त" को ऋग्वेद में जोडा गया यह कहकर वर्णाश्रम धर्म जनता के सिर पर मढ दिया गया "वेद ब्रह्मा के मुख से निकला, अत· कोई उसका तिरस्कार नही कर सकते" फिर भी क्या सच्चाई छिप सकती है?

श्री मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री ने अपने वैदिक वाङमय के इतिहास में लिखा—"ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि की वर्ण व्यवस्था ऋग्वेद काल के अंतिम भाग में बनी, न कि आरम्भ काल में—कहकर इतिहासकारों ने जो कल्पना की वह समुचित ही मालूम होती है" उनका यह कथन ध्यान देने योग्य है

पुरुषसूक्त के निर्माता वैदिक पुरोहित यदि यह कहकर डींग मारते थे कि हम ब्रह्मज्ञानी हैं, ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न ब्राह्मण हैं तथा देवों से भी समुन्नत हैं तो हाथ में तलवार लेकर लडने वाले क्षत्रिय योद्धा अपनी छाती ठोककर कहते थे कि हम क्षत्रिय हैं, हमने सुर-असुर युद्धों में सुरों के पक्ष में डटकर असुरों को पराजित किया इस प्रकार कहते हुए वे लोग सामान्य जनता को अपने दास-दासियों के रूप में इस्तेमाल कर लेते थे

तब तक कृषि तथा गोपालन करने वाले वैश्य धीरे-धीरे वे काम छोड़कर लाभदायक व्यापार में लग गये अत. खेतीबारी करना, पशु-पालन करना और उनका फल उच्च वर्णवालों को सौंप देना शूद्रों का कर्तव्य बन गया अगर शूद्र उस कर्तव्य का पालन न करते तो क्षत्रिय कार्यक्षेत्र में उतरकर उनकी चमड़ी उधेड देते थे

एक ओर उच्च वर्णों के आर्य सामान्य जनता का शोषण करते थे तो कुछ कबीलों के लोग लूट-मार करते थे आंध्र, पुण्ड्र, पुलिंद, शबर और मूतिब दस्युओं (चोर-लुटेरों) में अधिक प्रभाव है इस सम्बंध में ऐतरेय ब्राह्मण में जो उल्लिखित है, वह ध्यान देने योग्य है

इन परिस्थितियों में कुछ क्षत्रिय वंश शक्तिसंपन्न बन गये, उनके मुकाबले में कोई ठहर न सकते थे इसलिए रथ, गज तुरग दलों के साथ पैदल सिपाहियों के रूप में इन शूद्रों को भर्ती करके चढाइयां करने के लिए तैयार होते थे और आर्य, आर्येतर का भेद किये बिना सबको लूटते थे संपत्ति का अपहरण करने के साथ वे कन्याओं का भी अपहरण करते थे इतना ही नहीं, दूसरे प्रकार की वैवाहिक पद्धतियों की अपेक्षा कन्याओं का अपहरण करके किये जाने वाले विवाह (राक्षस विवाह) की पद्धति को उत्तम कहकर प्रशंसा करते थे दूसरों पर हमले करना क्षत्रिय धर्म के रूप में वर्णित होता था (इन चढाइयों तथा राक्षस विवाहों से संबंधित कितनी ही कहानियां महाभारत और भागवत ग्रंथों में प्रस्तुत हैं)

गणतन्त्रों की व्यवस्था तथा शासकों का चुनाव

इस प्रकार मनमाने ढंग से चलने वाली लूट-मारों तथा हमलों से बचने के लिए सगे-संबंध और दोस्ती रखने वाले सभी कबीले एक साथ जुड़ गये अत: उन कबीलों के अधीनस्थ सारे प्रांत एक ही सामूहिक सरकार के शासन में एकत्रित हुए. अपनी सुरक्षा के साथ विविध वस्तुओं का उत्पादन, और उनकी अदली-बदली करना जैसे सभी काम वे स्वयं करने के लिए समर्थ हुए. इस मेल-जोल से संबंधित जानकारी महाभारत तथा भागवत में कहानियों के रूप में प्राप्त होती है.

उन कहानियों का विस्तृत विवेचन करके देखने से पता लगता है कि यदु, वृष्णि, भोज, कुकुर, अंधक, तथा कैकय वंशों के लोग मिल-कर एकता से रहे. उग्रसेन उनके समूह का अधिपति था कृष्ण, बलराम, सात्यकि, कृतवर्मा जैसे वीर उन वंशों के नेता थे जब उग्रसेन के पुत्र कंस ने सैनिक अधिनायक तथा दुराचारी के रूप में व्यवहार किया, तब वसुदेव के पुत्र वासुदेव ने उसका वध किया. फिर भी यादवों ने राज्य-सत्ता को अपने हस्तगत नहीं किया वासुदेव ने फिर से उग्रसेन को ही अधिपति के रूप में नियुक्त किया और सबके बीच में एकता साधी उसके उपरांत उन्होंने कई शत्रुओं पर विजय प्राप्त की

किन्तु कुरु-पांडव युद्ध में जिसने जिसके पक्ष में शामिल होना चाहा, वह उसके दल में जा मिला सात्यकि के नेतृत्व में वृष्णि वीर पांडवों के पक्ष में लड़े तो कृतवर्मा के नेतृत्व में भोजों ने कौरवों की तरफ से युद्ध किया वासुदेव ने पांडवों की जिम्मेदारी सम्हाली, किन्तु दुर्योधन आदि कौरवों का प्रेमी बलराम तीर्थयात्रा करने चला गया. कैकय आधे उस तरफ, आधे इस तरफ बंट गये महाभारत में स्पष्ट लिखा है कि महाभारत युद्ध की समाप्ति के थोड़े दिन बाद ही यादव कुल में मुसल (फूट) पैदा हुआ. यदु, वृष्णि, काम्भोज इत्यादि सभी लोगों ने प्रतिस्पर्धी बनकर एक दूसरे का वध किया.

समाज विकास के क्रम में, किसी एक दशा में ऐसे कुछ गणतंत्रों के बनने तथा अपने गणमुख्यों को चुनने की जो घटना हुई, उसका ठीक पता न लगने का कारण हमारे विद्वानों की लिखी हुई रचनाएं ही हैं, उस दशा के इतिहास की जानकारी देने वाली कथाएं या गाथाएं हमें उप-लब्ध नहीं हैं यदि हम पुराणों को देखें तो वे शापों और वरदानों की अभूत कल्पनाओं से भरे हैं

आंध्र प्रदेश में आज एक खास कुल के सभी व्यक्ति राजा ही कहलाते हैं. इसी प्रकार उपर्युक्त सभी लोग उस जमाने में राजा ही थे. किन्तु उनमें कोई भी चंद्रगुप्त, समुद्रगुप्त जैसे सर्वतंत्र-स्वतंत्र राजा नहीं थे. एकच्छत्र अधिपति बनकर उन्होंने राज्य-शासन भी नहीं किया यह कहने के लिए निम्नलिखित उदाहरण पर्याप्त हैं

ब्रह्मश्री मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री ने लिखा—"ऋग्वेद का 'राजा'

शब्द—केवल दशमभंडल की एक ऋचा में छोड़कर—दूसरे सारे मंडलों में सिर्फ गणतंत्र शासक, कुल प्रमुख, अथवा प्रभु का अर्थ ही प्रकट करता है"

महाभारत में यह बात स्पष्ट है—"कुलीन, शौर्यसपन्न और अधिक सेना का अधिपति ये तीनों प्रकार के व्यक्ति इस भूतल में राजा के नाम से विख्यात होने के लिए योग्य हैं." इसलिए यह कह सकते हैं कि महाभारत काल में जो क्षत्रिय कुल में पैदा हुए जो वीर तथा सेनापति थे, वे राजा के नाम से पुकारे गये. अब चुनाव की बात देखें

अपने राजा को चुनकर उस राजा की विजय प्राप्ति के लिए प्रजा ने जो प्रार्थना की वह अथर्व वेद में लिखी है. (अथर्व.-३-४) उस तरह चुनने की रीति उस समय में थी, इसी कारण से यह कहानी कही गयी कि देवों ने नहुष को अपना राजा चुना

अत. हम कह सकते हैं कि उस जमाने के राजा सिर्फ कुल प्रमुख, गण शासक अथवा सेनानायक ही थे और जनता उन्हें चुनती थी इनके साथ क्षत्रिय वर्ण के लोगों के भी अपने को राजा कहकर मूछों पर ताव देने से असली तथ्य आखों से ओझल हो गया

चद्रगुप्त मौर्य के दरबार में यूनानी राजदूत मैगास्थनीज ने जो लिखा उसके अनुसार मालूम होता है कि आध्रों के एक लाख पैदल सिपाही, दो हजार अश्वों की सेना, हजार हाथी और चारों ओर चहार दीवारवाले तीस नगर थे. फिर भी यह विदित नही होता कि तब का राजा कौन था? यदि सर्वसम्पूर्ण अधिकारों से सम्पन्न कोई राजा होता तो मैगास्थनीज उसका नाम नहीं लिखता ? इसके अलावा हमें ऐसे कुछ ऐतिहासिक प्रमाण मिलते हैं कि चद्रगुप्त ने कुछ गणतत्रों को जीता ?

इसमें कोई शक नहीं है कि अशोक के शासनकाल में मगध के बाद गिनने लायक राज्य आध्रों का राज्य ही था तो भी इसका पता नहीं लगता कि तब आध्रों का राजा कौन था ? इसके प्रबल प्रमाण हैं कि अशोक ने बडी मुश्किल से कलिंग राज्य जीता परन्तु यह कहीं नहीं दिखायी देता कि तब कलिंग का राजा कौन था ?

अत यह कह सकते हैं कि उस दशा में कई नेताओं से युक्त उच्च पदाधिकारियों के समुदाय के शासन में कलिंग तथा आध्र राज्य थे उसके पश्चात स्वल्पकाल में ही कलिंग तथा आध्र में श्रीमुख सातवाहन के सर्वतंत्र-स्वतंत्र शासकों के रूप ने सिहासन पर अधिष्ठित होने का पता लगता है.

इस प्रकार सम्पूर्ण स्वतंत्र सत्ता वाले शासकों का शासन शुरू होते ही पचायत शासन पद्धति पूर्ण रूप से नष्ट हो गयी राजपद तथा अन्य पद उनके वशानुगत अधिकारों के रूप में परिणत हो गये यूनान, इटली आदि देशों में राजपद मौरूसी हक के रूप में कैसे परिणत हो गया, इसका विवरण देते हुए एगेल्स ने इस प्रकार लिखा—"असभ्यता-युग के बाद की दशा में कई कबीले छोटे गणतत्रों (कान्फेडरेशनों) के रूप में बने भिन्न-भिन्न कबीलों की जमीनों के मिल जाने से वह सारा प्रदेश

एक ही जाति के देश के रूप में मान्यता प्राप्त कर सका. उसकी सुरक्षा के लिए सेनापति आवश्यक समझे गये."

"सेनानायक, उसके ऊपर परिषद् (कौंसिल), उसके ऊपर प्रजा सभा (या लोक सभा) ये ही उस समय की गण व्यवस्था के शासन के अंग थे ये क्रमशः सैनिक प्रजातंत्रों के रूप में परिणत हुए. सेना तथा युद्ध की तैयारियां, जाति के जीवन के प्रधान अंग बने संपत्ति का संग्रह करना ही जिनके लिए अपने जीवन का परम ध्येय होता है उनको अपने पड़ोसी की संपत्ति देखते ही जलन होती है. पुरुषार्थ रहित असभ्य लोग मेहनत करके कमाने की अपेक्षा लूटमार करके संपन्न बनना सुलभ तथा सम्मानप्रद समझते हैं. इस प्रवृत्ति के कारण, उसके पहले आत्मरक्षा के लिए अथवा अपने कबीले की बढ़ी हुई जनसंख्या के वास्ते नयी जगहों की जरूरत पड़ने पर उनकी प्राप्ति के लिए जो युद्ध किये गये, वे एक धंधे के रूप में परिणत हुए केवल लूटमार के लिए ही युद्ध हुए. किलों की सुरक्षा के लिए नगर बने किले की चहारदिवारी की बुनियादों के लिए खोदी गयी खंदकों में गण-व्यवस्था की समाधि बन गयी किले की दीवारों पर जो बुर्जी बनी उन्होंने सभ्यता की सीमाओं को छुआ आंतरिक परिस्थिति भी यही थी लूटमार के लिए किये गये युद्धों में सेनापति तथा उनके अनुयायी सशक्त बने उनका चुनाव करने वाली जनता का हक सिर्फ नाम के वास्ते हो गया. उसके पश्चात कुछ सेनापति राजा बन गये तो कुछ सामंत राजा बन सके"

एंगेल्स ने जिन चढ़ाइयों और युद्ध की तैयारियों के बारे में कहा, वे सब हमारे महाभारत में भी हमें दिखायी देती हैं. चढ़ाइयां चलाना, कन्याओं का अपहरण करना, उत्तर-गोग्रहण दक्षिण-गोग्रहण जैसी बातें उसमें मौजूद हैं खाण्डव वन जलाकर, नागों को भगा देने की घटना भी उसमें वर्णित है राजसूय यज्ञ के नाम पर हमले करके कई जातियों से कर वसूल करने की बात भी उसमें मिलती है निवात, कवच, कालकेयादि दानव जातियों का सर्वनाश किये जाने का उल्लेख उसमें पाया जाता है धर्म-संस्थापना के नाम से कई अधर्म कार्य हुए भागवत आदि पुराणों को पढ़ने से इनकी सीमा नहीं दिखती. असंभव कल्पनाएं, शाप और वर-दानों के बीच में इन्हें सुंदर रूप में जड़ने के कारण ये ठीक तरह से पहचाने नहीं जा सकते किन्तु इसमें शक नहीं है कि असभ्य दशा के बाद की दशा में यूनान, इटली आदि देशों में जो घटित हुआ वह हमारे देश में भी घटित हुआ

असंभव कल्पना

महाभारत ग्रंथ में लिखा है कि महाभारत युद्ध द्वापर युग में हुआ, अठारह अक्षौहिणियों की सेना उस युद्ध में मृतायी हो गयी और अन्त में केवल पंच पांडवों के अलावा वासुदेव, सात्यकि और कृतवर्मा, अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा ययुत्सु जीवित रहे

यदि महाभारत युद्ध द्वापर युग के अंत में हुआ होता तो उसका समाचार सूत्रकार अश्वलायन और शांखायन के पहले किसी को मालूम न होने का कारण क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता. ब्राह्मण ग्रंथों में कुरुक्षेत्र के यज्ञ-याग आदि की कर्मभूमि के रूप में वर्णित हुआ है, न कि महाभारत की तरह युद्ध क्षेत्र के रूप में. कौरवों के नाम, पांडवों के नाम अथवा द्रोण, कर्ण, धृष्टद्युम्न आदि वीरों के नाम ब्राह्मण ग्रंथों में उपलब्ध नहीं हैं. उनमें कौरव, पांडवों के नामों का कोई उल्लेख नहीं है. किसी एक ब्राह्मण ग्रंथ में अर्जुन का नाम मिलता है, किन्तु उसे इन्द्र का प्रच्छन्न नाम कहा गया है. धृतराष्ट्र का नाम यजुर्वेद में है, एक यज्ञ करने की प्रक्रिया के वर्णन के सिलसिले में वह नाम दिखायी देता है. बौद्धों की जातक कथाओं में विदुर, धनंजय, युधिष्ठिर तथा धृतराष्ट्र के नाम मिलते हैं किन्तु वहां महाभारत का कोई जिक्र नहीं है.

युधिष्ठिर, भीम और विदुर के नाम पाणिनीय ग्रन्थ में हैं, किन्तु वहां भी कुरुक्षेत्र की बात नहीं है. सबसे पहले कुरुक्षेत्र युद्ध का उल्लेख केवल शांखायन के श्रौतसूत्र में मिलता है. उसके उपरांत महाभारत की कथा का ई.पू. दूसरी शताब्दी में पतंजलि ने विवरण दिया. उस समय से वह कथा शाखोपशाखाओं में विस्तृत होकर महाभारत ग्रन्थ के रूप में परिणत हुई.

खैर, यदि हम देखें कि इतने विशेष रूप से वर्णित महाभारत युद्ध से सम्बन्धित कोई विश्वसनीय प्रमाण हमारे पुरातत्त्व शास्त्रज्ञों को मिले हैं क्या ? तो नकारात्मक उत्तर ही मिलता है. आर्कियलाजिकल सर्वे आफ इंडिया वालों ने हस्तिनापुर, मथुरा और कुरुक्षेत्र में जो खुदाइयां कीं उनमें यह कहने के लिए कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिले कि तीन हजार साल पहले वहां नगर-सभ्यता थी. पांचाल प्रदेश में कुछ ताम्रपत्रों तथा हस्तिनापुर प्रदेश में कुछ भूरे रंग के मिट्टी के घड़ों के मिलने का पता लगता है. इसी कारण से श्री जगत्पति जोशी ने कहा—"यह कहना संभव नहीं कि ई.पू. नौ सौ साल के आसपास कुरुक्षेत्र युद्ध हुआ." डा० सकालिया ने भी इसी प्रकार का मत प्रकट किया. डा. सरकार ने कहा—"कुरुक्षेत्र का युद्ध केवल अद्भुत कल्पना है." तो भी क्या वेदपंडित चुप रहेंगे ?

कुछ वेद पंडितों का दावे के साथ कहना है—"वेद व्यास ने जो कहा वह अद्भुत कल्पना कैसे हो सकती है? भूमि का भार घटाने के लिए अवतरित सुर-असुरों के बीच में चला युद्ध था वह. वे बन्दूकों और तोपों से लड़े नहीं. दिव्य अस्त्र-शस्त्रों को लेकर वे लड़े. अतएव सब कुछ भस्मीभूत हो गया. अब आज के मानव जाकर वहां सबूत ढूंढें तो क्या मिलेंगे?"

यह बताने की कोई खास जरूरत नहीं है कि जिन पर विश्वास कर सकना असंभव है, ऐसे अवतारों तथा दिव्य अस्त्रों का सहारा लेकर किया जाने वाला यह तर्क कितना हास्यास्पद है? उत्तर गोग्रहण के अवसर पर जिस अर्जुन ने क्षणमात्र में सारे कौरव वीरों के छक्के छुड़ा दिये, उसको बाद के कुरुक्षेत्र युद्ध में कौरव वीरों को हटाने के लिए अधर्म पद्धतियों का अव-

लब लेने पर भी अठारह दिन का समय क्यों आवश्यक हुआ ? यह समझ में नहीं आता

इस प्रकार जो कहानियां अन्योन्य विरुद्ध हैं, वे सब वेद-व्यास के सिर मढ़ दी गयीं यह भी कोई निश्चित रूप से कह नहीं पा रहे हैं कि असल में यह वेद-व्यास कौन था फिर भी वैदिक पंडित चुप नहीं रहते

महाभारत में यह बात स्पष्ट है कि दरअसल यह युद्ध राज्य-भाग के लिए हुआ था, वह भी सिर्फ पांच गांवों के लिए था संजय से धर्मराज की कही ये बातें ध्यान देने योग्य हैं—"यदि आधा भाग देना दुर्योधन को पसंद नहीं तो हम पांचों पांडवों के बसने के लिए पांच स्थान दिये जायें तो भी बस है." एक ओर जिस महाभारत में दुर्योधन का राजाधिकार कहकर वर्णन किया गया, उसी में उसके गोगण होने का भी जिक्र किया गया घातुक मृगों की शिकार बनने से गायों को बचाने के बहाने से दुर्योधन ने अपने साथियों को लेकर घोष यात्रा की दक्षिण गोग्रहण तथा उत्तर गोग्रहण की कथाएं उन्हीं से सम्बंधित हैं अब फिर गोकुल वासियों के विषय में कहना ही क्या है ? उनकी सारी संपत्ति आंध्र के काअंराजु के गोगण की संपत्ति जैसी ही थी न । इसके अतिरिक्त शास्त्रज्ञों का कथन है कि आज से तीन हजार साल पहले कुरु तथा पांचाल प्रदेशों में कृषि का विकास हुआ ही न था

श्री जगत्पति जोशी ने अपना विचार यों प्रकट किया—"आज से पांच हजार वर्ष पूर्व कुरु तथा पांचाल प्रदेश घने जंगलों से भरे थे ई.पू. नौ सौ साल पहले पशुगणों को चराते हुए एक प्रांत से दूसरे प्रांत में जाने वाले खानाबदोश कबीलों ने थोड़ी-बहुत खेती-बारी का काम भी वहां शुरू किया इसके सबूत (कार्बन १४ के निर्णय के अनुसार) हमें मिले"

इसलिए यह कहा जा सकता है कि द्वापर युग में अठारह अक्षौहिणियों की सेना के कुरुक्षेत्र संग्राम में भिड़कर पाशुपत, नारायण तथा ब्रह्मशर नामक अस्त्रों से युद्ध करने का वर्णन करते हुए जो रचनाएं लिखी गयीं, वे सब कवि की कल्पनाएं ही थीं, न कि वास्तविक

तो फिर क्या हम सोचें कि कुरु-पांडव युद्ध असभ्य दशा के युग के मध्य में, पशुगणों का पालन करने की दशा में हुआ था ? किन्तु वह भी ठीक नहीं बनता, क्योंकि चाहे किसी भी प्रदेश में हो, कृषि का विकास जिस दशा में हुआ सिर्फ उसी दशा में नगर निर्माण का आरम्भ हुआ. अतः हम यह कैसे कह सकते हैं कि नगर निर्माण के पहले ही कौरव-पांडव युद्ध हुआ ?

पुरावस्तुशास्त्र के अनुसार, ई.पू. नौ साल के समय में कुरु तथा पांचाल प्रांतों में कृषि का प्रारम्भ हुआ इसलिए वहां उसके एक सौ या दो सौ साल बाद कृषि का विकास होने पर हस्तिनापुर और इन्द्रप्रस्थ नगर निर्मित हुए होंगे इस प्रकार शहरी सभ्यता का प्रारम्भ होने के बाद ही कौरव-पांडव युद्ध जैसे युद्ध होने के अनुकूल परिस्थितियां बनती हैं फिर भी कह

सकते हैं कि अगर कौरव-पाडव युद्ध सचमुच हुआ तो वह असभ्यता युग के बाद की दशा में ही हुआ होगा

असभ्यता युग के बाद की दशा में कृषि का विकास हुआ स्थिर निवास स्थान बने जैसे एंगेल्स ने कहा—विविध वस्तुओं का उत्पादन तथा अन्य देशों से व्यापार का प्रारम्भ हुआ अपनी धन-दौलत की सुरक्षा के लिए गावों के चारों ओर चहारदीवारियों का निर्माण किया गया. उन चहार-दीवारियों के मध्य में नगरों का विकास हुआ शस्त्र प्रयोग में सुशिक्षित वीर योद्धाओं की जरूरत पड़ी युद्धव्यूहों की रचना की गयी. व्यूहों के अनुकूल विविध सेनाओं के सचालन के लिए सेनापतियों का चुनाव किया गया प्रजा की सेवा करने की क्षमता रखने वाले प्रमुखों को राजाओं के रूप में नियुक्त कर लिया गया कालक्रम से यह राजपद वंश-परम्परागत अधि-कार के रूप में परिणत हो गया

इस प्रकार बदलती दशा में रक्त सम्बन्ध का महत्व मानने वाले गण-धर्म का तिरस्कार हो गया क्षात्रधर्म के नाम पर सगे-सम्बन्धियों पर भी तलवारें उठायी गयीं स्वार्थ ही सर्व-समर्थ बन गया तब तक घनिष्ठ बना हुआ रक्त सम्बन्ध पिघल गया इस वजह से सगे-सम्बन्धियों के बीच में भी युद्ध हुए इसी परिस्थिति को महाभारत हमें दर्पण में दिखा रहा है यही हमारे लिए आवश्यक तथ्य है

महाभारत की कथा इस दशा से सम्बन्धित है इसीलिए उसने यह सदेश उद्घोषित किया—"राज्य वीर भोज्यं", चाहे कितने ही ज्वार-भाटे आये, तो भी कौरव या पाडवों ने राज्य का लोभ नही छोडा कुरुक्षेत्र युद्ध में दोनों पक्षों के योद्धा अधर्म युद्ध पर उतारु हुए भाई-भाई, बाप-बेटे, गुरु-शिष्य, एक-दूसरे से भिडे, और एक-दूसरे को मार कर मरे इसी का विवरण उस ग्रन्थ में मिलता है

उस दशा में राज्य-लोभ से युद्ध के लिए तैयार होने के अतिरिक्त उप-जाऊ खेतों के लिए, गायों के लिए, आखिर में कन्याओं के लिए भी हमल किये गये

चाहे किसी भी देश का इतिहास देखें तो भी असभ्यता वाले युग के बाद की दशा में यही परिस्थिति थी अगर हम **ओल्ड टेस्टामेंट** पढ़ें तो राजपद के वंश परम्परागत अधिकार के रूप परिणत होने के लिए रास्ता निकालने वाली परिस्थितियाँ हमारी आखों के सामने प्रत्यक्ष होती हैं

इज्रायल का युद्ध

यहोवा के मंदिर में याजक (पुजारी) के रूप में रहने वाले 'एली' सज्जन ही थे, किन्तु उसके बेटे दुर्जन थे नैवेद्य को चुपचाप अपने मुह में डालकर निगल जाते थे. और मंदिर में चढ़ाई गयी भेंटों को अपनी जेब में डाल लेते थे. अगर मौका मिले तो बस, व्यभिचार भी करते थे अतएव जनता ने उनको हटाकर समूयेल को याजक (प्रीस्ट) के रूप में नियुक्त कर दिया.

सम्युयेल सज्जन था. बुद्धिकुशल न्यायमूर्ति था फिर भी उसके बेटे रिश्वत-खोर थे इस कारण से धार्मिक पदाधिकारियों का गौरव तथा प्रभाव घट गये

उसी समय फिलिस्तीनियों से जो युद्ध हुआ, उसमें इज़ायल के योद्धाओं ने अपना कदम पीछे हटाया इस भय ने उन्हें घेर लिया कि कहीं हम हार न जायें. उन दिनों में पराजय का अर्थ सर्वनाश ही था विजयी पक्ष के लोग हारे हुए पक्ष के लोगों की कन्याओं का अपहरण करके बाकी सबको अनेक नरक यातनाओं के शिकार बनाते थे. नहीं तो गुलामों के रूप में पकड़ ले जाकर उनसे बेगार करवाते थे. जितना मिले, उतना लूट लेने के बाद गांव और शहरों को जला देते थे. इनके अतिरिक्त डाकुओं के गिरोहों की डकैतियों की झंझट तथा भाड़े की सेनाओं के घातक अत्याचारों के मारे बहुत-से कबीले बर्बाद हो गये

अतः इज़ायल की जनता ने निश्चय कर लिया कि जो हमें युद्ध में विजयी बना सके और जो पक्षपात-रहित न्याय की दृष्टि से हमारा शासन कर सके, उसी को हम अपना राजा नियुक्त कर लेंगे इसके लिए सम्युयेल राजी नहीं हुआ उसने जनता को चेतावनी दी कि चाहे किसी भी व्यक्ति को हम राजा नियुक्त कर लें तो भी जनता को वह जो कुछ मांगे, वह सब कुछ देना पड़ेगा और वह जो कुछ कहे, वह सब कुछ करना पड़ेगा. फिर भी जनता ने उसकी चेतावनी की परवाह नहीं की. इसलिए जनता के दबाव से हार मानकर सम्युयेल को सॉल का राज्याभिषेक करना पड़ा

उसके पश्चात फिलिस्तीनियों से जो युद्ध हुआ उसमें इज़ायल के लोगों की जीत हुई सॉल की कीर्ति तथा प्रतिष्ठा बढ़ी परन्तु याजक सम्युयेल के आदर और प्रेम को सॉल ने खो दिया इसके दो कारण हैं

राजा ने एक दिन यहोवा के निमित्त बलिदान समर्पित करने के लिए तैयार होकर सम्युयेल को निमंत्रित किया परन्तु ठीक समय पर प्रस्तुत हुए बिना सम्युयेल ने दो दिन का विलंब किया. लाचार होकर सॉल ने बलिदान समर्पण करने की विधि का स्वयं संचालन किया. बाद में आया हुआ सम्युयेल यह जानकर सॉल पर आग बबूला हो गया. (भागवत में भी लिखा है कि अपने आने तक बिना यज्ञ करने के कारण निमि को वशिष्ट ने शाप दिया ये शाप और कोप राजाओं तथा पुरोहितों के मध्य अधिकार के लिए जो संघर्ष चले, उन्हीं से सम्बन्धित हैं.)

एक बार सम्युयेल ने सॉल से मिलकर मांग की कि सब अमालेकियों को शिशु, बाल और वृद्धों सहित मार डालो तथा उनकी सारी संपत्ति नष्ट करके, उनके सब शहर और गांवों को जला डालो. उसने सॉल को समझाया कि यह मांग मेरी नहीं है, यहोवा ने स्वयं यह आदेश दिया है. तुरन्त सॉल ने अपनी सेनाओं को भेजकर सारे अमालेकियों का कत्लेआम करवा दिया. उसने उनके घर-बार जलवा दिये और फसलों को बर्बाद कराके पशुओं का वध करवा दिया. किन्तु वह उनके राजा को मारे बिना उसे बंदी के रूप में पकड़कर लाया इसके अतिरिक्त भगवान यहोवा को बलि देने के लिए

कुछ गाय के बछड़ों और मोटी-ताजी भेड़ों को भी वह अपने साथ ले आया इससे सम्युएल क्रोध के मारे उबल पड़ा उसने सौल की भर्त्सना की कि यहोवा की आज्ञा का ज्यों का त्यों पालन किये बिना शत्रु राजा तथा कुछ बछड़े और भेड़ों को जिंदा छोड़कर तुम यहोवा के गुस्से का शिकार बन गये. बंदी के रूप में लाये गये राजा का सिर उसने स्वयं काट दिया. उतने से न रुककर यूदा के वंशज दावीद को उसने गुप्त रूप से राज्याभिषिक्त कर दिया इसके कारण इज्रायल में सगे-सम्बन्धियों के बीच युद्ध शुरू हो गये. जैसे यहा पर कौरवों के विरुद्ध पांडव उठ खड़े हुए, वैसे ही वहा इज्रायलियों के खिलाफ यूदा वंशजों ने तलवार उठायी.

दोनों पक्षों के बीच कुछ युद्ध हुआ अंत में दावीद की जीत हुई, तो उसे संतोष न हुआ अब्राहम के भाई के वंशज मोयाबियों को तितर-बितर करके और अम्मोनियों को कत्लेआम का शिकार बनाकर उसने उनकी सब जमीनों पर कब्जा कर लिया

जैसे-जैसे दावीद का राज्य बढ़ता गया, वैसे-वैसे उसकी पत्नियों की संख्या भी बढ़ती गयी. अपने दाहिने हाथ की तरह रहकर जिस वीर योद्धा "ऊरिया" ने साथ दिया, उसी की हत्या करवाने के लिए दावीद ने षड्यंत्र रचाया "ऊरिया" के मरते ही उसकी अत्यंत सुन्दरी पत्नी "बत्शेब" को बुलवाकर उसे उसने अपनी पत्नी बना लिया इस स्त्री से उत्पन्न पुत्र ही था "सोलमन"

उस समय राज्य-लोभ ने और एक मोड लिया दावीद के पुत्र "अब्सालोम" ने इज्रायल के योद्धाओं को संगठित करके अपने पिता के खिलाफ बगावत की इसके पहले ही उसने गुप्त रूप से अपने बड़े भाई को मरवा डाला. "अब्सालोम" से भयभीत होकर दावीद अपनी जान बचाने के लिए जगलों में भाग खड़ा हुआ.

जगलों में जा छिपकर दावीद ने वहा सेना इकट्ठी करके अपने पुत्र पर चढ़ाई की उस युद्ध में अब्सालोम की मृत्यु हो गयी अब्सालोम की मृत्यु के बाद राज्य का वारिस बनने योग्य व्यक्ति था, "अदोनिया" मगर राज्य उसे न मिला. दावीद के आदेश के अनुसार सोलमन राजा बना उसके पश्चात थोड़े समय में ही सोलमन ने अदोनिया को मरवा डाला इससे हमें यह स्पष्ट विदित होता है कि राजपद किस प्रकार वंशानुगत अधिकार बना पहले जनता से चुने गये सौल की राज सत्ता याजकों से नियुक्त दावीद के हाथ में पहुंचकर आखिर में मौरूसी हक के रूप में बदल गयी

इसी कारण महाभारत युद्ध और इज्रायल के युद्ध में कुछ समानताओं का आभास मिलता है यहा जिस प्रकार सगे-संबंधियों के बीच में युद्ध हुआ वैसे ही वहा भी हुआ धर्मराज ने कुछ समय तक धृतराष्ट्र का लाड़-प्यार पाया उसी तरह दावीद ने भी सौल का आदर-सम्मान प्राप्त किया कहा जाता है कि जब दुर्योधन गंधर्वों के हाथ में बंदी हुआ, तब धर्मराज ने उसे छुड़वाया सौल जब गुफा में दावीद के हाथ लगा, तब उसने सौल को रिहा कर दिया उत्तर-गोग्रहण के युद्ध में जब कौरव

योद्धा बेहोश पड़े थे, जब अर्जुन उनको मारे बिना सिर्फ उनकी पगड़ियां उतार ले चला. जब सॉल अपने सेनानियों के साथ गहरी नींद में डूबा पड़ा था, तब दावीद उनका वध किये बिना सिर्फ उसकी बरछी और पानी भरने की चमड़ी की थैली उठा ले गया. जिस तरह पांडवों ने कुछ समय तक अज्ञातवास के लिए विराट राजा की शरण ली, उसी तरह दावीद ने भी अपने भाइयों के साथ "गात्" राजा के यहां आश्रय लिया. अंत में, यहां अरण्यवास कर लौटे धर्मराज को राज्य मिला, तो वहां जंगल में निवास करके वापस आये हुए दावीद को राज्याधिकार प्राप्त हुआ.

वहां राज्यसत्ता की प्राप्ति के लिए इज़ायल और यूदा के योद्धाओं ने घोर अत्याचार किये, वैसे ही यहां कौरव-पांडव वीरों ने किया. भीष्म, द्रोण, कर्ण, दुर्योधन इत्यादि का अधर्म रीति से वध करने में श्रीकृष्ण ने पांडवों की मदद की. आधी रात के समय सोते हुए पांडव पक्ष के वीरों के सिर निष्ठुरता से काटने में कृपाचार्य तथा कृतवर्मा ने अश्वत्थामा को सहारा दिया.

यह है उस जमाने का धर्म. इस स्थिति में जिसकी लाठी थी, उसी की भैंस थी. जो बल संपन्न था, राज्य उसी का था. किसी न किसी तरीके से शत्रु को मार डालना चाहिए, यही तब की राजनीति थी. इसीलिए यदि यहां चचेरे भाई कौरव तथा पांडवों ने एक दूसरे का गला काटा तो वहां यूदा वंश के भाई-भाई और बाप-बेटे ने एक दूसरे का वध किया. इस सिलसिले में इस प्रश्न की गुंजाइश ही न थी कि इस प्रकार मारना धर्म है या अधर्म ?

संजय की युद्ध-गाथा

कहते हैं कि जिस कुरुक्षेत्र युद्ध के अठारह दिन तक होने का चित्रण किया गया, उसका सारा ब्यौरा संजय ने धृतराष्ट्र को सुनाया. इसीलिए महाभारत की युद्ध-गाथा संजय के नाम पर निकली. यही महाभारत का मूल है. इसमें कितनी ही अतिशयोक्तियां तथा अद्भुत-कल्पनाएं पायी जाती हैं तो भी ध्यान देकर इसका अनुशीलन करें तो पता लगता है कि श्रीकृष्ण मार्गदर्शन में उत्साहित होकर पांडवों ने अधर्म युद्ध किया. पर युद्ध-समापन के दिन की अर्ध-रात्रि में अश्वत्थामा ने पांडव शिविर पर हमला करके जो दारुण कांड किया, उसके लिए दुर्योधन की ओर से कोई प्रोत्साहन दिये जाने का पता नहीं लगता. इसलिए संजय की युद्ध-गाथा को बदलने की चेष्टाएं की गयीं. किन्तु संजय जैसे सूत ने जो गाथा सुनायी और दूसरे कुछ सूतों ने जिसे कंठस्थ करके जनता के बीच में पहुंचाया, उसे बदलना उतना आसान काम नहीं है.

महाभारत में इस प्रकार का विवरण दिया गया—"संजय सूत था. वह धृतराष्ट्र का रथ-सारथी था. कौरवों की ओर से वह पांडवों के यहां दूत बनकर गया था. धृतराष्ट्र के अंतरंग-परामर्शदाताओं में विदुर के बाद

उसका स्थान था. कौरवों और पाडवों के बीच जो युद्ध हुआ, उसका सारा ब्यौरा उसने धृतराष्ट्र को सुनाया था जब गांधारी तथा धृतराष्ट्र वन में चले गये, तब भी उनके साथ ही साथ रहकर उसने उनकी सेवाए की थी '

कर्ण का पालन-पोषण जिसने किया, वह भी सूत था विराट राजा के साले कीचक सूत थे शौनक आदि महर्षियों को जिसने महाभारत की कथा सुनायी, वह उग्रश्रव सूत था

अमरकोश में लिखा गया कि सूत बाह्मण स्त्री तथा क्षत्रिय पुरुष से उत्पन्न सतान हैं इसलिए दोनों वर्णों की शक्ति तथा सामर्थ्य उन्हें विरासत में मिले इसी कारण महाभारत में सूत अत्यत प्रमुख व्यक्तियों के रूप में दृष्टिगत होते हैं वे राजाओं के सलाहकार तथा सारथियों के रूप में रहने वाले बाह्मणों को हटाकर उनके स्थानों पर पहुंच सके कीचक जैसे लोग अस्त्र-शस्त्र में कुशल बने तो सजय जैसे लोग वीरगाथाए सुनाने तथा राजाओं को सलाह देने में चतुर बने

उन दिनों में जबकि लिपि का अभाव था, वीरगाथाओं को कठस्थ करके सुनाने में निपुण होने के कारण सूतों ने सजय के द्वारा कही गयी महाभारत युद्ध कथा को कठस्थ किया उन्होंने उसे अपने शिष्यों को सिखाया और जनता को सुनाया इसी वजह से मूलकथा को कोई बदल न पाये. परन्तु कालातर में भीष्म आदि का जन्म, लाक्षागृह का दहन, द्यूत क्रीडा, पाडवों का वनवास, कृष्ण का दौत्य, जैसे भागों को उग्रश्रव एव वैशंपायन ने लिखकर सजय की युद्ध-गाथा में जोड दिया यह लोकमत उत्पन्न करने का उन्होंने प्रयत्न किया कि प्रारभ से लेकर कौरवों के द्वारा जिन पाडवों ने अनेक यातनाए भोगीं, उनके दुर्योधन आदि को अधर्म रीति से मारने पर भी कोई दोष नहीं हैं सजय की युद्ध-गाथा में अपनी लिखी कहानियां जोडकर उन्होंने उसे "जय" नाम दिया. जय किसकी ? पहले से जिन पाडवों ने अनेक कष्ट उठाये, अत में उनकी जय हुई यही अर्थ उसमें उन्होंने सूचित करने की चेष्टा की.

उग्रश्रव के द्वारा कही गयी महाभारत गाथा

"जय" नाम वाली महाभारत-गाथा को जिसने शौनक आदि महर्षियों को सुनाया, वह था उग्रश्रव नामक सूत उग्रश्रव ने यह विवरण भी दिया है कि उसे यह गाथा कैसे मालूम हुई ?

उसने कहा—जनमेजय के नागयज्ञ मैंने स्वय अपनी आंखों से देखा उसके पश्चात, उद्योग पर्व तक की कथा मैंने जनमेजय से वैशंपायन को कहते सुनी उसके उपरात सजय के द्वारा कही गयी युद्ध घटनाओं को भी वैशंपायन के द्वारा सुनकर मैं बता रहा हू अतः यह कह सकते हैं कि "जय" नामक गाथा के तीन मुख्य भागों को कथाओं के रूप में उग्रश्रव, वैशंपायन तथा सजय ने कहा.

इस प्रकार तीन वक्ताओं की कही कहानियों को जोड़ने से यह निंदा कुछ हद तक दूर हुई कि पाण्डव अधर्म-परायण थे. फिर भी महाभारत की कथा का विस्तार करना उतने से नहीं रुका और भी कुछ कहानियां उसमें जोडी गयीं उसके उपरांत शांति पर्व सहित सात पर्व उसमें मिल गये अरण्य पर्व विस्तृत किया गया उत्तर गोग्रहण की गाथा की सृष्टि हुई सांख्य, योग तथा बृहम सूत्र मिलाकर उसे भगवद्गीता का रूप देकर युद्ध-गाथा के आगे रखा गया अंत में भागवतों के हरिवंश लिखकर महाभारत के परिशिष्ट के रूप में मिलाने से वासुदेव कृष्ण विष्णु के अवतार के रूप में बदल गये फिर क्या! यह कहने का अवसर मिल गया— भगवान के आदेश के अनुसार पांडव चले. दुर्योधन आदि ने अपने कर्मों का फल भोगा बस। इतना ही हुआ वैसे तो पांडव अधर्मात्मा नहीं थे."

उन दिनों में राजवंशों से तथा क्षत्रियों के वीर कृत्यों से संबंधित कथाओं को राजाओं के दरबारों में रहने वाले सूत सुनाया करते थे. इनकी कथाओं में नीति, धर्म, प्रकृति-वर्णन तथा लौकिक दृष्टिकोण संबंधी बातें भी अंतर्भूत रहती थीं. इसी कारण इनकी कथाओं में कुछ संशोधन एवं सम्मिश्रण होने पर भी उनकी कीमत कम नहीं हुई

बृाह्मण-क्षत्रिय वर्गों के बीच संघर्ष

उपनिषद् काल में क्षत्रियों के ज्ञान की वृद्धि हुई उपनिषदों में दृष्टिगत होने वाले जनक, अजातशत्रु, अश्वपति कैकेय इत्यादि क्षत्रिय ही थे. उस दशा में बड़प्पन के लिए बृाह्मण तथा क्षत्रियों में कई संघर्ष हुए. अत. हर किसी ने स्वयं अपने बड़प्पन की घोषणा करने वाली कहानियां सुनायी

बृाह्मणों ने एक कहानी सुनायी · "यदि बृाह्मण क्रोधित होते हैं तो शत्रु को अग्नि की तरह जला देते हैं. तेज तलवार की तरह टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं. सर्प के विष की तरह जान लेते हैं. यदि कोई उनकी पूजा करें तो सर्व सुख देते हैं. इसलिए बृाह्मणों की पूजा करो. उनको क्रुद्ध मत करो."

फिर सूतों ने एक दूसरी कहानी सुनायी—"अत्रि महामुनि ने धन की कामना से वैन्य भूपति के पास जाकर उसकी प्रशंसा का पुल बांध दिया कि तुम इंद्र हो, बृहम हो, ईश्वर हो. तब गौतम मुनि ने इसका विरोध किया तब दोनों के बीच में वाद-विवाद बढ़े तो अंत में काश्यप मुनि की सलाह से मुनियों ने सनत्कुमार के पास जाकर उनका विचार जानना चाहा. तब तक सनत्कुमार ने मुनियों को अपना मत समझाया कि प्रजा का पोषण एवं रक्षण करने के लिए समर्थ राजा को विराट सम्राट, सत्यधर्मी इत्यादि नाम देकर लोग उसकी प्रशंसा करते हैं अत: वैन्य-भूपति जैसे राजा ही इंद्र हैं, वही बृहम और वही ईश्वर हैं."

अगर ब्राह्मण डींग मारते थे कि ब्राह्मणों का धिक्कार करने वाले क्षत्रियों की वही गति होगी, जो वेन राजा की हुई तो क्षत्रिय डाटते थे कि याद रखो कि स्वार्थी विप्रों की पुरूरवा ने कैसी खबर ली !

यदि ब्राह्मणों ने आवाज उठायी कि हमारे वशिष्ठ असंभव को सभव बनाने वाले महिमान्वित हैं, तो क्षत्रियों ने दावे के साथ कहानी सुनायी कि हमारे विश्वामित्र ने सृष्टि की प्रतिसृष्टि की

रामायण में लिखा है कि श्रीराम के हाथ में परशुराम का गर्वभग हुआ. इसलिए भृगुवंशजों ने एक कहानी गढ़ी कि कार्तवीर्यार्जुन सहित सभी क्षत्रियों का परशुराम ने वध कर दिया. यह कहानी भूटान की रामायण में है सूतों ने और एक कहानी सुनायी कि सब धनलोभी भृगु-वंशजों को मृतवीर्य संतति वाले क्षत्रियों ने मार डाला.

यदि ब्राह्मणों ने कहा कि कई क्षत्रिय ब्राह्मणों के द्वारा पैदा हुए तो सूतों ने कहा कि कई ब्राह्मण क्षत्रियों से पैदा हुए । क्षत्रियों के दरबारों में सुस्थिर स्थान प्राप्त करने के लिए सूतों ने षोडश राजाओं के बड़प्पन का वर्णन किया तो ब्राह्मणों ने कहा कि यज्ञ करके ब्राह्मणों को अपना सर्वस्व का दान देने से ही वे राजा उतने महान हुए भगीरथ ने जब अश्वमेध यज्ञ किया, तब दस लाख कन्याओं को सुसज्जित करके दस लाख रथों पर उन्हें बिठाकर, हर एक कन्या के लिए सौ हाथी, लाख घोड़े और दस करोड़ गायों को दहेज के रूप में देकर, उन्हें ब्राह्मणों को दान (शायद कन्यादान) दिया इसी प्रकार उन सोलहों राजाओं ने यज्ञ करके ब्राह्मणों को दक्षिणाएं दीं, यही उनके महान बनने का कारण कहा गया

यादवों ने कहा कि भगवान विष्णु हमारे घर में कृष्ण के रूप में अवतरित हुए, तो भृगुवंशियों ने डींग मारी कि हमारे भृगु महर्षि ने विष्णु की छाती पर लात मारी, यदि शिव के माथे पर तीसरा नेत्र है तो हमारे भृगु महर्षि के तलुवे में तीसरी आंख है

इसके अतिरिक्त यद्यपि सारे वेद-वेदांग उन दिनों में वैदिक ब्राह्मणों की अधीनता में थे, तथापि महाभारत, रामायण, सावित्री उपाख्यान, नल उपाख्यान जैसी सारी कथाएं सूतों की जबानों पर थीं इसी कारण से डा ए वी. केतकर ने इन्हें "सौत साहित्य" नाम दिया

सूतों के द्वारा सुनायी जाने वाली कहानियों पर क्रमश जनता की रुचि बढ़ी, आदर अधिक हुआ तारामति-हरिश्चंद्र की, शकुन्तला-दुष्यंत की, सावित्री-सत्यवान की और नल-दमयंती की कहानियों के साथ वीरमाता विदुला की कहानी तथा ध्रुव की कहानी जैसी कथाएं भी लोग बड़े चाव से सुनते थे

सूतों की कहानियों की तुलना में वैदिक ब्राह्मणों की कथाएं फीकी लगती थीं कश्यप ब्रह्म की पत्नियों में दिति से दानव, अदिति से देव, कद्रु से साप, विनता से पक्षी, और वशिष्ट की होम धेनु की पूंछ से तथा मल-मूत्रों से शबर, शक, यवन, पौंड्र, पुलिंद, द्राविड़, सिंहल, बर्बर जातियां पैदा हुई इस तरह वैदिक ब्राह्मणों के द्वारा कही गयी कहा-

नियों की कोई कीमत नहीं रह गयी इसलिए वैदिकों ने सोचा उन्होंने समझ लिया कि वीर कथाएं और नीति कथाएं जिस प्रकार लोगों को आकर्षित कर सकी, उस प्रकार क्रतुओं तथा दान-धर्मो से संबंधित कहानियां आकर्षित नहीं कर सकी. अतः उन्होंने वीरकथाओं से उनको मिलाना अच्छा समझा इस कारण से सूतों के पास जो महाभारत की युद्ध कथा थी, उस पर भृगुवंशियों ने अपनी दृष्टि केंद्रित की और धीरे-धीरे उसे हस्तगत कर लिया

श्रीमती भारती कार्वे ने अपने युगांत नामक ग्रंथ में लिखा कि सिर्फ महाभारत कथा ही नहीं, बल्कि संस्कृत वाङ्मय के विकास के लिए आधारभूत सभी रचनाएं ब्राह्मणेतरों के हाथों से ब्राह्मणों के हाथों में पहुंच गयीं

फिर क्या ? संदर्भ का औचित्य न होने पर भी, उसकी परवाह किये बिना ब्राह्मणों ने वैदिक वाङ्मय की देव-दानव, क्रतु, भूदेव, दान-धर्म आदि से संबंधित कहानियों को महाभारत में जोड़ दिया कुछ को तो रामायण में भी उन्होंने मिला दिया इनके साथ कुछ अन्य कथाएं भी जुड़ गयीं

कथाएं, जिन्होंने जिज्ञासा जगायी

योगियों तथा विराजियों ने यह शिक्षा देते हुए कि यज्ञ करके दान देने से स्वर्ण-शरव मिलते हैं तो भी कोई लाभ नहीं है क्योंकि जो कुछ पुण्य कमाया जाता है उसके समाप्त होते ही पुन जन्म लेना पड़ता है अतएव सर्व-संग-परित्याग करके जन्म साहित्य को साध लेना अच्छा है कुछ कहानियां सुनायीं उनमें मुद्गल की कथा भी एक है

मुद्गल सद्गुण संपन्न व्यक्ति तथा पुण्यमूर्ति था. अतः स्वर्ग से एक देवदूत ने उसके पास आकर उसे स्वर्ग में आने का निमंत्रण दिया उस दूत ने यह कहकर उसका जी ललचाने की कोशिश की कि स्वर्ग में अप्सराएं, मंदाकिनी नदी, सुनहले कमल आदि न जाने कितने भोग-विलास के लिए आवश्यक वस्तुएं हैं. तब मुद्गल ने सवाल पूछा कि क्या सदा के लिए इन सब का उपभोग करते हुए रहा जा सकता है ? तब देवदूत ने उत्तर दिया कि "नहीं, जब तक जमा किया हुआ पुण्य समाप्त नहीं होता तभी तक इन सब सुख-भोगों का अनुभव किया जा सकता है, उसके उपरांत फिर कोई न कोई जन्म लेना अनिवार्य है" यह सुनकर मुद्गल ने कहा कि ऐसा हो तो तुम्हारे स्वर्गसुख मुझे नहीं चाहिए इसलिए देवदूत वापस चला गया. उसके पश्चात मुद्गल ने ध्यान योग में निमग्न होकर और सर्व-संग-परित्यागी रहकर अंत में मोक्ष को प्राप्त किया.

मुद्गल की कथा से भी बढ़ कर विस्तार से कही गयी एक और कहानी है—वही है "मेधावी" की कथा.

किसी वेदपंडित ब्राह्मण का पुत्र था मेधावी एक दिन मेधावी ने अपने पिता से एक सलाह मांगी. वैसे तो जो कोई पैदा होता है, उसका मरना तो अनिवार्य है अत: आप कहें कि जिंदा रहते हुए करने योग्य कौन-कौन अच्छे काम हैं ?

पिता ने अपने बेटे मेधावी को आश्रम धर्मों का विवरण देते हुए कहा—पहले अच्छी तरह वेद का अध्ययन करो उसके उपरात विवाहित होकर गृहस्थ आश्रम के कर्तव्यों का पालन करो पुत्र-सतान से वश की परपरा सुरक्षित रहती है. पितृ देवों के लिए विधिपूर्वक श्राद्‌ध कर्म सपन्न होते हैं उन कर्मों से पितरों को ऊर्ध्वगतिया प्राप्त होती हैं.

यौवन-अवस्था के बीतने पर वानप्रस्थ आश्रम स्वीकार करके यज्ञ करो अथवा कराओ वृद्‌धावस्था का प्रारम्भ होते ही सन्यास स्वीकार करके तपस्या करो उससे तुम्हे मुक्ति मिलती है.

पिता ने जो विचार बताये, वे उसे पसद नही आये इसलिए मेधावी ने अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए कहा—

'हे पिता ! क्या हम कह सकते हैं कि मानव अवश्य सौ साल तक जियेगा ? जबकि मृत्यु हमारे प्राण हरने की टोह मे है, तब हमारे जीवन के आधे हिस्से से अधिक समय वेदाध्ययन मे तथा निरर्थक क्रतुए करने मे बिता दे तो क्या लाभ है ? मानव किसी की सिद्‌ध के लिए साधना करता रहता है पत्नी और बच्चो की सुख-सुविधा की व्यवस्था के लिए छटपटाता रहता है इतने मे जिस प्रकार बकरी के बच्चे को भेडिया हडप लेता है उसी प्रकार मृत्यु मानव को निगल जाती है. मृत्यु यह नही सोचती कि मनुष्य की इच्छाओ की पूर्ति हुई कि नही ? चतुर्विध आश्रमों के कर्तव्यों की समाप्ति तक वह प्रतीक्षा नही करती अत यह सोचना भ्रम है कि अत मे सन्यास आश्रम स्वीकार करने तक हम जीवित रहेगे

"पिताजी ! आपने मुझे विवाह कर लेने का आदेश दिया किसलिए ? धर्म-सतान के लिए ही है न ? तो, फिर एक बात बताइए। आप मुझे समझाइए कि यहा हम जो श्राद्‌ध-कर्म आदि करते हैं, उनसे हमारे पित पितामहों को ऊर्ध्वलोकों की प्राप्ति कैसे होगी ? आप यह कहिए कि हमारे दिवगत पूर्वज कहा है ? आपके पिताजी कहा गये हैं ? आप ही नही प्रत्युत कोई भी नही कह सकते इसी कारण से मुझे यह विश्वास नही होता कि आपकी कही धर्म-सतान मेरा उद्‌धार करेगी.

"अब यज्ञ-याग आदि क्रतुओ की बात ले ! उन पर मेरा विश्वास नही है क्योंकि जो पशुओं का वध करके उनका रक्त-मास देवों को अर्पित करते हैं, उनमें कोई एक भी परिशुद्‌ध नही हो सकते. भले ही उनसे धन-दौलत मिले तो भी ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मणों को उनकी कामना नही करनी चाहिए

"ब्राह्मण के चाहने योग्य है एकातवास, शाति, सत्य, समता, निश्चलता आदि ही, न कि धन दौलत, दारा-पुत्र आदि, बधु-मित्र आदि मुक्ति का मार्ग नही दिखा सकते. इसलिए 'अपने आपको पहचानो, अपने मे

जो आत्मा (या ब्रह्म) है, उसके दर्शन के लिए तपस्या करो. वही मुक्ति का साधन है' यह शिक्षा देने वाला उपनिषद्-वाक्य ही शरण्य है."

यह कथा ज्ञान मार्ग की शिक्षा देने वाली प्रतीत होती है. अतएव कर्म मार्ग का समर्थन करने वाली कुछ कहानियां निकलीं. उनमें प्रमुख है धर्मव्याध की कहानी धर्मव्याध किरात जाति का था मांस बेचकर अपनी गुजर करता था ऐसे व्यक्ति ने श्रेष्ठ तपस्वी ब्राह्मण को धर्म के रहस्यों का विवरण देकर समझाया

कौशिक ब्राह्मण था वह तपस्वी और वेदविद् था. एक दिन जब वह किसी पेड की छाह में बैठकर वेद-पाठ कर रहा था तब पेड पर बैठे एक बगुले ने उस ब्राह्मण पर बीट डाल दी उसने क्रुद्ध होकर जब ऊपर देखा तो पेड पर बैठा बगुला ढेर होकर जमीन पर गिर पडा

उसके पश्चात ब्राह्मण भिक्षाटन के लिए गाव में गया वहा एक ब्राह्मण के घर के दरवाजे पर खडे होकर उसने कहा—'भिक्षांदेहि' ज्यों ही उस घर की गृहिणी भिक्षा देने आ रही थी, त्यो ही उसका पति घर पहुचा

अत वह स्त्री कौशिक को भिक्षा दिये बिना अपने पति की सेवा करने में लग गयी. जब अपने पति के स्नान के लिए पानी देकर, उसे भोजन खिलाकर और उसे पान देकर अत मे भिक्षा देने आयी, तब कौशिक ने आखें लाल करके देखा और पूछा—'यदि तुम पहले ही कह देती कि अब फुरसत नही है तो मैं चला जाता मुझे तुमने इतनी देर तक क्यों खड़ा किया ? क्या तुमको मालूम है कि ब्राह्मणों का इस प्रकार अपमान करने का कौन-सा नतीजा निकलेगा ?'

उस स्त्री ने कहा कि मुझे मालूम है लेकिन मैं पतिव्रता हू, अत पति सेवा ही मेरा प्रथम कर्तव्य है फिर उसने कौशिक को भिक्षा दी और कहा, 'तुम ब्राह्मण हो ब्राह्मणों के लिए इतना क्रोध उचित नही है इसलिए उसे छोड देना अच्छा है' उसके क्रोध का शिकार होकर उस बगुले के भस्म होने की घटना की भी उस स्त्री ने याद दिलायी उसने ब्राह्मण को चेतावनी भी दी कि पतिव्रता होने के कारण मैं वह घटना जान सकी, धर्म का सूक्ष्म-ज्ञान समझे बिना तपस्या तथा वेदाध्ययन सब निष्फल है. इसके अतिरिक्त उसने कौशिक को धर्म और अधर्म के विलक्षण युक्त ज्ञान की प्राप्ति के लिए, मिथिला नगर में रहने वाले धर्मव्याध के पास जाने का रास्ता भी बताया

तुरत कौशिक मिथिला नगर चला गया. मास-विक्रय करने वाले धर्मव्याध को देखकर कौशिक थोडी दूर पर खडा रहा उसके बाद धर्मव्याध ही उसके पास आकर, उसे नमस्कार करके अपने घर बुला ले गया. दोनो में कुछ आपसी चर्चाएं हुईं इस सिलसिले में कौशिक ने पूछा—'धर्मज्ञ होकर भी तुम मास विक्रय करके क्यों जी रहे हो ?' इस प्रश्न के उत्तर में धर्मव्याध ने विस्तार से बताया—

"ऐसा कहना कि यह हिंसा है, यह अहिंसा है किसी के लिए संभव नही है फसल उगानेवाला किसान जब खेत जोतता है तब कितने ही

जीव मर जाते हैं जब हम इधर-उधर चलते फिरते हैं तब हमारे पैरों के नीचे दबकर मरने वाले जीवों की गिनती हम नहीं कर सकते. यज्ञ-याग आदि क्रतुएं करते समय हम पशुओं का बध करते हैं. पितरों के श्राद्ध-कार्यों में मांस पकाकर खिलाते हैं. अहिंसाव्रत का अवलंबन करके जंगलों में तपस्या करने वाले ऋषि-मुनि कंद-मूल, फलों का भक्षण करते हैं क्या यह भी हिंसा नहीं हैं ? बछड़ों के मुंह का दूध छीनकर, गायों को दुहकर दूध पीना हिंसा नहीं हैं ? अतः इस संसार में हिंसा किये बिना जीने वाला कोई नहीं हैं ? जितना हो सके, उतनी हद तक हिंसा का त्याग करना जरूरी हैं जो भूतदया रखता हैं, वह सर्व प्राणियों को सम-दृष्टि से देख सकता हैं, जहां तक संभव हैं, वहां तक वह हिंसा से दूर रह सकता हैं"

"मैं जतुओं को नहीं मारता कोई दूसरा मारकर लाता हैं तो उन्हें खरीदकर उनका मांस मैं समुचित मूल्य पर बेचकर अपनी गुजर कर रहा हूं. इसके अलावा यह मेरे कुल का परंपरागत व्यवसाय हैं, अतः इसे करने में कोई दोष नहीं हैं."

जब धर्मव्याध ने यह कहा, तब यह सुनकर कौशिक ने दो और प्रश्न पूछे—"जीव का लक्षण क्या हैं ? इंद्रियों का निग्रह कैसे संभव होता हैं ?" इनके उत्तर देने के उपरांत धर्मव्याध कौशिक को अपने घर में ले गया वहां धर्मव्याध के माता-पिता को अपने पुत्र की देख-भाल में अत्यंत सुखी जीवन बिताते देखकर कौशिक अचम्भे में पड़ गया तब धर्म-व्याध ने फिर से कहा—

"मैं अपने वृद्ध माता-पिता की भक्तिपूर्वक पूजा करता हुआ, उनका पालन-पोषण कर रहा हूं, मैं अपनी धर्मपत्नी के साथ दांपत्य जीवन बिता रहा हूं, अपने पुत्रों के प्रति वात्सल्य, अपनी पत्नी के प्रति प्रेम तथा अपने मां-बाप के प्रति भक्ति के सिवा मेरी और कोई चिंता नहीं हैं किन्तु आप ? अपने वृद्ध माता-पिता को छोड़कर तपस्या करने में लग गये अतः आप अपने निस्सहाय तथा दुर्बल बनकर तड़पते हुए बूढ़े मां-बाप के पास फौरन चले जाइये और उनकी सेवा कीजिये अपने माता-पिता के ऋण से आप उऋण हो जाइये ऐसा न करने पर, आप चाहे कितनी भी तपस्या कर लीजिए सब कुछ व्यर्थ हो जायगा" इस प्रकार धर्मव्याध ने जो सलाह दी, उसे सिर आंखों पर लेकर कौशिक अपने मां-बाप के पास चला गया और उनकी सेवा में दत्तचित्त हो गया

इस तरह अपने-अपने सिद्धांतों के अनुकूल विभिन्न मार्गों के अनु-यायियों ने कहानियां सुनाई हैं किन्तु जो कथा विदुर ने धृतराष्ट्र को सुनायी, वह सर्वजनसम्मत प्रतीत होती हैं.

"किसी दिन एक ब्राह्मण जंगल में कहीं भटक गया उसे अपने चारों ओर, जहां भी उसने देखा हिंस्र जानवर दिखाई पड़े ब्राह्मण इधर-उधर दौड़ने लगा उसने देखा कि एक अत्यंत भयंकर स्त्री ने अपने कबंध-

हस्त फैलाकर सारे जंगल को अपने चक्र-बंधन में जकड रखा है जंगल के चारों ओर पांच सिरवाले सर्पों ने फण फैलाकर एकदम ऊपर उठकर फुफकारना शुरू कर दिया है वहां एक कुआं था दहशत के मारे इधर-उधर दौडता वह ब्राह्मण, रास्ता दिखायी न देने के कारण, उस कुएं में उल्टा गिर पडा पर गिरते-गिरते वह उस कुए में झुकी हुई वृक्ष-शाखाओं के बीच में अटक गया जब ब्राह्मण ने कुए में नीचे देखा तो उसकी तह के पानी में उसे एक विकराल सांप फुफकारता हुआ दिखायी दिया फिर उसने ऊपर देखा तो वहां छ सूंडों तथा बारह पैरों वाला भयंकर मस्त हाथी था. काले और सफेद चूहे उस पेड की उन शाखाओं के मूल को कुतर रहे थे जिन में वह अटका हुआ था ऊपर की बेलों के बीच एक शहद का छत्ता था, जिसके इर्द-गिर्द बड़ी-बडी मधु-मक्खियां मंडरा रही थीं. ऐसी भयंकर परिस्थिति में भी उस ब्राह्मण ने मधु के छत्ते से अपनी चूसते हुए जाने की आशा नहीं छोडी" जब धृतराष्ट्र ने कथा का आशय पूछा तो विदुर ने इस प्रकार विवेचन किया—"संसार ही वह जंगल है व्याधियां कुआं है काल अंदर का सर्प है, छ ऋतुओं और बारह मासों वाला साल ही वह छ सूंडों और बारह पैरों वाला हाथी है दिन और रात सफेद और काले चूहे हैं ब्राह्मण जिनमें अटक गया, वे शाखाएं जीवन की आशा हैं वे मधु की बूंदें संसार के सुख हैं '

इस कहानी ने वैदिक, जैन, बौद्ध, मुसलमान, ईसाई, यहूदी, आदि सबका आदर पाया संसार की सभी भाषाओं में इस कहानी का अनुवाद किया गया यही कथा फारसी भाषा में जलालुद्दीन तथा जर्मन भाषा में रूबर्टस ने जो सुंदर गेय कविताएं लिखीं उनका मूल आधार बनी.

बौद्ध गाथाएं

बौद्ध धर्म के विस्तार की प्रक्रिया में कई गाथाएं निकलीं, बौद्ध धर्मावलंबियों ने मुख्य रूप से अहिंसा तथा मानव सेवा को प्राधान्य दिया. अंबपाली, अंगुलिमाल, शिवि चक्रवर्ती इत्यादि की कहानियां उन्होंने सुनायीं

बौद्धों ने एक कहानी बतायी कि एक अंधे भिक्षुक की दीनदशा को देखकर शिबि चक्रवर्ती इतने विचलित हुए कि उन्होंने उस भिखारी को अपनी दोनों आखें निकाल कर दान में दी यह कहानी अत्यधिक लोकप्रिय हुई.

ब्राह्मणों ने भी शिबि चक्रवर्ती का अपने ढंग से वर्णन किया. शिबि चक्रवर्ती के यहां एक भयभीत कबूतर ने आकर अपनी रक्षा करने की प्रार्थना की शिबि ने उसे अभयदान दिया. इतने में एक बाज उसका पीछा करता हुआ वहां आया उसने उनसे कबूतर को छोड देने की प्रार्थना की उसने कहा—यदि आप इसे नहीं छोडेंगे तो मुझे, मेरी पत्नी और मेरे बच्चों को भूखों मरना पडेगा यह बात सुनकर शिबि चक्रवर्ती धर्म-संकट में फंस गये अगर कबूतर को छोड दिया जाय तो इसके माने होंगे

प्राण-रक्षा के लिए शरण में आये हुए प्राणी को उसके शत्रु के हाथ में सौंप देना. अगर उसे न छोडा जाय तो वह बाज की मृत्यु का कारण बनेगा इसलिए शिबि चक्रवर्ती ने कोई दूसरा मास लाकर उसे खिलाने का वादा किया. पर बाज राजी न हुआ उसने कहा—यदि आपके शरीर से काट कर दिया हुआ मास हो तो उसे लेने के लिए मैं राजी होऊगा शिबि चक्रवर्ती तुरन्त कबूतर के शरीर के तोल के बराबर का मास अपने शरीर से काटकर देने के लिए तैयार हो गये किन्तु उनके शरीर का सारा मास काटकर तराजू में रखने पर भी वह कबूतर के भार के बराबर न हुआ उन्होंने अपना सारा शरीर बाज के सुपुर्द कर दिया तब बाज इन्द्र के रूप में तथा कबूतर अग्नि-देव के रूप में प्रकट हुए उन्होंने शिबि चक्रवर्ती को जीवित किया और उन्हें कई वरदान देकर अदृश्य हो गये इस प्रकार ब्राह्मणों ने शिबि चक्रवर्ती की कथा बदल कर बतायी

इस तरह बतायी गयी और बदली गयी कितनी ही और कहानिया भी है. यदि ब्राह्मणो ने कुछ जैन-बौद्ध गाथाओ को अपने अनुकूल बदलकर महाभारत में जोड दिया तो बौद्धो ने महाभारत और रामायण की कुछ कथाओं को अपने अनुकूल बदल कर अपनी जातक कथाओ में मिला लिया

इस तरह क्षत्रिय, ब्राह्मण, योगी, बौद्ध, जैन इत्यादि ने जो कथाए बतायी, उनके साथ वैदिक वाङ्मय की कुछ कहानिया भी महाभारत में जुड गयी. हरिवश उसका परिशिष्ट बना वैष्णवो ने विष्णु लीलाओं को उसमें मिलाया तो शैवो ने शिव लीलाओ का जोड दिया दुर्गा देवी ने भी उसमें आसन जमा लिया मनुधर्म-सूत्रो ने एक पूरे पर्व में अपना स्थान बना लिया यही कारण है कि कुछ लोग महाभारत को पचम वेद कहते है, तो कुछ दूसरे उसे इतिहास पुराण कहते है और यह बात पृष्ठभूमि में चली गयी कि यह वीरगाथा है

पशु-बलि का विरोध

जब अपने-अपने बडप्पन के लिए बाह्मण तथा क्षत्रिय वर्णों के बीच मे सघर्ष चल रहे थे, तब भी यज्ञ-यागों का बोलबाला बढ़ता रहा, कम नहीं हुआ जिस समय राजा लोग यज्ञ करते थे तब उनके सिपाही और कर्मचारी गावों पर धावे बोलकर वहा से पशुगण के साथ अनाज, मक्खन, दाल, नमक आदि भी जबर्दस्ती उठा ले जाते थे. ऋतुओं के लिए जरूरी चीजें राजा की सेवा मे समर्पित कर बाकी सब वे आपस में बाट लेते थे राजा के हाथों से बाह्मणों को गायें तथा सोना दान में मिलते थे

फिर क्या ! पानी न बरसा तो यज्ञ बच्चे पैदा न हुए तो यज्ञ सामत राजाओं की सपत्ति छीनने के लिए यज्ञ अपने किये हुए पापों से छुटकारा पाने के लिए यज्ञ. मोक्ष की प्राप्ति के लिए यज्ञ सभी प्रकार से यज्ञों का बोलबाला था. इनके लिए आवश्यक पशुओं, अनाज तथा धन का समर्पण करने वाले पशुपालक, किसान और व्यापारी नारकीय यातनाओं के शिकार बनते थे कृषि तथा पशु सम्पदा की बर्बादी होती थी

अत सात्वतों (वासुदेव भक्तों) ने पशु-बलि का विरोध किया. महावीर एव बुद्ध ने यज्ञ-याग आदि का विरोध करते हुए जैन-बौद्ध धर्म को प्रस्तुत किया चूकि बौद्ध भिक्षुओं ने दीन-दुःखी जनों के उद्धार का बीडा उठाया था, इसलिए आम जनता बौद्ध धर्म की ओर आकृष्ट हुई. पशुपालक तथा कृषकों ने ही नही, कुछ व्यापारी लोगों ने भी ऋतुओं का विरोध किया और बौद्ध धर्म का समर्थन किया.

अशोक चक्रवर्ती के बौद्ध धर्म स्वीकार करने से बौद्ध धर्म ने अपनी जडें खूब जमा ली उनके प्रोत्साहन से वह धर्म दक्षिण-पूर्वी एशिया तथा श्रीलका तक व्याप्त हुआ. इसके फलस्वरूप प्रमुख वैदिक धर्मावलंबी ऐसे नि:सहाय हो गये

बौद्ध धर्म की सबलता के इस दौर में वासुदेव, नारायण तथा विष्णुभक्त सब मिलकर एक हो गये. ये ही भागवत के नाम से विख्यात हुए. इनका धर्म वैष्णव धर्म था. इनके द्वारा भी पशुबलि का विरोध हुआ, जिससे लोग वैष्णव धर्म की ओर भी आकर्षित हुए. अत· जब देश के पूर्वी और दक्षिणी प्रातों में बौद्ध धर्म का प्रसार हो रहा था, तब पश्चिम में वैष्णव धर्म व्याप्त हुआ

यद्यपि वैष्णव धर्म ने पशुबलि का विरोध किया, तथापि आध्यात्मवाद का समर्थन किया इस दृष्टि से वह बौद्ध और जैन धर्मों का विरोधी था अतएव वैदिक धर्मावलंबियों के हाथ मानो ब्रह्मास्त्र लग गया. पशुबलि का

विरोध करने के कारण अब तक जिन वैदिकों ने विरोध की तलवार उठायी थी, उन्होंने अब वह विरोध छोड़ दिया. यह कहकर उन्होंने विष्णु की पूजा आरम्भ की कि विष्णु कोई पराया नहीं है, इन्द्र का छोटा भाई उपेन्द्र ही है इन्द्र से छोटा होने पर भी वह अपने बड़े भाई से महान है.

दूसरी ओर इन वैदिकों ने मौर्य सम्राटों के विरुद्ध षड्यंत्र प्रारम्भ किये ई पू. १७८ में मौर्य सम्राट की हत्या जिस पुष्यमित्र ने की, उसे उन्होंने अपना पूरा सहयोग दिया धीरे-धीरे पुष्यमित्र दरबार में पहुंचकर पतंजलि के नेतृत्व में भगवान के अवतारों के सिद्धान्त की कल्पना करके, कृष्ण वासुदेव की स्तुति करते हुए उन्होंने बौद्ध धर्म का सामना किया. यादवों के वासुदेव तथा अहीरों (आभीरों) से कृष्ण का सम्बन्ध जोड़कर, उन्होंने दोनों वर्गों की जनता का समर्थन प्राप्त किया

फिर भी मिलिंद के नेतृत्व में यूनानियों के सियालकोट को अपना केन्द्र बनाकर राज्य की स्थापना करके बौद्ध धर्म को स्वीकार करने से, उज्जयिनी के शासक शकों के बौद्ध धर्मावलंबी होने से तथा शातवाहन चक्रवर्तियों के बौद्ध और वैदिक धर्मों का समान आदर करने से बौद्ध धर्म ने ऊंचा दर्जा हासिल किया

इस परिस्थिति का मुकाबला करने के लिए वैदिक धर्म के प्रमुखों ने क्षत्रियों के महत्व को पूर्णरूप से स्वीकार नहीं किया, बल्कि राजा चाहे देशी हो या विदेशी, चाहे क्षत्रिय हो या नहीं, फिर भी उनका आश्रय प्राप्त करने के लिए यह कह कर उनकी स्तुति की—"ना विष्णु पृथ्वीपति "—अर्थात राजा से बढ़कर कोई विष्णु नहीं है

राजाओं का आश्रय पाने के लिए प्रयास करने के साथ-साथ वैदिक धर्म के प्रमुखों ने यज्ञ-याग आदि करना तथा पशुबलि देना कम कर दिया आर्य तथा आर्येतर का भेद किये बिना जिन-जिन लोगों ने बौद्ध, जैन धर्मों का विरोध किया, उन्होंने उन सबके साथ हाथ मिलाया उन्होंने शैव, वैष्णव धर्मों का खूब प्रचार किया कर्म एव पुनर्जन्म सिद्धांतों का समर्थन करते हुए उन्होंने कहानियां लिखीं, यह विश्वास दिलाने के लिए कि जो लोग भगवान पर भरोसा रखते हैं, उन्हें इहलोक सुखों के साथ पर-लोक सुख भी उपलब्ध होंगे, उन्होंने बहुत कुछ लिखा

हिन्दू पंडितों ने पुराणों की रचना की, तो बौद्ध विद्वानों ने जातक कथाएं लिखीं कुछ जातक कथाएं बौद्ध धर्म के अनुकूल रामचरित को बदलने में काम आयीं विमल सूरि नामक जैन सन्यासी ने जैन धर्म के अनुकूल राम कथा को बदला और वाल्मीकि रामायण को विस्तृत करने का काम भी बेरोक-टोक चलता गया.

वाल्मीकि रामायण का विस्तार

श्री नार्ल वेंकटेश्वर राव ने अपनी "जाबालि" में लिखा कि जब कुशीलव वाल्मीकि रामायण गाकर लोगों को सुनाते थे, तभी उसके वर्णनों का विस्तार हुआ होगा

मारिस विंटर विङ्ज ने "इंडियन लिटरेचर—एपिक्स एंड पुराणाज" नामक अपनी पुस्तक में विवरण दिया—"रामकथा का गान करते समय वहां जमा हुए लोग सीता के कष्टों को सुनकर आंसू बहाते थे उन कष्टों का कुशीलवों ने बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया होगा"

यदि श्रोतागण युद्ध की घटनाओं को सुनकर उनकी तारीफ करते थे, तो कुशीलवों ने युद्ध की घटनाओं का वर्णन लम्बा चौड़ा बना दिया होगा इसी कारण से रामायण में देखने को मिलता है कि जो राक्षस योद्धा युद्ध में मारे गये, वे ही फिर सजीव होकर लड़ने लगे अगर सभा में उपस्थित व्यक्ति हास्यपूर्ण बातें सुनकर लोट-पोट होते थे, तो कुशीलवों ने बन्दरों के नटखटपन के कामों का खूब वर्णन किया होगा. सभासद अगर पुराण कथाओं को सुनकर दाद देते थे, तो उन्होंने बीच-बीच में पुराणों की कथाओं को जोड़कर सुनाया होगा

इस प्रकार बढ़ी हुई रामायण बौद्ध धर्म का आरम्भ होने पर कुछ और भी विस्तृत हुई बुद्ध से होड़ लगाकर राम की स्तुति करने का प्रयास ही इसका कारण है.

यदि बौद्धों ने मुक्ति-मार्ग की खोज में गौतम बुद्ध के जंगलों में जाकर सात साल तक घोर कष्ट सहने की बात का प्रचार किया, तो धर्मरक्षा के लिए श्रीराम के जंगलों में चौदह साल रहकर अनगिनत कष्टों का शिकार होने की बात का हिन्दुओं ने प्रचार किया

यदि बौद्धों ने कहा कि अंबापाली नामक वेश्या को दर्शन देकर उसे एक बौद्ध-भिक्षुणी के रूप में बदलने की शक्ति रखने वाले महापुरुष भगवान बुद्ध थे, तो हिन्दुओं ने कठिन शिला को कोमल नारी के रूप में परिवर्तित करने की महिमा से सम्पन्न महापुरुष कहकर श्रीराम की प्रशंसा की

बौद्धों ने यह प्रचार किया कि बुद्ध भगवान के दर्शन के लिए अंबापाली ने कई वर्षों तक प्रतीक्षा की और उनका दर्शन भाग्य मिलते ही अपनी सारी सम्पत्ति का समर्पण कर दिया तो हिन्दुओं ने प्रचार किया कि श्रीराम के दर्शन पाने के लिए शबरी ने सालों तक राह देखी और उनसे भेंट होते ही उन्हें जूठे बेर खिलाकर अपार आत्मसंतोष का अनुभव प्राप्त किया

बौद्धों ने बताया कि अंगुलिमाल नामक एक कुख्यात डाकू भगवान बुद्ध का उपदेश सुनकर बौद्ध भिक्षु बन गया, तो हिन्दुओं ने कहा कि प्राचेतस नामक व्याध रामकथा सुनकर वाल्मीकि महर्षि बना और उसने रामायण महाकाव्य की रचना करके संसार में अपार कीर्ति तथा प्रतिष्ठा अर्जित की

यदि बौद्धों ने प्रचार किया कि समस्त राजभोगों का परित्याग करके बुद्ध ने सर्व मानव-कल्याण की साधना में अनेक कष्ट उठाये, तो हिन्दुओं ने प्रचार किया कि श्रीराम ने सर्वभोगों का परित्याग ही नहीं किया, बल्कि लोकहित की साधना के लिए रामराज्य की स्थापना भी की

जब बौद्धों ने कहा कि बुद्ध सांसारिक बन्धनों को तोड़ कर महात्मा बने थे, तब हिन्दुओं को हार मानकर पीछे हटना पड़ा इसीलिए बाद में उन्होंने उत्तर रामायण लिखकर रामकथा की कमी की पूर्ति की उन्होंने कहा कि

सांसारिक बन्धनों को तोड़ डालने के लिए ही राम ने सीता को बन में भेज दिया.

इस तरह की तुलनाओं का प्रचार चाहे कितनी अधिक मात्रा में हुआ हो, तो भी साधारण प्रजा को इससे कोई लाभ न था उन्हें चाहिए खाना और कपड़ा जिन पशुओं को उन्होंने पाला, जिन फसलों को उन्होंने उगाया, उनका फायदा उन्हें मिलना चाहिए जनता की चाह यही होती है. उन्होंने आशा की कि बौद्ध धर्म उन चीजों की प्राप्ति में उनकी मदद करेगा, इसलिए बड़ी सख्या में जनता ने उस धर्म का समर्थन किया

इससे अपना धीरज खोये, हिन्दू धर्म के प्रमुखों ने एक कहानी की कल्पना की—"बुद्ध कोई दूसरे नहीं, बल्कि विष्णु के अवतार ही थे अधर्म की शिक्षा देकर, मानवों से पाप कराके, उन्हें नरक में भेजने के लिए वह अवतरित हुए इसके पहले सभी मानव यज्ञ-याग आदि करके मरने के बाद स्वर्ग में जाते थे, जिसके फलस्वरूप स्वर्ग खचाखच भर गया और नरक रिक्त रह गया अतएव स्वर्ग में आबादी का दबाव कम करने के लिए इन्द्र ने और नरक में अपने को काम देने के लिए यम ने जब विष्णु के पास जाकर विनती की, तब विष्णु ने उनकी प्रार्थना मानकर बुद्ध के रूप में अवतार धारण किया उन्होंने जनता को अधर्म का उपदेश दिया इस कारण से सभी बौद्ध धर्मावलबी नरक में जाने लगे स्वर्ग में आबादी का दबाव कम हुआ यही असली रहस्य है"

इसके अतिरिक्त उन्होने यह भी कहकर प्रचार किया—"राम एक पत्नी-व्रती थे उसने दुष्टों को दण्ड दिया और शिष्टों की रक्षा की एक मामूली धोबी की निंदा की परवाह करके उन्होंने अग्नि को साक्षी बनाकर जिस सीता को अपनी धर्मपत्नी बना लिया, उसी सीता को जगलों में भेज दिया, अश्व-मेध यज्ञ करके ब्राह्मणों को अपने सर्वस्व का दान दिया और लोकमगल की सिद्धि के लिए रामराज्य की स्थापना की"

इसके प्रत्युत्तर में बौद्धों ने और एक कहानी गढ डाली—"राम कोई दूसरे नहीं, हमारे तथागत ही थे पिछले जन्म में वह राम के रूप में पैदा हुए तब उन्होने अच्छे काम किये, किन्तु प्रजा को उसने मुक्ति का मार्ग नहीं दिखाया इसलिए गौतम बुद्ध के रूप में पैदा होकर उन्होंने जनता को मुक्ति का मार्ग दिखाया"

वैदिक धर्मावलम्बियों ने एक और कहानी का प्रचार किया कि असुर स्त्रियां पतिव्रताएं थीं इसलिए त्रिपुरासुरों का वध करना त्रिमूर्तियों के लिए भी सम्भव नहीं हो सका अत बुद्ध का अवतार ग्रहण करके विष्णु ने छल-कपट करके उन असुर स्त्रियों का चरित्र बिगाड़ दिया, तब तक त्रिपुरासुर-संहार सम्भव न हो सका

इस प्रकार की तुलनाएं, स्पर्धाएं तथा प्रचार सिर्फ भारत उपमहाद्वीप तक सीमित न थे पहले बौद्ध-भिक्षु और बाद में हिन्दू सन्यासी जब मध्य-एशिया, दक्षिण-पूर्व एशिया, चीन तथा जापान आदि देशों में गये, तो उन देशों में भी इन सब का प्रचार हुआ उन-उन देशों की सामाजिक परि-

स्थितियों, आवश्यकताओं तथा रुचियों के अनुसार महाभारत, रामायण और जातक कथाओं में परिवर्तन एवं संशोधन हुए. इन सब में रामायण का रूप तो विशेष परिवर्तित हो गया.

जातक कथाओं में रामायण

चीनी भाषा की जातक कथाओं में एक राजा की कहानी है. उस राजा का नाम उसमें उल्लिखित नहीं है. किन्तु कहा गया है कि किसी समय बुद्ध ने ही उस राजा के रूप में जन्म लिया था. उसकी पत्नी को एक नाग जाति का व्यक्ति भगा ले गया. तब उस राजा ने वानरों की सहायता से—खासकर "इन्द्रकपि" की मदद से—समुद्र पर सेतु बन्धन करके लंका को घेर लिया. उसके पश्चात लड़ाई में उस नाग को मारकर वह अपनी रानी को वापस लाया.

उसके उपरांत उस रानी ने अपने पातिव्रत्य को सिद्ध करने की तैयारी की. उस समय भूमि फट गयी. इस अद्भुत कार्य होने के बाद व्यापारियों ने अधिक लाभार्जन करना छोड़ दिया, बलवानों ने दुर्बलों को सताना छोड़कर उनकी मदद करना शुरू किया. कुलटाएं अपने चरित्र को सुधार कर सदाचारी बन गयीं, सारी प्रजा धर्मपरायण बनकर जीने लगी. यह सब बोधिसत्व का ही प्रभाव था.

यह सुनकर एक हिन्दू पंडित ने व्याख्या की कि हमारे इन्द्र के कपि के रूप में आकर सहायता करने से ही सेतु बाधना, नागों को मारना बोधिसत्व के लिए सम्भव हो सका.

भूटान की रामायण के अनुसार दशरथ एक वीर था. उसका पुत्र सहस्रबाहु और भी महावीर था. जब उस सहस्रबाहु ने एक ब्राह्मण की कामधेनु का अपहरण किया, तब उस ब्राह्मण के पुत्र परशुराम ने सहस्रबाहु का संहार किया. सहस्रबाहु के लक्ष्मण तथा राम नामक दो पुत्र थे. उन्होंने बड़े होने के उपरांत परशुराम के साथ अठारह लाख ब्राह्मणों को मार डाला.

उस समय दशग्रीव नाम के एक राक्षस के एक पुत्री पैदा हुई. ज्योतिषियों ने कहा कि उस लड़की से उस राक्षस राजा का अनर्थ होना अनिवार्य है. इस कारण से दशग्रीव ने उस लड़की को एक सन्दूक में रखकर नदी में बहा दिया. वह सन्दूक किसी ऋषि को मिला. उस ऋषि ने उस लड़की को पाल-पोस कर बड़ा किया. वही सीता थी.

लक्ष्मण तथा राम, सीता से प्रेम करके उससे शादी करने की इच्छा से उसके लिए आवश्यक सुविधाओं का प्रबंध करते थे. एक दिन जब वे दोनों अनुपस्थित थे, तब दशग्रीव ने आकर सीता को देखा. इस बात से अनभिज्ञ कि वह उसी की पुत्री है, दशग्रीव उस लड़की को उठा ले गया.

लक्ष्मण और राम, सीता की खोज करते-करते वानर राज्य में पहुंचे

उन्होंने वहां सुग्रीव का संहार करके नद को राज्याभिषिक्त करके, वानरों की सहायता से दशग्रीव को हराया और उससे लगान वसूल करके सीता को छुड़ा लाये. रैन्मण उत्तर जन्म में बुद्ध के रूप में अवतरित हुआ, तो राम ने मैत्रेय के रूप में जन्म लिया यह एक दूसरे प्रकार की जातक कथा है

लाओस में जो राम जातक कथा है, उसके अनुसार राम तथा रावण चचेरे भाई थे. राम की बहन शातादेवी को रावण भगा ले गया लेकिन राम से डरकर उसने शाता के साथ शादी कर ली

"दशरथ जातक" नाम की एक और कथा है कहा जाता है कि स्वयं बुद्ध ने वह कहानी किसी गृहस्थ को सुनायी वह कहानी इस प्रकार है—

'दशरथ की सोलह हजार पत्नियां थीं उनमें पटरानी के गर्भ से राम पंडित, लक्ष्मण पंडित तथा सीता पैदा हुए कुछ समय बीतने पर पटरानी के मरने पर उनकी दूसरी पत्नी पटरानी बनी उसके गर्भ से भरत का जन्म हुआ इस ख्याल से कि यह दूसरी पटरानी कहीं राम पंडित की कोई हानि करने की कोशिश न करे, दशरथ ने राम पंडित से बारह साल तक कहीं रहकर आने के लिए कहा राम पंडित के साथ लक्ष्मण पंडित और सीता देवी भी हिमालय में चले गये. दशरथ के मरने के बाद वे लौट आये उसके पश्चात सीता देवी रानी के रूप में तथा श्रीराम राजा के रूप में अभिषिक्त हुए यही दशरथ शुद्धोदन हैं, सीता देवी यशोधरा हैं और राम पंडित मैं ही हूं'

फिर एक जैन गाथा में इस प्रकार का विवरण दिया गया कि कुछ समय तक जंगलों में रहकर आने के पश्चात् राम और लक्ष्मण एक कन्या को देखकर आकृष्ट हुए प्रत्येक ने अपने से ही विवाह करने के लिए उससे मांग की अन्त में वे यह जानकर कि वह कन्या उनकी बहन सीता ही है, पश्चाताप करके वे काम-विमुख होकर और सिर मुंडवाकर जैन साधुओं में शामिल हो गये

जैन सन्यासी विमलसूरि के प्राकृत भाषा में लिखे रामचरित को आधार बनाकर और दो-तीन जैन-कथाएं निकलीं उनमें राम एक महान सन्यासी के रूप में दिखाई देता है और सीता रावण की पुत्री के रूप में दिखायी देती है बौद्धों की जातक कथाओं में भी है कि सीता रावण की बेटी थी, और रावण महान ऋषि शाक्तयों के द्वारा लिखित कथा में सीता मंदोदरी की बेटी है

श्रीलंका में प्रचलित रामकथा के अनुसार लंका को जिसने जलाया वह वालि था, न कि हनुमान जब सीता की खोज में वालि ने लंका में प्रवेश किया, तब अशोक वन में सीता के पास रावण बैठा था यह देखकर कि वालि उसके उद्यान को उजाड़ रहा है, रावण आग बबूला हो गया तो भी उसने सोचा कि वानर को मारना धर्मसम्मत नहीं है. उसने सीता की सलाह मांगी कि क्या करना उचित है ? तब सीता ने सलाह दी कि

इस वानर को न मारा जाय अथवा न रस्सियों से बांधा जाय धीरे से उसको पकड़कर और उसकी पूंछ में दो कपड़े लपेटकर आग लगा दी जाय तो वह डरकर भाग जायगा फिर वह यहा फिर कभी नहीं आयेगा

रावण ने सीता की सलाह मान ली उसने बालि को पकड़कर उसकी पूंछ में कपड़े लपेटकर और आग लगाकर उसे छोड़ दिया तुरन्त बालि लका नगर के एक मकान पर से दूसरे मकान पर छलाग मारने लगा, तो लका नगर में कई जगहों पर आग की लपटें फैल गयी जब उन्हें बुझाने के लिए रावण भी अपने सेवकों के साथ घबराहट में इधर-उधर दौड़ने लगा, तब बालि को मौका मिला उसने सीता को अपने कंधों पर उठाया और एक ही उड़ान में राम के पास पहुच गया

एक और रामकथा में है कि बालि के साथ रहते समय जब मदोदरी गर्भवती हो गयी, तो उसने रावण के साथ विवाह कर लेने के बाद एक लड़की को जन्म दिया उस प्रकार पैदा हुई लड़की ही सीता थी दूसरी एक कहानी के अनुसार देखा जाय तो पता लगता है कि दशरथ के द्वारा मदोदरी के गर्भ से ही सीता पैदा हुई

एक अन्य रामकथा के अनुसार हनुमान बहुत बड़ा दुष्ट था एक कहानी के अनुसार हनुमान राम का ही बेटा था और एक कथा के अनुसार हनुमान शकर का बेटा था. एक और कथा में कहा गया है कि शकर के वीर्य के वायुदेव के द्वारा अजनी देवी के गर्भ में जाने से हनुमान का जन्म हुआ फिर किसी रामकथा में कहा गया कि श्रीराम ने सुग्रीव का वध करके बालि को अभिषिक्त किया इस प्रकार हर किसी ने अपने-अपने ढग से रामकथा लिखी

इस प्रकार कहानिया लिखकर प्रचार करने के साथ यदि बौद्धों ने स्तूपों का निर्माण किया तो हिदुओं ने मदिरो का निर्माण किया बोधगया, साची, वैशाली जैसे क्षेत्र बौद्धो के पुण्य क्षेत्र बने तो काशी, रामेश्वर जैसे क्षेत्र हिदुओं के पवित्र क्षेत्र.

जैसे-जैसे पुराण और जातक कथाओं की वृद्धि हुई, वैसे-वैसे अवतार सिद्धात, कर्मसिद्धात तथा पुनर्जन्म सिद्धात प्रबल हुए यह कहने में परस्पर स्पर्धा बढी कि हमारे ही सिद्धात और धार्मिक नियम सबसे प्राचीन हैं

वैदिक धर्मानुयायियों ने दावे के साथ कहा कि स्वय ब्रह्मा ने ही वेद को प्रकट किया तो बौद्धों ने जोर देकर घोषित किया कि अनेक जन्म लेने के पश्चात् ही तथागत सिद्धार्थ के रूप में पैदा होकर बुद्ध भगवान बने, फिर जैनों ने छाती पीटकर कहा कि तेईस तीर्थंकरों के अवतरित होकर जैन धर्म की शिक्षा देने के उपरात महावीर पैदा हुए तो वैष्णवों ने जोरदार घोषणा की कि वैष्णव धर्म का स्वय नारायण ने प्रजापति को उपदेश दिया और वह बृहस्पति के द्वारा उपरिचर वसु को प्राप्त हुआ.

इसी तरह शैव तथा शाक्तेय पंथियों ने भी अपनी प्राचीनता को सिद्ध करने वाली बातें कहीं.

यद्यपि इस प्रकार प्रत्येक धर्म के अनुयायी अपने धर्म की पुरातनता की स्पर्धा करते रहे तथापि जैन, बौद्ध धर्मों के विरुद्ध शैव, वैष्णव, वैदिक, शाक्तेय तथा गाणापत्य धर्मवालों ने आपस में हाथ मिलाये. सांख्य, योग, वैशेषिक तथा न्याय दर्शनों में कुछ संशोधन तथा प्रक्षेपण करके उनको आध्यात्मिकवाद के अनुकूल उन्होंने बना लिया. चार्वाक सिद्धांतों से संबंधित रचनाओं को उन्होंने जला दिया और विविध नक्षत्र तथा ग्रहमंडलों को खगोल शास्त्रज्ञों ने जो नाम दिये, उन नामों एवं स्थानों का उपयोग करके "गंगावतरण" जैसी पुराण कथाओं की रचना की.

सांख्य, योग तथा ब्रह्मसूत्रों को जोड़कर बनायी गयी भगवद्गीता, और विकासवादियों के द्वारा कही गयी दशाओं को जोड़कर लिखे गये पुराण हिंदुओं के तेज हथियार सिद्ध हुए. बौद्ध धर्म ने अपना कदम पीछे हटाया. हिन्दू धर्म की प्रबलता बढ़ी.

पुराणों का युग

जैसे ही भारत उपमहाद्वीप में बौद्ध-जैन धर्मों की प्रबलता कम हुई, वैसे ही शैव-वैष्णव धर्मों के बीच में स्पर्धा बढ़ी. पुराणों की संख्या में वृद्धि हुई. शैव, लैंग, तथा स्कन्द पुराणों ने शिव की स्तुति की तो वैष्णव, भागवत, तथा नारदीय पुराणों ने विष्णु देव की.

एक पुराण की स्पर्धा में दूसरे पुराण की रचना की गयी, एक के विस्तार को देखकर दूसरे का विस्तार किया गया. नारदीय, बृहन्नारदीय, नंदीश्वर, बृहन्नंदीश्वर, धर्म, शिवधर्म, विष्णुधर्म, विष्णु धर्मोत्तर, भविष्य, भविष्योत्तर जैसे अनगिनत पुराण पैदा हुए.

यदि वैष्णवों ने हनुमान की प्रशंसा में कहा कि वह अनन्य रामभक्त है, तो शैवों ने शिव का पुत्र कहकर उसकी स्तुति की. फिर किसी ने यहां तक कहा कि वह राम का ही पुत्र है. रामभक्तों ने प्रचार किया कि शिव धनुष को श्री राम ने बड़ी आसानी से तोड़ दिया, तो शिव भक्तों ने प्रचार किया कि शिव की पूजा करने से ही श्री राम के लिए समुद्र-तरण एवं रावण-संहार संभव हो सके.

शैवों ने प्रचार किया कि नर-नारायण के अवतार अर्जुन तथा श्री कृष्ण शिव की पूजा करके और पाशुपतास्त्र पाकर उसकी मदद से युद्ध में विजयी बन सके तो भागवत धर्म के लोगों ने बताया कि बाणासुर की रक्षा में तत्पर शिव को कृष्ण के हाथ में बुरी तरह से हार खानी पड़ी. शैवों ने शिव के बड़प्पन के बारे में तथा भागवत धर्मियों ने कृष्ण की विशिष्टता के बारे में कहानियां लिखीं. इस प्रकार अगणित शिव-लीलाएं, विष्णु-लीलाएं एवं कृष्ण-लीलाएं प्रचलित हुईं.

गोपाल कृष्ण

गोपाल कृष्ण की लीलाएं अथवा वे घटनाएं जिनमें उनके गोकुल में होने की बात कही जाती है, महाभारत में नहीं है. नारायणीय ग्रन्थ में भी नहीं है. पतंजलि ने भी इनका उल्लेख नहीं किया किन्तु बाद में निकले हुए हरिवंश, भागवत, आदि ग्रन्थ कृष्ण की लीलाओं से भरे पड़े हैं इतना तो महाभारत में मिलता है कि शिशुपाल ने पूतना आदि राक्षसों को मारने के कारण कृष्ण की निन्दा की किन्तु प्रोफेसर भण्डारकर ने साबित किया कि वह प्रक्षिप्त अंश है. संस्कृत महाभारत में गोपाल कृष्ण हैं ही नहीं, वासुदेव ही उसमें दृष्टिगत होते हैं तो फिर यह गोपाल कृष्ण कौन थे ? इसकी पूजा किसने की ?

ई. सन के आरम्भ के पहले से लेकर ई. सन की दूसरी सदी तक भूमध्य सागर के तटीय प्रान्त से झुंड के झुंड भारत में आये हुए आभीर (आजकल ये लोग अहीर कहलाते हैं) लोगों के आराध्य थे गोपाल कृष्ण

ये आभीर खानाबदोश जाति के थे पहले ये मथुरा के आसपास, फिर गोकुल, वृन्दावन के आसपास के प्रदेशों में पशुगण चराते हुए निवास करते थे उस दशा में ये यादवों को लगान चुकाते थे, कर देते थे कुछ समय इस स्थिति में रहते हुए इन आभीरों ने बाद में द्वारका पर कब्जा कर लिया महाराष्ट्र तथा कोंकण प्रान्तों में भी इन्होंने राज्यों की स्थापना भी की इसलिए आभीरों के आराध्य गोपाल कृष्ण और यादवों के वासुदेव को एक ही कहा जाने लगा इस प्रकार की कहानियां कल्पित हुईं कि देवकी-वासुदेव का पुत्र कृष्ण गोकुल के नंद यशोदा के घर पला, और वहां उसने अनेक लीलाओं का प्रदर्शन किया इन कहानियों के कारण वासुदेव कृष्ण तथा ईसा मसीह में कुछ समानताएं दृष्टिगत हुईं.

आकाशवाणी ने कहा कि कृष्ण पैदा होंगे देवदूतों ने कहा कि ईसा पैदा होगा कृष्ण जेल में पैदा हुए. ईसा सराय में पैदा हुए कृष्ण को गोकुल में ले जाते समय यमुना नदी ने रास्ता दिया ईसा समुद्र पर चलकर अपने शिष्यों के पास पहुंचे

कृष्ण को खोजने के क्रम में कंस ने अनेक बालकों को मरवा डाला ईसा का सही स्थान मालूम न होने से, हेरोद ने कई बच्चों का वध करवाया कृष्ण यादव था, ईसा यहूदी था इनके पिता का नाम वासुदेव था, उनके पिता का नाम योसेफ था इसका नाम वासु था, तो उसका नाम ईसा (एसु) था इस प्रकार इधर कृष्ण के संबंध में भागवत में वर्णन मिलता है, तो उधर क्राइस्ट के विषय में बाइबिल बताता है

कृष्ण लीला मानुष-विग्रह है. इसलिए उसने गायों को चराया, मक्खन की चोरी की, राक्षसों का वध किया, पांडवों को विजयी बनाया, विश्व रूप का प्रदर्शन किया और कर्म-ज्ञान-भक्ति योगों का उपदेश दिया इनके अलावा, गोप बालकों के साथ आंख-मिचौनी के खेल, सोलह हजार गोपियों के साथ रास-क्रीडाएं—इनके बारे में क्या कहना ! अद्भुत ! परम अद्भुत !

फिर धीरे-धीरे कृष्ण के बगल में राधा को खड़ा कर दिया गया. राधा का प्रकृति तथा कृष्ण का परमात्मा कहकर वर्णन किया गया. जिन सोलह हजार गोपियों ने कृष्ण से प्रेम किया, उन सब को कृष्ण ने दर्शन दिये. पुरुषों ने स्त्रियों से इस कृष्ण प्रेम में होड लगायी. मामला यहां तक बढ़ा कि पुरुष स्त्रियों के वेष धारण भी करके प्रेम का स्वांग करने लगे.

पहले पुरुष परमात्मा की हैसियत से कृष्ण का ही स्थान ऊंचा था परन्तु कुछ समय के बाद प्रकृति माता के रूप में राधा का ही स्थान ऊंचा हो गया. देश में शक्ति-पूजाओं तथा तान्त्रिक विद्याओं का बढ़ना ही इसका कारण था. इन शक्ति पूजाओं से वामाचार प्रबल हुआ. यह धारणा बन गयी कि "म" कार पन्चक (मद्य, मत्स्य, मांस, मिष्ठान्न, मैथुन) मोक्ष साधन हैं. शैव, शाक्तेय, वैष्णव तथा बौद्धों ने होड़ लगाकर तान्त्रिक विद्याओं की वृद्धि की.

विलासी राजा तथा जमींदारों ने तान्त्रिक-मान्त्रिक पद्धतियों को प्रोत्साहित किया. राजाओं की मनोकामनाओं के अनुकूल जिन धार्मिक प्रमुखों ने व्यवहार किया तथा जिन पंडितों ने ग्रन्थ लिखे, वे सुख-सुविधा से जीते रहे. फलतः भ्रष्टाचार बढ़ा. शोषण अधिक हुआ.

अकाल और दुर्भिक्ष के शिकार बनकर साधारण प्रजा के दाने-दाने के लिए तरसते रहने पर भी शासकों या धार्मिक प्रमुखों के कानों पर जूं तक न रेंगी. बौद्ध पंडितों ने "सर्व मिथ्या" कहा तो ब्राह्मण पंडितों ने "जगन्मिथ्या" कहा. कहा गया कि ये सारे कष्ट पूर्व जन्मों में किये गये पापों के परिणाम हैं, यह कहकर भोली जनता को तथाकथित धार्मिक उपदेश दिया गया कि चूं किये बिना सभी कष्टों को सहन करो.

इसके फलस्वरूप जनता की सहन-शक्ति की हद हो गयी. जाति भेदों, तान्त्रिक-मान्त्रिक पद्धतियों तथा शोषण के विरुद्ध आन्दोलन शुरू हो गये. जाति या कुल भेद की परवाह किये बिना वेद की शिक्षा देने के लिए रामानुजाचार्य ने कमर कसी. उनका शिष्य तिरुप्पन्नाल्वार हरिजन था. उसने वैष्णवों का पंचम कहलाने योग्य "तिरुवैमोलि" ग्रंथ की रचना की. तेलघानी पेरते हुए अपनी गुजर-बसर करने वाले एजुदाचन ने मलयालम भाषा में महाभारत और रामायण की रचना करके नवीन धार्मिक सिद्धांत प्रस्तुत किये. कपड़े सीते हुए आजीविका चलाने वाले नामदेव ने महाराष्ट्र में कुल भेद (जाति भेद) तथा मूर्तिपूजा का विरोध किया. रामानंद ने भी जाति भेद का विरोध करते हुए सारे देश में भ्रमण किया. रामानंद के शिष्यों में रैदास (चमार), कबीर (जुलाहा), दादू (कसिन), सेना (नाई) जैसे लोग प्रमुख थे.

इस प्रकार के सब सन्तों ने जाति भेद का विरोध करते हुए समाज सुधार का आन्दोलन चलाया तथा आम जनता की समझ में आने वाली लोक भाषा में पदों की रचना की. उन दिनों में धार्मिक सिद्धान्तों के नाम पर, रीति-रिवाजों की आड में सामंतवादी वर्गों की ओर से जो शोषण चल पड़ा और जो अत्याचार हुए उनका मुकाबला करने के लिए आम जनता को

अपने हथियार के रूप में भक्ति मार्ग को अपनाना पड़ा अतएव "शिव शंकर-शिव शंकर" कहते हुए रामानन्द, रामदास आदि ने प्रचार किया. "शरम-शरम" कहते हुए वीर शैवों ने धूम मचायी.

हिन्दुओं के भक्ति मार्ग के लिए मुसलमानों का सूफी मार्ग सहायक बन गया ख्वाजा मोहिउद्दीन चिस्ती, शेख निजामुद्दीन औलिया जैसे सूफी-सन्तों ने इस्लाम धर्म के मौलवी-मुल्लाओं तथा सुल्तानों के ऐशो-आराम व लूट-मार के खिलाफ आवाज बुलंद की. उन्होंने कहा कि राम-रहीम एक ही हैं. उन्होंने ऐलान किया कि हिन्दू-मुसलमान सब एक ही खुदा के औलाद हैं. इंग्लैंड, फ्रांस तथा जर्मनी देशों में प्रोटेस्टेण्टों ने जनता को संगठित करके शासक वर्ग तथा धार्मिक नेताओं द्वारा होने वाले शोषण का जिस प्रकार विरोध किया, उसी प्रकार भारत में भक्तिमार्गियों और सूफी पंथियों ने किया अत भक्ति मार्ग क्रमश प्रबल बना और जमींदार वर्गों द्वारा होने वाले शोषण का सामना करने की शक्ति से सपन्न जन आन्दोलन के रूप में परिणत हुआ

जनता के लिए राम नाम तारक मंत्र बन गया आंध्र प्रांत के गांव-गांव में राम-नाम भजन का बोलबाला शुरू हुआ. राम सेना के दल के दल बनकर गांवों में प्रचार करने लगे. सांड खेलाने वाले तथा जंगली कोय जाति के लोग भी राम-भक्त बने गोस्वामी तुलसीदास के लिखे रामचरित-मानस ने "रामराज्य" का नारा गुंजा दिया

तब तक जनता में यह धारणा नहीं बनी कि श्रीराम भगवान का अवतार हैं यद्यपि दशावतारों में राम अवतार की गणना की जाती थी तथापि पाणिनीय ग्रन्थ में रामावतार का उल्लेख नहीं मिलता, अमर कोश में भी उसका पता नहीं लगता आज तक भी सभी शुभाशुभ कर्मकांड में "माधवाय नम., गोविंदाय नम., हरे श्री कृष्णाय नम" कहकर विष्णु की ही पूजा करते हैं, न कि "रामाय नम." कहकर पूजा करते हैं इसलिए यह कह सकते हैं कि राम के भगवान होने का विश्वास सामंती वर्गों को शोषण तथा भ्रष्टाचार के विरुद्ध चले हुए आन्दोलन के समय में ही पैदा हुआ होगा इसी दशा में उत्तर भारत में राम लीला की तथा दक्षिण भारत में राम मंदिर निर्माण का प्रारम्भ हुआ. महाराष्ट्र में कृष्ण की बगल में से राधा को हटाकर रुक्मिणी को जोड़ने का काम भी उसी दशा में हुआ. इसी अवस्था में श्रृंगार रस को हटाकर, भक्तिरस को प्रमुख स्थान देते हुए त्यागरूया ने श्रृंगार रस को हटाकर, भक्तिरस को प्रमुख स्थान दिया गया चैतन्य महाप्रभु, वेमना, तुकाराम, रामदास, गुरुनानक जैसे महापुरुषों ने जन चेतना को जागृत करने तथा बढ़ाने के द्वारा सामंतवादी व्यवस्था के प्रति विद्रोह को प्रबल बनाया

पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य भारत, दक्षिण भारत, महाराष्ट्र और बंगाल के किसानों ने संघर्ष शुरू किये. दस्तगीर तथा व्यापारियों ने भी इन संघर्षों का समर्थन किया. तो भी जैसे पश्चिम यूरोप में जमींदार वर्गों के आधिपत्य को वहां की जनता ने पदच्युत किया, वैसे ये कर नहीं पाये.

इसका कारण भारत देश में ईस्ट इंडिया कम्पनी का अड्डा जमा लेना ही था. फिर भी जनता का श्रीराम को अवतार मानकर उसका कीर्तन, भजन तथा पूजन करना कम नहीं हुआ. इसके अतिरिक्त, कृष्ण से बढ़कर राम को ही महान कहकर साबित करने के कुछ प्रयत्न हुए

महाभारत तथा रामायण के बीच स्पर्धा

महाभारत की भगवद्गीता के मुकाबले राम गीता लिखी गयी किसी ने लिखा कि राम गीता को श्रीराम ने लक्ष्मण को सुनाया तो किसी दूसरे ने लिखा कि श्रीराम ने हनुमान को. कहा जाता है कि सीता ने हनुमान से इस तरह कहा—"मैं ही प्रकृति हूं रामायण की सारी घटनाएं मेरी इच्छा के अनुसार ही हुई राम का क्या है ? वे तो केवल निमित्त ही हैं" इस प्रकार सीता से कहलाकर राधा के मुकाबले में सीता को खडा किया गया

महाभारत में लिखा गया कि धर्मराज ने चार्वाक का वध किया. इसलिए रामायण में लिखा गया कि श्रीराम ने बुद्ध की भर्त्सना की तथा शम्बूक का वध किया. जिन पौराणिक विद्वानों ने कहा कि धर्मराज द्वापर-युगांत के थे, और श्रीराम त्रेतायुग के थे, उन्होंने ही कहा कि कलियुग में उत्पन्न चार्वाक को धर्मराज ने मारा और राम ने बुद्ध की निंदा की महाभारत में स्पष्ट की गयी राजनीति का रामायण में अभाव होने से इसे एक कमी समझकर रामायण में लिखा गया कि राम ने भरत को राजधर्म की शिक्षा दी

चूंकि रामायण में लिखा गया कि राम ने शिव धनुष तोडकर सीता से परिणय कर लिया, इसलिए महाभारत में लिखा गया कि मत्स्य को बेधकर अर्जुन ने द्रौपदी से पाणिग्रहण किया यदि रामायण में सीता को रावण के उठा ले जाने की बात थी, तो महाभारत में द्रौपदी को सैन्धव के उठा ले जाने की बात कही गयी

वैदिक वाङमय में कल्पित एक कथा मिलती है कि ब्राह्मण वृत्रासुर को मारने से इन्द्र को ब्रह्महत्या का पाप लग गया, जिसके फलस्वरूप इन्द्र को राज्यच्युत होकर अनेक विपत्तियों का शिकार बनना पडा. इसलिए रामायण में लिखा गया कि रावण ब्राह्मण का वध करने से श्रीराम को भी ब्रह्म-हत्या के पाप ने घेर लिया, जिससे छुटकारा पाने के लिए श्रीराम ने अश्व-मेध यज्ञ करके भूसुरों को गोदान, भूदान तथा हिरण्य दान दिये

महाभारत में लिखा गया कि कुरुक्षेत्र युद्ध में ब्राह्मण द्रोण का ही नहीं, प्रत्युत समस्त बन्धु मित्र परिवार का भी संहार करने से धर्मराज को जो पाप लग गया, उससे मुक्त होने के लिए उन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया और भूदेवों को अन्यदानों के साथ अपना राज्य तक दान में दे दिया.

रामायण का नायक श्रीराम है, अत. श्रीकृष्ण को महाभारत कथा के सचालक के रूप में चित्रित किया गया यदि रावण एव कुम्भकर्ण का संहार श्रीराम ने किया तो कहा गया कि श्रीकृष्ण ने शिशुपाल का वध किया. अगर राम ने त्रेतायुग में पैदा होकर दुष्टों का अन्त करके शिष्टों की रक्षा की तो

श्रीकृष्ण के द्वापर युग में जन्म लेकर दुष्टों को दण्ड देने तथा शिष्यों को सहारा देने की बात कही गयी. ऋष्य श्रृंग, वशिष्ट, विश्वामित्र, परशुराम जैसे ऋषियों की कहानिया तो दोनों में भी जोड़ी गयीं.

इतना ही नहीं, शाखोपशाखाओं के विस्तार के बिना राम-उपाख्यान महाभारत में जोड़ा गया, इतना ही पुराणों में भी जोडा गया कुछ दूसरे कवियों ने उर्मिला देवी की, कुशलवों की, वाल्मीकि-चरित्र, जैसी कथाएं लिखीं.

पूर्व राम तपोवनानुगमन, हत्वामृग काचनं
वैदेही हरण, जटायु मरण, सुग्रीव संभाषणं
वाली निग्रहण, समुद्रतरणं, लंकापुरी दाहनं
पश्चाद्रवण कुम्भकर्ण मरणं, चेदद्रि रामायण ॥

इस प्रकार पंडितों ने एक ही श्लोक में पूरी रामायण कथा को निबद्ध कर दिया तो गवारों ने इसे सिर्फ तीन ही शब्दों में समाकर कह दिया—"बाधा, मारा और लाया।" और इसका विवरण यों दिया कि बाधा समुद्र को, मारा रावण को और लाया सीता को

इस तरह छोटी-बडी कितनी ही राम कथाएं निकलीं जिनमें कुछ तो मूलकथा से मिलती हैं और कुछ भिन्न हैं फिर भी यह बेशक कह सकते हैं कि जनता के दिलों पर जिसने अमिट छाप लगा दी वह वाल्मीकि द्वारा रची गयी रामायण ही है.

वाल्मीकि रामायण ने रक्त-सम्बन्ध को महत्व प्रदान किया उन्होंने इस बात की घोषणा की कि अगर कोई राज्य के लिए या संपत्ति के लिए षड्यंत्र रचें और उसके फलस्वरूप पारिवारिक झगड़े बढ़ें तो उनके कारण परायों की गुलामी में हमें फंसना पड़ता है. इसके उदाहरण के रूप में सुग्रीव और विभीषण को उन्होंने दिखाया. पितृवाक्य-पालन, भ्रातृवात्सल्य, राज्य परित्याग इत्यादि को सबसे उत्तम आदर्श गुणों के रूप में उसने चित्रित किया. उसने यह सन्देश दिया कि पातिव्रत्य के साथ एकपत्नीव्रत भी न हो तो कोई लाभ नहीं होगा. दशरथ के पत्नी-भक्त होने के कारण ही उनके परिवार के सभी सदस्यों को कष्ट उठाना पड़ा अन्य की पत्नियों का अपहरण करने से ही बाली तथा रावण का सर्वनाश अनिवार्य हो गया.

इसके अतिरिक्त वह महाकाव्य था—आदिकाव्य था उसने नवीन छन्द को पुष्टि प्रदान की इतना ही नहीं, उसने लौकिक वाङ्मय का श्रीगणेश किया इसलिए सहृदय विद्वानों ने उनकी प्रशंसा की. इसी कारण कुछ स्वार्थ धनिक प्रमुखों तथा पंडितों ने अपने अनुकूल रामायण को मोड़ने के लिए उपयुक्त कथाओं को रचकर उसमें घुसा दिया बालकांड का विस्तार किया गया उत्तरकांड की सृष्टि की गयी. कुल मिलाकर वाल्मीकि के लिखे छः हजार श्लोकों में अठारह हजार श्लोक मिलाये गये विष्णु के अवतार के रूप में राम का वर्णन किया गया. अन्यों के लिखे श्लोकों को वाल्मीकि के सिर मढ दिया गया प्रोफेसर भण्डारकर, जैकोबी जैसे विद्वानों ने भी ये बातें कही हैं

कुछ दूसरे विद्वानों ने दूसरे प्रकार से लिखा. अगस्त्य रामायण, दौर्बास रामायण, वशिष्ठ रामायण आदि में दिखायी देने वाले राम बहुपत्नीक थे, सीता को मिलाकर उनकी कुल एक सौ उनतीस पत्नियाँ थीं. अथवा कम से कम तीन पत्नियाँ और अनेक दासियाँ थीं. इसलिए राम भी साधारण क्षत्रियों की तरह थे. ऐसा ही विश्वास दिलाने के लिए कुछ लोगों ने प्रयत्न किया. जैन, बौद्ध पंडितों ने यह धारणा फैलाने की कोशिश की कि राम की अपेक्षा रावण ही महान था

इस प्रकार की रचनाओं से वाल्मीकि का कोई सरोकार नहीं है. उन्होंने यह नहीं कहा कि श्रीराम, लक्ष्मण, भरत तथा शत्रुघ्न यज्ञफल के रूप में पैदा हुए, अथवा श्रीराम विष्णु के अवतार थे उन्होंने इस जमाने के रीति-रिवाजों पर पर्दा डालने की चेष्टा भी नहीं की सुरापान से लेकर गोमांस-भक्षण तक वाल्मीकि रामायण में दृष्टिगत होते ही हैं

आलोचकों की बात चाहे कैसी भी हो, किन्तु साधारण जनता ने वाल्मीकि रामायण तथा उसके पात्रों को कैसे समझा ? इसका पता हमें निम्नलिखित गीत पढ़ने से लगता है

श्रीराम हैं एक त्यागी, रावण है एक भोगी ।
लक्ष्मण हैं एक योगी, भरत है एक विरागी ।
कैकेई के वरदान शूर्पणखा के प्रणय जाल ।
सीता माई का अशोकवास, लंका राज्य का सर्वविनाश ।

अगर इस प्रकार सामान्य जनता गाया करती है तो इससे हमें स्पष्ट विदित होता है कि वाल्मीकि-रामायण का किस प्रकार स्थायी प्रभाव देश में फैला

रामायण से महाभारत सहमत नहीं दीखता. महाभारत ने घोषित किया कि हमको चाहिए राज्य-सत्ता न कि राज्य परित्याग राज्य वीर-भोज्य है, अतः किसी न किसी प्रकार से उसे प्राप्त करना ही राजनीति है. इस नीति का अनुसरण करके तुम राज्य का पालन करो सुख-चैन से जीवन व्यतीत करो इसके लिए रुकावट बनने वाले गणधर्म का परित्याग करो वर्णाश्रम व्यवस्था का अनुसरण करो क्षत्रिय के लिए वांछनीय है विजय अथवा वीर-स्वर्ग. इसके सिवा और कुछ नहीं

रामायण तथा महाभारत का यह मौलिक अंतर जनता जानती है. इसीलिए उनके द्वारा प्राप्त होने वाले संदेशों का तथा नीति का स्पष्टीकरण करते हुए वे लोग गीत गाते रहते हैं—

पिताश्री की बात मानी है श्रीराम ने
अग्रज की बात मानी है लक्ष्मण ने
अनुज भरत को दिया राज्य श्रीराम ने

"नहीं चाहता मैं राज्य", कहा भरत ने
राज्य के लिए बिना झगड़े भाई-भाई मिले रहे.
सुख-चैन से जीते रहे.
मांगा अपना आधा राज्य पांडवों ने
इनकार किया देने से राज्य कौरवों ने
भाई-भाई लड़े होकर निर्मम राज्य के लिए आपस में
बचा नहीं एक भी पुरुष कुरुक्षेत्र के संग्राम में

सारांश के रूप में लोग कहते हैं कि यदि भाई-भाई मिलकर रहें तो वह रामायण है, अगर वे अलग-अलग होकर आपस में लड़ते हैं तो वह महाभारत है. अतः हम कह सकते हैं कि जनता ने रामायण और महाभारत की कथाओं को ठीक ही समझा है.

यद्यपि महाभारत ने भाई-भाई के बीच युद्ध का समर्थन किया, तथापि पुराण कथाओं में उसका एक विशिष्ट स्थान है. उस जमाने में भारत उप-महाद्वीप में निवास किये हुए कई कबीलों और जातियों के रीति-रिवाज, सभ्यता-संस्कृति, नीति एवं धार्मिक सिद्धान्तों के साथ भौतिक-आध्यात्मिक-वाद, तर्क-मीमांसा शास्त्र, सांख्य, योग, वैशेषिक, न्याय दर्शनों के सूत्र आदि अनगिनत विषय उसमें उपलब्ध हैं. नियति, स्वभाव, यादृच्छ एवं परिणाम वादों के सिद्धान्त उसमें मिलते हैं. तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्थाओं का विस्तृत परिचय उसमें मिलता है. आज भी अमल करने योग्य विदुर-नीतियां उसमें हैं भीष्म के द्वारा बताये गये धर्म-सूत्र उसमें हैं फिर भी यह कहकर उनसे घृणा करने वाले हमें दृष्टिगत होते हैं कि महाभारत झूठ है, रामायण रांड है. वैसे लोगों को पहले हमारे समाज के गुण-दोषों का अनुशीलन करना जरूरी है

आज भी हमारे देश में जहां-तहां देवर-न्याय, बहुपतित्व के रिवाज मौजूद हैं जंगली कबीले तथा असभ्य जातियां हैं. स्वच्छंद संभोग है. गुप्त काम-लीलाएं तो हमारे देश में ही नहीं, बल्कि संसार के अनेक देशों में दिन-प्रतिदिन बढ़ रही हैं हमारे देश में भ्रष्टाचार, अधर्म, तांत्रिक-मांत्रिक क्रियाएं, कुटिल राजनीति, कुटिल बुद्धियां, धोखाधड़ी, एक के परिश्रम का फल दूसरे का भोगना, कुल-भेद, जाति-भेद, धर्म-भेद आदि अत्यधिक मात्रा में दृष्टिगत हो रहे हैं अत्यधिक उच्च शिक्षित लोग ही नहीं, बल्कि विज्ञान-शास्त्र के विशेषज्ञ भी अपनी भांजियों से विवाह कर ले रहे हैं भाई-भाई अथवा भाई-बहन की संतानों के बीच में भी शादियां हो रही हैं. यद्यपि तीन हजार वर्ष पूर्व ही हमारे पूर्वजों ने मना किया कि सगोत्र तथा सपिंड विवाह अच्छे नहीं हैं तथापि हमने उन्हें नहीं छोड़ा फिर भी हम यदि कहें कि रामायण और महाभारत की कथाओं के पात्र अश्लील और असभ्य हैं, वे दोनों ग्रन्थ अभूत कल्पनाओं से भरे हैं, इसलिए उन्हें जमीन में गाड़ देना है तो कितना शोचनीय होगा

रामायण तथा महाभारत के शत अवतार ग्रहण करने पर भी ऐतिहासिक सूक्ष्म दृष्टि से उसका अनुशीलन करना आवश्यक हैं. ऐसा न करके यह समझना कि भगवान ने ही स्वयं वाल्मीकि महर्षि तथा वेदव्यास को उनकी कथाएं सुनायीं, अथवा उन दोनों ने दिव्य दृष्टि से सारी बातों को समझकर उन्हें लिखा है बिल्कुल गलत हैं. फिर भी यह सोचकर कि वे दोनों ग्रन्थ किसी काम के नहीं हैं अथवा लोगों के दिलों पर नशीली दवा छिड़क कर मूढ़ विश्वासों को बढ़ाने वाले हैं, उनको फेंक देना भी उचित नहीं हैं.

परिशिष्ट

हमारे पूर्वजों द्वारा कहे गये युगों, दिव्य युगों तथा मन्वंतरों का विवरण

१.	कृतयुग की काल अवधि	१७,२८,००० वर्ष
२	त्रेतायुग की काल अवधि	१२,९६,००० वर्ष
३	द्वापर युग की काल अवधि	८,६४,००० वर्ष
४	कलियुग की काल अवधि	४,३२,००० वर्ष
	इन चारों युगों का कुल समय मिलाने से एक दिव्य युग होता है अत एक दिव्य युग की काल अवधि	४३,२०,००० वर्ष

ऐसे ७१ दिव्य युग मिलकर एक मन्वंतर बनते हैं सृष्टि की आदि से लेकर स्वायमुव, स्वारोचिष आदि छ मन्वतर अब तक बीत गये. सातवें मन्वतर वैवस्वत मन्वतर में अब तक २७ दिव्य युग समाप्त हो गये. २८वें दिव्य युग में कृत, त्रेता, द्वापर युगों के बीतने पर कलियुग में आज तक सिर्फ ५०८२ साल गुजरे हैं.

अत इससे स्पष्ट है कि वैवस्वत मन्वतर मे २८ द्वापर युग व्यतीत हुए कहा गया कि २४वे द्वापर युग में वाल्मीकि ने जन्म लेकर वेदविभाजन करके वेदव्यास के नाम से विख्यात होकर रामायण महाकाव्य भी लिखा था फिर यह भी कहा गया कि २६वें द्वापर युग में पराशर पैदा हुआ और २८वें द्वापर युग मे उस पाराशर मे कृष्ण द्वैपायन का जन्म हुआ उसने वेदविभाजन करके वेदव्यास नाम से प्रसिद्ध होने के अलावा महाभारत की रचना भी की थी.

